CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, V... Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE
u Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, J

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

स्वामी अखण्डानन्द सरस्वती

गीता-दर्शन

[८]

संकलनकर्त्री
श्रीमती सरला बसन्तकुमार बिरला

सत्साहित्य प्रकाशन ट्रस्ट

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain: Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

गीता-दर्शन

[८]

प्रवचन :

अनन्तश्री स्वामी

अखण्डानन्द सरस्वतीजी महाराज

संकलनकर्त्री

श्रीमती सरला बसन्तकुमार बिरला

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गीता-दर्शन : ८

●

प्रकाशक
सत्साहित्य प्रकाशन ट्रस्ट
'विपुल' २८/१६, बी० जी० खेरमार्ग
मालवार हिल
बम्बई ४००००६

●

मूल्य : ६·०० छः रुपये मात्र

●

प्रथम संस्करण : ५०००
दीपावली, सं २०३९ वि०
१५ नवम्बर, १९८२

●

मुद्रक
विश्वम्भरनाथ द्विवेदी
आनन्दकानन प्रेस
डी० १४/६५ टेढ़ीनीम
वाराणसी–१
फोन : ६२६८३

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

शुभाशंसा

भगवद्गीतामें जिस सिद्धान्त और कर्त्तव्य-पालनका उपदेश है, वह किसी आचार्यमूलक या सङ्घमूलक नहीं है, वह सर्वकारण-कारण परमेश्वरका हृदय है। सर्वजन-हितकारी है। मानवमात्र ही नहीं, पशु-पक्षी एवं सर्पादिमें भी भगवान्का दर्शन करनेवाला है। कर्मयोगी उद्योग-पति श्रीघनश्यामदास बिरलाकी प्रेरणासे श्रीमती सरला एवं श्री बसन्तकुमार बिरला जो गीताका वार्षिक आयोजन करते हैं उसका यह अष्टम पुष्प जनता-जनार्दनकी सेवामें समर्पित है।

यह परिवार अधिकाधिक मानव जातिकी सेवामें तत्पर रहे, यही शुभ कामना है।

—अखण्डानन्द सरस्वती

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

चि० कुमारमगलम्‌का

स्वागत-भाषण

पू० श्रीस्वामीजी महाराज तथा श्रद्धेय सज्जनवृन्द !

एक वर्षकी प्रतीक्षाके बाद भगवान् श्रीकृष्णकी असीम अनुकम्पासे, पू० श्रीस्वामीजीकी अमृत वाणीसे, गीताका अमर सन्देश सुननेका सुअवसर, हमलोगोंको पुनः प्राप्त हुआ है। आप सबकी ओरसे तथा मेरी ओरसे पू० स्वामीजीका हार्दिक स्वागत तथा आभार प्रदर्शन करते हुए मुझे बड़ी प्रसन्नता है। ईश्वरसे प्रार्थना है कि स्वामीजीको दीर्घायु तथा अच्छा स्वास्थ्य प्रदान करें जिससे पू० स्वामीजी जनताको मार्ग प्रदर्शित करते रहें।

अब मैं पू० श्रीस्वामीजीसे प्रार्थना करूँगा कि वे गीता-प्रवचन—दसवें अध्यायका निरूपण आरम्भ करें। पू० श्री स्वामीजी महाराज, स्वामी प्रबुद्धानन्दजी तथा आप सबको अनेक-अनेक हार्दिक धन्यवाद !

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

पूज्य स्वामीजी महाराज,

लम्बी एवं तीव्र प्रतीक्षाके बाद पूज्य स्वामीजीको हमारे बीचमें देखकर हम सब हर्षित हैं। मैं आप सबकी तरफसे उन्हें प्रणाम करती हूँ। पूज्य महाराजजी प्रति-वर्ष यहाँ पधारकर हमें आशीर्वाद देते रहें, यही उनसे विनम्र प्रार्थना है।

स्वामी प्रबुद्धानन्दजी तथा स्वामी विमलानन्दजीका मैं सत्कार करती हूँ। पूज्य स्वामीजीके स्वास्थ्यके लिए हम सब प्रार्थना करते रहें। सब सत्सङ्ग-प्रेमियोंको अनेक धन्यवाद

—श्रीमती सरला बसन्तकुमार बिरला

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

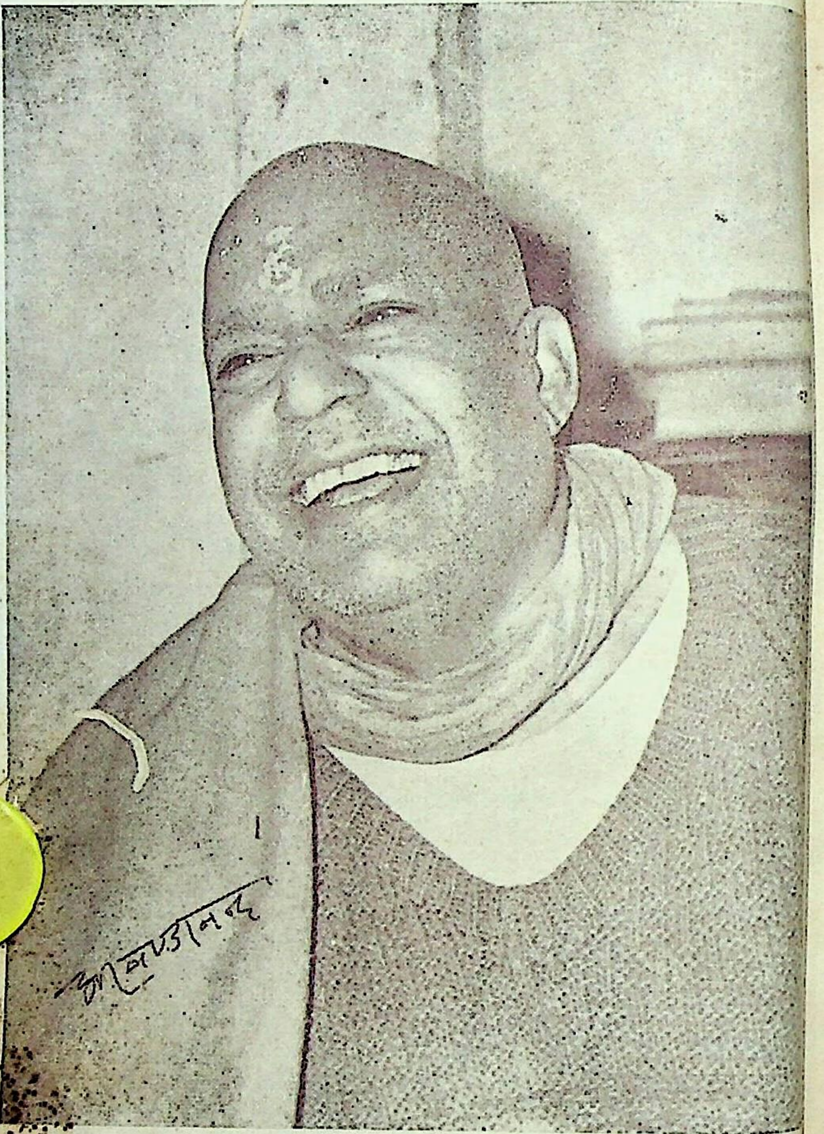

अनन्तश्री स्वामी अखण्डानन्द सरस्वतीजी महाराज

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

गीता-दर्शन

[८]

प्रवचन : १

३१–१०–८१

गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यैः शास्त्रविस्तरैः।
या स्वयं पद्मनाभस्य मुखपद्माद्विनिःसृता ॥
भीष्मपर्व ४३.१

गीतामें चार मुख्य व्यक्ति सामने आते हैं—उभरते हैं। उनमें सबसे पहले धृतराष्ट्र हैं। धृतराष्ट्र अन्धे हैं, ममतासे ग्रस्त हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

अज्ञान, अविवेक फिर ममता। दस दिनका युद्ध हो जानेपर और भीष्मपितामहका पतन हो जानेपर, शरशय्यापर गिरनेके बाद धृतराष्ट्रने सञ्जयसे यह प्रश्न किया कि, धर्मक्षेत्र, कुरुक्षेत्रमें, युद्धकी इच्छासे एकत्र मेरे और पाण्डुपुत्रोंने क्या किया? दस दिनका युद्ध होनेके पश्चात् प्रश्न हुआ—युद्धके प्रारम्भका। तब सञ्जयके मनमें यह बात आयी कि ये दस दिनका युद्ध सुन चुके हैं, फिर पूछते हैं कि युद्धके प्रारम्भमें क्या हुआ? इस प्रश्नका आशय सीधा-साधा नहीं होना चाहिए। कोई गूढ़ आशय होना चाहिए। इसका अर्थ है, वहाँ कोई विशेष घटना घटित हुई क्या? सामान्य युद्धके अतिरिक्त वहाँ और कौन-सी विशेष बात हुई? ऐसा धृतराष्ट्रका प्रश्न है। नहीं तो, पूछे कोई युद्ध-भूमिमें क्या हुआ और कही जाय गीता—पूछे कुछ और जबाब दे कुछ! ऐसा तो नहीं होना चाहिए।

तो सञ्जयकी बुद्धिमें यह आया कि धृतराष्ट्र कोई विशेष प्रश्न कर रहे हैं। इसका उत्तर देना चाहिए। धृतराष्ट्रकी संसारकी पकड़ मजबूत है—'धृतं राष्ट्रं येन यः।' विश्व मानवताको छोड़कर केवल एक सीमिति परिवारमें आसक्त रहकर विवेकशून्य, ममतापूर्ण हृदयसे यह प्रश्न निकला—विशेष क्या हुआ? तो इसका ऐसा उत्तर देना चाहिए, जिससे इनका अविवेक नष्ट हो, अज्ञान नष्ट हो, ममता कम हो, उनके मनमें सुख-शान्ति आये और सच्चे ज्ञानका उदय हो। करुणापूर्ण हृदयसे सञ्जयने धृतराष्ट्रको गीता सुनायी। सञ्जयका अर्थ है, जिसने अपने मनपर इन्द्रियोंपर, दोषोंपर, अज्ञानपर जय प्राप्त कर ली हो 'सम्यक् जयति।' सञ्जय जीवन्मुक्त पुरुष हैं। अज्ञानी धृतराष्ट्र—जीव, और जीवन्मुक्त पुरुष हैं सञ्जय। और कर्मी—'धनुरुद्यम्य पाण्डवः' धनुष-वाण हाथमें लेकर उपस्थित हैं अर्जुन। और सारथि जिनके सान्निध्यसे, जिनकी सहायतासे सब कुछ होता है, वे सारथिके रूपमें, सहायकके रूपमें,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

अपने सान्निध्य मात्रसे प्रेरणा देनेवालेके रूपमें—'श्रीकृष्ण।'

जब हम गीतापर दृष्टि डालते हैं कि—धृतराष्ट्रको क्या मिला ? उन्होंने गीता सुनी कि नहीं सुनी, समझी कि नहीं समझी, उससे कोई लाभ उठाया या नहीं उठाया, इसकी तो कोई चर्चा ही नहीं है। एक बार उन्होंने प्रश्न किया और सञ्जयने अपने आनन्दके लिए पूरी गीता सुना दी। गीता सुनाते वक्त सञ्जयको बड़ा आनन्द आया।

संवादमिममद्भुतम् केशवार्जुनयोः
पुण्यं हृष्यामि च मुहुर्मुहुः। १८.७६

यह केशव और अर्जुनका परम पवित्र, परम पावन संवाद है। मैंने स्वयं अपने कानोंसे सुना है—'व्यासप्रसादात् श्रुत्वा'। हमारे गुरुजी व्यासजीकी कृपा। मैं बैठा था धृतराष्ट्रके पास और सुन रहा था कुरुक्षेत्रमें होनेवाला संवाद और संवाद ही नहीं सुना, श्रीकृष्णका वह विराट् रूप भी देखा—

तच्च संस्मृत्य संस्मृत्य रूपमत्यद्भुतं हरेः।
विस्मयो मे महाराजन्हृष्यामि च पुनः पुनः॥ १८.७२

वह विराट् रूप देखकर मेरे मनमें विस्मय हुआ। विस्मय हुआ माने अहंकारकी निवृत्ति हो गयो। 'स्मय' शब्दका अर्थ संस्कृतमें अहंकार होता है। अतः विस्मयका अर्थ होगा—विगतः स्मयः। मैंने सब देखा है, सब जाना है परन्तु ऐसा रूप तो कभी नहीं देखा था, नहीं सुना था, नहीं जाना था। एक अकल्पित अननुभूत पदार्थके दर्शनसे जैसे आश्चर्य होता है, वैसे सञ्जयको आश्चर्य और आनन्द हुआ। महापुरुष अपनी शान्ति, अपने आनन्दमें मग्न रहकर ही सब काम करते हैं। अर्जुनको क्या मिला ? धृतराष्ट्र जो अज्ञानसे ग्रस्त है, ममतासे ग्रस्त है, अविवेकसे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

ग्रस्त है, बाहर-भीतर दोनोंकी फूटी है, अन्धा है, एक पदार्थको पकड़कर-जकड़कर बैठा है, उसे कुछ नहीं मिला। सञ्जय जीवन्मुक्त महापुरुष हैं। इसलिए उन्हें कुछ चाहिए नहीं। उनके मनमें कुछ इच्छा नहीं है। भगवान्‌की गीता दुहरा-दुहराकर उसका आनन्द लेते हैं। 'संस्मृत्य संस्मृत्य'—बारम्बार-बारम्बार श्रीकृष्णका रूप आता है और अर्जुनका संवाद आता है।

जब हम दृष्टि डालते हैं तो अर्जुनको ही बहुत कुछ मिला। मोहका नाश हुआ, स्मृतिकी प्राप्ति हुई, सन्देहकी निवृत्ति हुई और आज्ञाकारी—'करिष्ये वचनं तव' हो गये और कर्ममें लग गये। केवल आज्ञाके लिए 'जी हाँ, जी हाँ' नहीं किया—स्वयं कर्ममें संलग्न हो गये। युद्धभूमिमें आगये। यह अर्जुनके जीवनकी उपलब्धि है। सञ्जयका आनन्द अन्तरंग है और अर्जुनको अन्तरंग-बहिरंग दोनोंकी उपलब्धि है और श्रीकृष्णको क्या मिला? श्रीकृष्ण भी व्याकुल रहते हैं कि हमको कोई रक्षणीय मिल जाये। कोई ऐसा मिले जिसके ऊपर हम अपने वात्सल्यकी वर्षा करें। किसी दु:खीको सुखी बना दें! यही करुणामय भगवान्‌का स्वरूप है।

अपारसंसारसमुद्रमध्ये निमज्जतो मे शरणं किमस्ति।

मणिरत्नमाला १

मैं तो बहुत दिनोंसे संसार-सागरमें डूब रहा था—आप मिले, किनारा मिल गया। लेकिन मुझे किनारा मिल गया इतना ही नहीं है—'त्वयापि लब्धं भगवन्निदानीम्।' प्रभु आपको भी मिल गया, आपको मिल गया, बहुत कुछ मिल गया। क्या मिल गया? जैसा कभी नहीं मिला था वैसा मिल गया। 'अनुत्तमम् पात्रमिदं दयाया:।' आपको मेरे जैसा कोई दयाका पात्र नहीं मिला था। आप भी चाहते थे कि कोई ऐसा मिले जिसके ऊपर पूरी दया करें। आज मैं आपके सामने आपका पूर्ण दयापात्र होकर उपस्थित

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

हुआ हूँ। भगवान् आनन्दमें आते हैं जब उनका कोई प्रेमी और उद्धार्य—अपनी गोदमें लेनेके लिए कोई मिल जाता है; तो भगवान् अपनेको कृत्य-कृत्य मानते हैं। भगवान्को मिला अर्जुन—अर्जुनके अज्ञानका नाश हुआ, विस्मृतिका नाश हुआ और आज्ञाकारित्वका उदय हुआ। सञ्जय परमानन्दमें मग्न हो गये। और इतने मग्न हुए कि उन्हें याद भी नहीं रही कि एक बार धृतराष्ट्रसे पूछ तो लें कि हमारी कही हुई गीता तुमने सुनी कि नहीं सुनी ? श्रोताको ही भूल गये सञ्जय कि किसने प्रश्न पूछा था और किसको मैंने यह गीता सुनायी।

चार प्रकारके अधिकारी होते हैं। एक तो पामर और एक जीवन्मुक्त भगवान्का सान्निध्य तो सबको ही प्राप्त है। अपनी-अपनी स्थिति, गतिके अनुसार सभी लाभ ले रहे हैं। अब अर्जुन हैं श्रीकृष्णके सामने। पहले तो अर्जुनने धनुष-वाण उठानेके बाद वापिस रख दिया—रख नहीं दिया—फेंक दिया 'विसृज्य सशरं चापं शोकसंविग्नमानसः' (१.४६)। चला था वह धनुष-वाण लेकर शत्रुओंपर विजय प्राप्त करनेके लिए और हुआ क्या ? धनुष बाण फेंककर, हाथपर सिर रखकर रोता हुआ 'रथोपस्थ उपाविशत्' (१.४६) बैठ गया। धर्मसे प्राप्त था युद्ध और उसमें प्रतिबन्धकी उपस्थिति हुई—रुकावट आगयी, अड़चन आगयी, अंडस आगयी—शोक और मोह, ममता और मोह—आप कुछ भी करो, चाहे त्याग करो, चाहे संग्रह करो, परन्तु ममतासे, मोहसे, शोकसे, न त्याग करना उचित है और न संग्रह करना उचित है। जो कुछ भी करना हो वह विवेकसे ही करना चाहिए।

धनुष-बाण धारण करके जब युद्ध करनेका प्रयोग उपस्थित हुआ तो शोक-मोहने आकर उसको रोक दिया। और जब भगवान् श्रीकृष्णने उपदेश दिया तो शोक-मोह भाग गये। शोक-मोह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

भाग गये तो पहली जो युद्धकी प्रवृत्ति थी वह अपने आप उदय हो गयी। भगवान् अर्जुनको युद्ध करनेके लिए आज्ञा नहीं देते हैं, बल्कि पहलेकी आज्ञा पालनकी प्रवृत्तिमें जो बाधा आगयी थी, उस बाधाको दूर कर देते हैं। इसलिए केवल अपनी प्रवृत्तिमें बाधा डालनेके लिए जो ममता, शोक, मोह आते हैं, उनकी निवृत्तिमें ही गीताका तात्पर्य है—ऐसा आचार्य लोग कहते हैं। रुको मत, चलते चलो। चाहे कितना भी विघ्न आवे, कितनी भी बाधा आवे। अर्जुनको भगवान्ने संक्षेपमें अपनी विभूतियोंका वर्णन किया; विभूति शब्दका अर्थ है 'विशिष्ट भवन।' अनेक रूपमें भगवान्। ७२ तो नाम लिये—आलस्य बिल्कुल नहीं है। गीताके दसवें अध्यायमें ७२ नाम लेकर भगवान् श्रीकृष्णने अपना वैभव बताया—विभूति बतायी। यह भी मैं—यह भी मैं। संसारमें जो कुछ विभूतिमान् है, प्रशस्त है, शक्तिशाली है, वह सब भगवान्का तेज और भगवान्का अंश हो प्रकट हुआ है। दसवें अध्यायके अन्तमें जो उपसंहार है, वह है—

> यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा।
> तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंशसंभवम् ॥ १०.४१

जो भी वस्तु विभूतिसे युक्त है, वैभव है, श्रीमान् है और अर्जित है, वह मेरे तेजके अंशसे बना है—ऐसा जानना चाहिए।

श्री रहती है अपने पास, विभूति फैल जाती है। और ऊर्जासे क्रियाशक्ति आती है। श्री स्वनिष्ठ है—अपने पास रहती है। विभूति विशेष रूपोंमें हो जाती है और ऊर्जा अपने क्रियाशक्तिको, बलको—शरीरके, मनके, बुद्धिके बलको—आत्मबलको पूर्णरूपके प्रभावित करती है। भगवान् कहते हैं, शक्ति मैं हूँ, श्री मैं हूँ, विभूति मैं हूँ। अब रहा क्या? उसमें ह्री, श्री—सब आगया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

श्रीमत्से श्री और उर्जितसे ह्री और विभूतिसे सावित्री। सावित्री, लक्ष्मी और महामाया—महाशक्ति। जहाँ कहीं इनका विलास दीखे वह सब मैं ही मैं हूँ। यह है अन्तमें उपसंहार। इसके लिए अर्जुनका प्रश्न है। प्रश्न करनेवाला भी दाव-पेचवाला न हो। जो जानता हो और परीक्षा लेनेके लिए प्रश्न करे या दूसरोंको नीचा दिखानेके लिए प्रश्न करे, पराजित करनेके लिए प्रश्न करे तो उसके प्रश्नका उत्तर नहीं दिया जाता।

नापृष्टः कस्यचिद् ब्रूयात् न चान्यायेन पृच्छतः।
मनु०–२ ११०

अन्यायसे कोई प्रश्न करे तो उसका उत्तर नहीं देना चाहिए।

जानन्नपि हि मेधावी जडवल्लोकमाचरेत्॥
मनु० २.११०

जानता हो तब भी उसका उत्तर न दे। उनके सामने मूर्ख ही बन जावे। जैसा तुम समझते हो वैसा समझो। अर्जुन—ये दाव-पेचवाले प्रश्न नहीं करते। अपने दिलकी बात दो टूक भगवान्से बोलते हैं। जब मनमें आया कि नहीं लड़ूँगा तो नहीं लड़ूँगा—'न योत्स्य इति' (२.९) जब मनमें आया कि श्रीकृष्ण कुछ दुविधाकी बात कर रहे हैं तो कह दिया कि तुम दुविधाकी बात कर हो। साफ क्यों नहीं बोलते?

तत् किं कर्मणि घोरे मां नियोजयसि केशव।
व्यामिश्रेणेव वाक्येन बुद्धिं मोहयसीव मे॥ ३.१-२

और जब वस्तुओंके जाननेकी इच्छा हुई तो स्पष्टरूपसे पूछ लिया।

किं तद्ब्रह्म किमध्यात्मं किं कर्म पुरुषोत्तम ८.१

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

दाव-पेचसे रहित रहनेका प्रमाण है।

अब आया कि विभूतियोंका ज्ञान प्राप्त करें। किसीसे कोई पूछे कि तुम्हारे पास कितना धन है, कितनी संपत्ति है? सबको नहीं बताया जाता। अपनी पूँजी सबको थोड़ी बताते हैं। विभूति माने पूँजी है। यह तो जब कोई अपना बहुत आत्मीय, बहुत प्रेमी होता है, उसके सामने यह बात खोलकर रखी जाती है। हमारी एक धनीसे बात हुई तो कहने लगे—स्वामीजी हमको तो मालूम नहीं है कि हमारे पास कितनी संपत्ति है। भगवान् भी कह देते हमारे पास विभूतियोंका हिसाब-किताब नहीं है। बताया तो उन्होंने यही—कि बहुत बतानेसे क्या लाभ है—कहा तो अन्तमें यही, लेकिन पहले बताकर। ऐसी बात किसीसे पूछनी हो तो पूछनेवाला भी तो निकटका होना चाहिए न! अर्जुन माने सीधा—अर्जुनने पूछ लिया—महाराज, हम और किससे पूछने जावें? आप ही बता दें। दूसरेकी बतायी हुई बात तो गलत हो सकती है। पर आप अपने मुँहसे बतावेंगे तो बिल्कुल ठीक होगा। लेकिन विभूति जब पूछनी हो तो ऐसे सामान्य रूपसे तो नहीं पूछनी चाहिए। स्तुति भी चाहिए कि मैं जानता हूँ आप कैसे हैं।

परं ब्रह्म परं धाम पवित्रं परमं भवान्।
पुरुषं शाश्वतं दिव्यमादिदेवमजं विभुम्॥
आहुस्त्वामृषयः सर्वे देवर्षिर्नारदस्तथा।
असितो देवलो व्यासः स्वयं चैव ब्रवीषि मे॥

१०.१२.१३

परं ब्रह्म—यह बात उन्होंने बतादी—

गतिर्भर्ता प्रभुः साक्षी निवासः शरणं सुहृत्। ९.१८
यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति॥ ६.३०
अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते। १०.८

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

साफ बता दिया कि तुम परम ब्रह्म हो। हमको योग्य शिष्य समझा आपने—**शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्।** (२.७) कोई ऐरे-गैरेको तो यह बात बतायी नहीं जाती कि मैं ब्रह्म हूँ। महाराज, आपमें ही सारी दुनियाँ है—**मत्स्थानि सर्वभूतानि न चाहं तेस्ववस्थितः** (९.४) 'परमधाम' भी अपनेको बता दिया। परम तेजोमय, ज्योतिर्मय धाम माने घर जैसे होता है। जैसे चार धाम हैं। तो यह भी बता दिया कि मैं परम धाम हूँ। मुझमें सब कुछ रहता है। सारी सृष्टिका आधार मैं हूँ और अद्वितीय मैं हूँ। मेरा-घर नहीं—मैं सबका घर। मैं किसीकी रोशनीमें नहीं देखा जाता, सब मेरी रोशनीमें दिखता है। अब कहते हैं—बताओगे तो सच-सच—झूठ तो नहीं बोलोगे! अर्जुन ऐसे बोलते थे।

विश्वनाथ चक्रवर्तीने टीकामें कहा कि जब भगवान्ने कहा कि **'मामेवैष्यसि'** (८.७) मुझे प्राप्त होजाओगे। तो अर्जुनने कह दिया कि 'ग्वालिया, तुम्हारी बातका क्या ठिकाना?' झूठ-मूठ सौगन्ध खानेवाले! दिनभर तेरी सौं-मेरीसौं करनेवाले = कहीं झूठ बोल गया तो?—भगवान् बोले "सत्यम्" मैं सौगन्ध खाकर तुमसे प्रतिज्ञा करता हूँ। ये शपथ खानेकी क्या जरूरत पड़ी? जब किसीके मनमें शंका होती है तब शपथ खाकर बताना पड़ता है।

महाराज, एकबात हमें मालूम है कि आप बड़े पवित्र हैं। पवित्र माने माया, छाया न होना—कपट ही सच्ची अपवित्रता है। आपमें माया नहीं है, कपट नहीं है। परम पवित्र हैं आप! पवित्रताकी परासीमा और धामका अर्थ है आश्रयकी परम सीमा। ब्रह्मका अर्थ है अद्वितीयता। सबमें भरपूर हैं। 'पुरुषं-शाश्वतं'—कालमें भी आप नित्य है। कालकी दाल आपमें नहीं गलती। देशमें, कालमें परिपूर्ण हैं। वस्तुमें परिपूर्ण हैं। व्यक्तियोंके हृदयमें परिपूर्ण हैं। परम और पवित्र हैं। पवित्र माने पावन। जिनका नाम लेनेसे, जिनके रूपका ध्यान करनेसे, जिनके गुणोंका स्मरण

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

करनेसे मनुष्य पवित्र हो जाते हैं, उसका नाम है—पवित्र माने पावन—दूसरेको पवित्र करनेवाला।

जब चोरकी याद करोगे तो चोरी याद आयेगी, दिल अपवित्र हो जायेगा। व्यभिचारीको याद करोगे व्यभिचार याद आयेगा, हृदय अपवित्र हो जायेगा। जब शुद्ध वस्तुका स्मरण किया जाता है तो हृदय शुद्ध हो जाता है।

ये परमात्मा—जिनको हम देखते हैं, जिनके बारेमें सुनते हैं, ये दिव्य हैं। दिव्यका अर्थ है, कि लौकिकताकी कल्पना मत करो। संसारमें जैसे छली, कपटी, मरनेवाले लोग पैदा होते हैं वैसे ये नहीं हैं। और 'आदिदेवम्'। सारी सृष्टिके आदि प्रकाशक ये ही हैं। इनका जन्म कालमें नहीं हुआ है। और 'विभु' माने सर्वत्र—व्यापक ऐसे हैं श्रीकृष्ण भगवान्। अर्जुनकी भक्ति प्रीति इससे प्रकट हुई। अर्जुनका ज्ञान प्रकट हुआ कि श्रीकृष्णके प्रति उसकी कितनी श्रद्धा, कितनी भक्ति, कितनी भावना है? भगवान् अपने रहस्यकी बात अर्जुनका बतावेंगे।

बोले—अर्जुन, यह क्या चापलूसीकी बात करते हो! दुनियाँमें लोग खुशामद करके चाटुकारितासे बहुत लाभ उठाते हैं। तुम्हारे ऊपर भी इसका कुछ असर है क्या? नहीं, मैं अपनी बात आपसे नहीं कह रहा हूँ—

'आहुस्त्वामृषयः सर्वे देवर्षिर्नारदस्तथा' १०.१३

एक शब्दमें अर्जुनने कह दिया कि—सारे वेद, सारे मन्त्र, सारे ऋषि—आपको ऐसे ही कहते हैं। ऋषि शब्दका अर्थ मन्त्र भी होता है और ऋषि भी होता है। जो तपस्यासे सिद्ध हो, ज्ञानसे सिद्ध हो, वेदमन्त्रोंका द्रष्टा हो, उन महात्माओंको ऋषि कहते हैं। और वेदके मन्त्रोंको भी ऋषि कहते हैं। हमलोग कहते हैं—मन्त्र यह कह रहा है, क्योंकि मन्त्र ऋषि है। मन्त्रावछिन्न जो चैतन्य

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

है, वह मन्त्रमें बैठकर अपनेको देखता है, इसलिए जितने भी ऋषि हैं, वे श्रीकृष्णको ऐसे ही कहते हैं—'वेदमन्त्र भी उनका प्रतिपादन करते हैं'। देवर्षि नारद उसमें प्रमाण हैं। श्रीकृष्णके सम्बन्धमें नारदका प्रामाण्य सर्वोपरि है। चूँकि वे देवताओंके ऋषि, पुरोहित हैं, अतः वह जो श्रीकृष्णके सम्बन्धमें बताते हैं वह बहुत प्रामाणिक रहता है। फिर और ऋषियोंका नाम लिया।

असितो देवलो व्यासः स्वयं चैव ब्रवीषि मे। १०.१३

'असित-देवल'—देवल। काश्यप देवलको असित देवल कहा जाता है। असित विशेषण है। असित एक ऋषिका नाम भी है। इसकी विशेषता यह है कि वे कहीं आबद्ध नहीं होते। जैगीषव्य ब्राह्मणने एक असित ऋषिको बाँध लिया। जैगीषव्य मजा लेने लगे उस बन्धनमें। कभी छोटे-से बनकर उस बन्धनसे निकलकर ऊपर चले जायें और कभी बड़े-से बनकर आकर बन्धनमें बँध जायें। उसने तो उनको बाँधा था और वे उसका मजा लेने लगे। बढ़िया बात यही है कि हम जहाँ रहें—बन्धनमें रहें तो, मुक्त रहें तो—जेलमें भी रहें तो हँसे, गावें और बाहर रहें तो वहाँ भी हँसे, गावें, मजा लें। हर समय आनन्द बना रहना चाहिए। इसीसे असितको असित कहते हैं। सित माने बद्ध और असित माने जो कभी बद्ध न हो। जहाँ है वहाँ उसका ज्ञान बना है। उसका आनन्द बना है, उसका जीवन बना है। जीनेकी कला यही है कि कि हम अपने आनन्दको खो न दें। जब हम अपने आनन्दको खो देते हैं तो ज्ञानको भी खो देते हैं और जब ज्ञान और आनन्द जीवनमें न रहा तो जीवन क्या रहा? सत् माने जीवन चित् माने ज्ञान औ आनन्द—ये तीनों अपने स्वरूप हैं।

महात्माका स्वरूप यह है कि वह उनसे कभी रहित नहीं होगा। हर समय उसके आनन्दकी धारा बहती रहती है। हर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

समय उसके ज्ञानका प्रकाश फैलता रहता है और हर रूपमें उसकी जीवनसत्ता अपना काम करती रहती है। घड़ा फूटे कि टूटे, माटी ज्यों-की-त्यों। ऐसा है महात्माका जीवन। इसीको बोलते हैं 'असित'—कहीं, किसी भी अवस्थामें आबद्ध न होनेवाले। न प्रान्तमें बँधे, न राष्ट्रमें बँधे, न जातिमें बँधे, न मजहबमें बँधे। समय-समयपर जितनी धाराएँ आती हैं, चली जाती हैं।

बौद्धोंके बाद हमारे दर्शनशास्त्रपर एक ऐसी काली छाया पड़ गयी कि सब लोग अपनी-अपनी डफली, अपना-अपना राग बजाने लगे। मुसलमानोंके बाद ऐसा आहार-विहारका चक्कर चला, ऐसी जाति-पाँति, ऐसे झगड़े खड़े हो गये। किसी परिस्थितिमें, चाहे वह देशकी हो चाहे कालकी, पर उसमें आबद्ध नहीं होना चाहिए और ऐसा बन्धनहीन पुरुष जब भगवान्, ईश्वरके बारेमें बोलता है तो वह 'देवल' है। देव माने जो परमात्मा उसको देनेवाला !

और व्यासजी महाराजके बारेमें क्या पूछना, जो वेदोंके विभाग करे, ब्रह्मसूत्रका निर्माण करे, अठारह पुराणोंकी रचना करे। स्पष्ट बोलते हैं कि व्यास भगवान्के सिवाय महाभारतकी रचना करनेवाला कोई नहीं हो सकता। जिसने महाभारत नहीं पढ़ा, उसको तो मानव-संस्कृतिका मूल ही नहीं मालूम कि क्या है ? मानव कैसे होते हैं ? मनुष्यका मन कैसा होता है ? जीवनमें क्या-क्या आता है ? कितनी तरहके मनुष्य होते हैं और कितनी तरहकी दुर्घटनाएँ जीवनमें घटित होती हैं। उनमें एकरस, शान्तिका अनुभव करनेके लिए व्यासने महाभारतकी रचना की है। महाभारत शान्त-रसका ग्रन्थ है। उसमें अन्तमें निर्वेद स्थायी होकर शान्ति देनेवाला ग्रन्थ है। ऐसे व्यास भी यही कहते हैं कि श्रीकृष्ण ही भगवान् है। असित देवल, व्यास, देवर्षि नारद—ये सब महात्मा, सारे वेद, पुराण, सारे ऋषि यही कहते हैं कि तुम ही भगवान् हो।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

अरे बाबा, औरोंकी तो बात ही क्या—

स्वयमेवात्मनात्मानं वेत्थ त्वं पुरुषोत्तम। १०.१५
सर्वमेतदृतमन्ये यन्मां वदसि केशव। १०.१४

हम यह सब सच मानते हैं। मेरे मनमें तुम्हारे परमात्मा होनेमें कहीं असम्भावना नामकी चीज नहीं है। हमारे सामने सब परमात्मा बैठे हैं। न कोई विपरीत भावना है। हमारा हृदय असम्भावना और विपरीत भावनासे मुक्त है? हमारे मनमें यह नहीं आता कि तुम परमात्मा कैसे हो सकते हो? साढ़े तीन हाथके शरीरवाले, हमारे सारथिके रूपमें बैठे हुए, हमारे सम्बन्धी तुम परमात्मा हो सकते हो? ऐसी बात मेरे मनमें कभी नहीं आती। तुम परमात्मा हो; और फिर जो तुम कहते हो उसको भी सच मानता हूँ। तुम वस्तुतः केशव हो।

केशव शब्दका सीधा अर्थ होता है—जिसके बाल बहुत सुन्दर हों। पाणिनीने इसी अर्थमें केशव शब्दका निर्माण किया है। जिसके बाल बहुत सुन्दर हों उसका नाम होता है—केशव। अर्जुनके बाल भी कम सुन्दर नहीं थे। इसलिए अर्जुनको गुडाकेश कहते हैं। गुडाकेश माने घुँघराले बालवाला। अर्जुनको भी अपने बाल बहुत पसन्द हैं। इसलिए श्रीकृष्णके बाल भी वे बहुत पसन्द करते हैं। महाभारतमें केशव शब्दकी व्युत्पत्ति दूसरी है। वह यह है कि जिसके मुखारविन्दसे रश्मियाँ, स्वर्ण वर्णकी किरणें निकलती हों, उसको केशव कहते हैं और पण्डितोंने केशव शब्दका अर्थ और निकाल लिया। क माने ब्रह्मा ई माने विष्णु और ईश माने शंकर इन तीनोंका जो प्रशासक है, इस प्रशासकको, अन्तर्यामीको ईश्वर कहते हैं।

यन्मां वदसि केशव, न हि ते भगवन्व्यक्ति विदुर्देवाः न मानवाः।
१०.१४

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

कोई भी देव, दानव, मानव आपके व्यक्तित्वको नहीं समझ पाता। इतना गम्भीर व्यक्तित्व है। कोई कहे चोर, कोई कहे व्यभिचारी, कोई कहे पलायनवादी, कोई कहे कूटनीतिज्ञ, कोई कहे बडे ज्ञानी, कोई कहे साक्षात् भगवान्! अरे बाबा, इतनी तरहकी बातें लोग तुम्हारे बारेमें क्यों बोलते हैं—असलमें तुम्हारी जो असलियत है, उसे कोई जानता नहीं। जिसके दो बाप और माँ हैं। दो माँ देवकी-यशोदा—कौन जानेगा असलमें किसके बेटे हैं? आपसमें लड़ते हैं वसुदेवनन्दन हैं कि नन्दनन्दन हैं। इसके लिए सम्प्रदायोंका शास्त्रार्थ है। बल्लभ-सम्प्रदाय और चैतन्य महाप्रभु-का सम्प्रदाय—नन्दनन्दन ज्यादा मानते हैं और रामानुज सम्प्र-दायमें वसुदेवनन्दन श्रीकृष्णको मानते हैं। जिसके बापके बारेमें लड़ाई, माँके बारेमें लड़ाई, 'न हि ते भगवन्व्यक्तिं विदुर्देवाः।' बड़े-बड़े देवताओंको भी यह पता नहीं है कि तुम्हारा यह जो प्राकट्य है—जो अभिव्यक्ति है, यह क्या है? किसीको मालूम नहीं है। तुम्हीं तुमको जानते हो। आठ श्लोकोंमें तो प्रश्न है।

स्वयमेवात्म आत्मानं वेत्थ त्वं पुरुषोत्तम। १०.१५
केषु केषु च भावेषु चिन्त्योऽसि भगवन्मया। १०.१७

तुम स्वयं अपने आपको जानते हो। हमें बता दो कि हम किस-किस रूपमें तुम्हारा चिन्तन करें। यह उपासना नहीं है, भक्ति नहीं है। हम अपने हृदयमें किस-किस रूपमें तुम्हारा चिन्तन करें। पशु, पक्षी, पेड़, पौधा सबके रूपमें अपनेको श्रीकृष्ण बताते हैं। 'एष तूद्देशतः प्रोक्तः', वह तो केवल नाममात्र है। उसका मतलब यह है कि सब भगवान्का स्वरूप है।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

प्रवचन : २

१-११-८१

पाणिनीय व्याकरणकी दृष्टिसे अर्जुन शब्दका अर्थ होता है = अर्जन करनेवाला—उपार्जन करनेवाला। जैसे आपलोग धनार्जन करते हैं—अर्जनका ही अर्जुन होगया है। धनञ्जयका पर्यायवाची है अर्जुन। ज्ञानार्जनमें भी उसका अर्थ संगत हो जाता है। ज्ञानोपार्जनमें बड़ा निपुण है। जैसे व्यापारी धन-उपार्जनमें निपुण होता है, वैसे अर्जुन ज्ञानोपार्जनमें निपुण है। 'अर्जनात्

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

अर्जुनः'। दूसरा अर्थ होता है जो सीधा-सादा सरल स्वभावका है उसको अर्जुन कहते हैं। इस प्रसंगमें अर्जुनने श्रीकृष्णके अनेक सम्बोधन दिये हैं—

सर्वमेतदृतं मन्ये यन्मां वदसि केशव।
न हि ते भगवन्व्यक्तिं विदुर्देवा न दानवाः॥
स्वयमेवात्मनात्मानं वेत्थ त्वं पुरुषोत्तम।
भूतभावन भूतेश देवदेव जगत्पते॥
१०.१४-१५

अर्जुनका कहना है कि जो कुछ आपके बारेमें ऋषियोंने कहा है, मन्त्रोंने कहा है, वेदोंने कहा है, देवर्षि नारदने कहा—असित-देवलने कहा, व्यासने कहा—सर्वमेतदृतं मन्ये। मैं सबको सत्य मानता हूँ। सब चीज ठीक है। हमारे मनमें कोई शंका नहीं है। श्रद्धा है, आत्मबल—निर्बलताका नाम श्रद्धा नहीं है, एक अदृष्ट पदार्थ जिसका हमको साक्षात्कार नहीं हुआ है, और जिसको मान करके अपने जीवनका संचालन करना है—यह बिना दृढ आत्म-बलके नहीं हो सकता। इसलिए श्रद्धा करना, जो आत्मबलसे दरिद्र हैं, उनका काम नहीं है। आत्मबलके जो धनी हैं उनका काम है कि वे अदृश्यपर-अदृष्टपर श्रद्धा करें।

न हि ते भगवन्व्यक्तिं विदुर्देवा न दानवाः।

आपकी जो व्यक्ति है उसके स्वरूपको देवता-दानव कोई नहीं जानते। क्योंकि न तो बलसे जान सकते हैं, न तो इन्द्रियोंसे जान सकते हैं। यहाँ दोनोंका निषेध हो गया। देवता प्रज्ञासे जानते हैं। और दानव प्राणसे, बलसे जानते हैं। कम्प्यूटरसे किसीकी गिनती कर लेना यह दूसरी बात है और लेबोरेटरीमें गलाके किसी वस्तुको जान लेना यह दूसरी बात हो गयी। दैत्य लेबोरेटरीमें रासायनिक क्रिया करके वस्तुको जाननेका प्रयास करते हैं और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

देवता गणितके द्वारा प्रयत्न करते हैं। ये दो पद्धतियाँ हैं। संख्या करलें तो सांख्य हो गया और निर्माण करलें तो धर्म हो गया, कर्म हो गया। कोई भी कर्मबल अथवा बुद्धिबलसे परमात्माको नहीं जान सकता है। व्यक्ति माने अव्यक्तका व्यक्त होना। व्यक्त माने जाहिर होना। व्यक्ति माने जो व्यंजित हुआ है। परमात्माकी अभिव्यंजनाका नाम यहाँ व्यक्ति है। गीतामें यह बात कही गयी कि जो लोग परमात्माको व्यक्तिभावको प्राप्त मानते हैं, वे बुद्धिमान् नहीं हैं।

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः। ७.२४

मैं हूँ अव्यक्त—अव्यक्त माने किसी भी रासायनिक प्रक्रियाके द्वारा या किसी भी प्रमाणके द्वारा जो ज्ञात न हो। प्रमाण-प्रधान होते हैं देवता और क्रिया-प्रधान होते हैं—देवतासे जो इतर लोग हैं। हम आँखसे देखते हैं यह प्रमाण हुआ। कानसे सुनते हैं यह प्रमाण हुआ—बुद्धिसे सोचते हैं यह प्रमाण हुआ। अपने आपमें अनुभव करते हैं यह प्रमाण हुआ और किसी वस्तुको सड़ाकर, गलाकर, कुछ मिलाकर—उसको जानना यह एक प्रक्रिया हुई। अब परमात्माका जो व्यक्तित्व है वह क्या जैसा सबका व्यक्तित्व है, वैसा ही है? अद्भुत लीला है इस व्यक्तित्वके बारेमें। कोई लोग कहते हैं कि जैसा कर्म होता है, उसके अनुसार व्यक्तिका निर्माण होता है। कोई कहते हैं जैसा कारण होता है उसके अनुरूप व्यक्तिका निर्माण होता है। कोई कहते हैं जैसा निमित्त होता है उसके कारण व्यक्तिका निर्माण होता है।

व्यक्तिके निर्माणके लिए बीज भी आवश्यक होता है। बीजमें संस्कार होता है और उपादान भी आवश्यक होता है। वस्तुमें संस्कार रहता है, वहाँ निमित्त भी होता है। जैसे पञ्चभूतका उपादान है और उसमें बीजका वंशानुगत संस्कार है और मालीने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

उसकी कलम बाँध दी। एक दूसरी वस्तुका निर्माण हो गया। उपादान भी है, संस्कार भी है, निमित्त भी है। इमलीके बीजसे आम पैदा नहीं हो सकता। आमके बीजसे इमली पैदा नहीं हो सकती। ये बीजगत संस्कार हैं और पञ्चभूतरूप उपादान दोनोंमें हैं। अब दोनोंकी कलम करके अगर तीसरी चीज बनानी हो तो माली उनका संकर बनायेगा—मिश्रण करेगा।

यह जो श्रीकृष्णका, ईश्वरका, व्यक्तित्व है यह क्या वैसे ही है? पञ्चभूत उपादान हैं और जीवके पूर्व संस्कार है। माता-पिता निमित्त हैं—और एक जीवका व्यक्तित्व उदय होता है—एक मनुष्य प्रकट होता है। अब बताओ वह चिद्वस्तु चेतन, जिसमें साक्षी होनेसे उपादानता नहीं है, अकर्ता होनेसे जिसमें संस्कार नहीं है, अदृश्य होनेसे जिसमें कोई क्रियाका प्रयोग नहीं है, जो सच्चिदानन्द घन चेतन है, वह श्रीकृष्ण व्यक्तिके रूपमें कैसे आया? मनुष्यको व्यक्तिके रूपमें आनेके लिए माता-पिताका बीज भी है, पञ्चभूत भी है, उसके कर्मरूप निमित्त भी हैं। एक जीव मनुष्यके रूपमें व्यक्त हुआ तो उसके पास तो सारी सामग्री थी। परन्तु ईश्वरको व्यक्ति बननेमें, एक मनुष्यके रूपमें आनेमें क्या कारण है? पञ्चभूतके उपादानसे शरीर बना नहीं, पूर्वजन्मके संस्कार हैं नहीं, इनके वास्तविक माता-पिता कोई हैं नहीं। किसीने उनको संकर बनाया नहीं। फिर श्रीकृष्णका व्यक्तित्व क्या है? उन्होंने कहा कि मैं तो अव्यक्त ही हूँ—व्यक्ति-भावको कभी प्राप्त हुआ नहीं।

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः। ७.२४

कभी कोई दर्शन-शास्त्रकी बात भी सुना दें। कभी कथा भी सुना देंगे। पण्डितोंमें जब इसकी चर्चा होती है—उसका नमूना आपको सुना दें—आपको श्लोकके साथ सुना दें। जैसे आप

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्यापारमें पैसेके साथ खेलते हैं, वैसे हमलोग शब्दोंके साथ खेलते हैं।

भगवान्‌ने कहा—जब मैं प्रत्यक्ष व्यक्तिके रूपमें प्रकट हूँ—ये साँवरा सलोना, ये पीताम्बधारी, ये मन्दमन्द मुसकान, ये प्रेमभरी चितवन, मैं तुम्हारे सामने हूँ तो फिर निराकारका चिन्तन कौन करेगा? बोले—'अबुद्धयः'—

अव्यक्तं सन्तं माम् अबुद्धयः व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते।
व्यक्तिमापन्नं मां अबुद्धयः अव्यक्तं मन्यन्ते।

मैं हूँ बिलकुल निराकार लेकिन जो हमको साकार मानते हैं—वे कौन हैं? बोले—'अबुद्धयः'।

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं च माम् अबुद्धयो मन्यन्ते।

भगवान् निराकार है कि साकार है? इस झगड़ेमें मूर्ख लोग फँसते हैं। न भगवान् साकार है, न निराकार है—यह शब्द-लीला है। यह पौराणिकोंका काम नहीं है और कवियोंका काम भी नहीं है। ये हमारे दार्शनिक और वैयाकरण—दोनोंका काम है।

अवजानन्ति मां मूढाः मानुषीं तनुमाश्रितम्। ९.११

हमको मनुष्य समझकर मूढ़ लोग हमें अपमानित करते हैं। हम मनुष्य नहीं हैं, देवता भी नहीं, दानव भी नहीं। क्या हैं—विलक्षण—साक्षात् परब्रह्म, परमात्मा हैं। देखनेमें मनुष्य हैं और हैं साक्षात् परब्रह्म, परमात्मा। व्यक्तिकी जानकारी कैसे होगी? एक बालक अपने पितासे एक दिन लड़ाई कर बैठा—पिताजी जब मेरा विवाह होगा तब मैं आपको आमन्त्रित नहीं करूँगा। उसने पूछा—'क्यों बेटा?' ऐसा क्यों करोगे? बोला, 'तुमने अपने व्याहमें हमको आमन्त्रित नहीं किया था। हम तो बदला लेंगे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

अपने बापके जन्म-कर्मको पुत्र कैसे जान सकता है ? क्योंकि जब पुत्र नहीं था तब पिताका जन्म हुआ। अब यह भगवान्‌की जो अभिव्यक्ति है—भगवान्‌का जाहिर होना, यह भगवान्‌के बाद पैदा हुआ और जिसके पहले भगवान् थे वे अगर जानना चाहें कि हम भगवान्‌के जन्मको जान लें तो कैसे जानेंगे ?

न हि ते भगवन्व्यक्तिं विदुर्देवा न दानवाः।

क्रियाशक्तिसे भी, ज्ञानशक्तिसे भी नहीं—और व्यक्ति जो है वह सच्चिदानन्दकी अभिव्यक्ति है। सत्‌में आवृत्ति कैसे बनी ? चित्‌में विशेष ज्ञानकी उत्पत्ति कैसे हुई ? आनन्दमें भोगका सम्बन्ध कहाँसे हुआ ? न आनन्दमें भोगका सम्बन्ध होता है, न ज्ञानके वृत्तियाँ बनती हैं और न सत्‌में आकृतियाँ बनतीं हैं। तब यह सच्चिदानन्द परब्रह्म परमात्मा जो है, वह व्यक्तिके रूपमें कैसे आया ? कोई इस बातको नहीं जानता। सबके ऊपर पानी फेर दिया। किसीको यह बात मालूम ही नहीं है कि भगवान् अव्यक्तसे व्यक्त कैसे हुए ? निराकारसे साकार कैसे हुए ? निर्गुणसे सगुण कैसे हुए ? अजन्मासे जन्मवान कैसे बने ? यह बात किसीको मालूम नहीं है। जो लोग बताते हैं कि हमको मालूम है वे अलल-टप्पू गप्प हाँकते हैं। भगवान् निराकार भी हैं, साकार भी हैं। पर निराकारसे साकार कैसे हुए, इसको जाननेवाला कोई नहीं है। सब अज्ञानके चक्करमें फँस गये। अपनी-अपनी कल्पना-जल्पनासे यह बात बोलते हैं कि भगवान् ऐसे प्रकट हुए, भगवान् ऐसे प्रकट हुए। बोले, कोई तो जाननेवाला चाहिए न ! बोले, हाँ, जानने-वाला तो है। अर्जुनने कहा हम जाननेवालेको जानते हैं, हम उसको पहचानते हैं।

न हि ते भगवन्व्यक्तिं विदुर्देवा न दानवाः।
स्वयमेवात्मनात्मानं वेत्थ त्वं पुरुषोत्तम ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अपने आपको, अपने आपसे, आप स्वयं जानते हैं। 'स्वयमेव आत्मना आत्मानं वेत्थ'। तुम स्वयं ही अपने आपको जानते हो। माने तुम्हारा ज्ञान और तुम्हारी व्यक्ति एक हैं—दो नहीं। जो ज्ञान है वही व्यक्ति है और जो व्यक्ति है वही ज्ञान है। श्रीरामानुजाचार्यसे किसीने पूछा—महाराज, आपकी यह व्यक्ति क्या है? और आप क्या हैं? श्रीरामानुजाचार्यने उत्तर दिया—'किमात्मिका भगवतो व्यक्तिः? यदात्मको भगवान्'।

भगवान्‌की जो यह अभिव्यक्ति होती है, अभिव्यञ्जना होती है, जाहिर होना होता है—उस अव्यक्त स्वरूपको प्रकट करनेवाली व्यक्ति, वह क्या होती है? बोले 'यदात्मको भगवान्' अभिव्यक्ति क्या है? स्वयं भगवान् ही अभिव्यक्ति है। उसमें दूसरे कुछका मिश्रण नहीं है। 'किमात्मको भगवान्'? भगवान् क्या है? 'यदात्मिका अभिव्यक्तिः'—जैसी उनकी अभिव्यक्ति है। जैसे जाहिर हैं वैसे ही वे अनजाहिर भी हैं। जैसे प्रकट हैं वैसे ही गुप्त भी हैं। जैसे गुप्त हैं वैसे प्रकट भी हैं। भगवान् बिल्कुल एक सरीखे हैं और उनको जाननेवाला कोई दूसरा नहीं है।

अब देखिये क्या युक्तिसे यह बात बतायी है! 'स्वयमेव', स्वयमेवका अर्थ हुआ—अपने आप जानते हैं। कोई गुरु नहीं है। 'स्वयमेव'का अर्थ है कि भगवान्‌को किसीने नहीं कहा हो कि 'तत्त्वमसि'। भगवान् 'निगुरे' हैं। उनका गुरु कोई नहीं है। उनको किसीने बताया नहीं कि तुम प्रभु हो। जीवको बताना पड़ता है कि तुम ब्रह्म हो। ईश्वरको बताना नहीं पड़ता। अभी अध्यात्म रामायणमें मैंने देखा। ईश्वरके लिए निरीश्वर शब्दका प्रयोग है। ईश्वर आस्तिक होता है कि नास्तिक? ईश्वर यदि अपना ईश्वर किसी औरको मानता है तो छोटा ईश्वर हो गया न? दो नम्बर का। ईश्वरका ईश्वर नहीं होता, इसलिए ईश्वरको निरीश्वर कहते हैं। भागवतमें प्रयोग है—ईश्वरका आत्मा कोई

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

दूसरा नहीं है। वह स्वयं आत्मा है।

आगे जाननेकी प्रक्रियाका खण्डन करते हैं। 'आत्मना आत्मानं वेत्थ'। हम जब किसी चीजको जानते हैं, तो प्रत्यक्षादि प्रमाणके द्वारा जानते हैं। आँखसे रूपको देखते हैं—काला है, गोरा है। आकृतिको भी आँखसे जानते हैं? कानसे शब्दको जानते हैं। त्वचासे स्पर्शको जानते हैं। आत्मना नहीं जानते। करणेन—किसी इन्द्रियके द्वारा हम संसारको जानते हैं। मनके द्वारा जानते हैं, बुद्धिके द्वारा जानते हैं और परमात्माको जाननेके लिए इन्द्रिय, मन और बुद्धिका तिरस्कार करना पड़ता है। जाओ इन्द्रियो—तुम संसारको देख सकती हो—देखो। पति पत्नीपर नाराज हुआ, बोला दिनभर तुमको बाजार ही अच्छा लगता है। जाओ बाजारमें। वैसे स्त्री भी पुरुषको कह सकती है कि दिनभर तुम्हें पैसा, पैसा, पैसा—हम भी तो घरमें कुछ हैं।

पराञ्चि खानि व्यतृणत् स्वयंभूः। कठ० उप०

इन्द्रियाँ तो बाहरकी वस्तु देखनेके लिए जाती हैं। आत्माके अस्तित्वसे ही सबकी प्रवृत्ति हो सकती है। परमात्माको देखनेके लिए, आँखसे देखें, कि कानसे सुनें, कि त्वचासे स्पर्श करें, कि नाकसे सूँघें कि जीभसे चक्खें कि मनसे कल्पना करें तो बोले 'आत्मना'। यह तो सब अनात्मा है। इनके द्वारा परमात्माका ज्ञान नहीं होता। इनका निषेध करके परमात्माका ज्ञान होता है। किसको जानते हैं?

एक बात और है। जैसे हमें दूसरेके कन्धेपर चढ़ना हो तो चढ़ सकेंगे। लेकिन अपने कन्धेपर चढ़ना हो तो कोई स्वयं अपने कन्धेपर नहीं चढ़ सकता। इसलिए यदि आत्मा परमात्माको अन्य रूपमें जाने तो कर्तृं-कर्मं विरोध हो जायेगा। जाननेवाला और, जाना जानेवाला और। परमात्मा जब अपनेको जानता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है तब जाना जानेवाला और, जाननेवाला और, ऐसा नहीं होता। 'स्वयमेव बुद्धम् स्वयं च तत्त्वम्'। अपने आप ही उसका बोध होता है। माने आत्माका ज्ञान दूसरेका ज्ञान नहीं है। आत्माका ज्ञान, दूसरोंके द्वारा इन्द्रियोंके द्वारा नहीं होता और स्वयमेवका अर्थ है—स्वयं ज्ञान-स्वरूप है। अभिव्यक्तिमें और ज्ञानमें कोई फरक नहीं है।

अब सम्बोधन दे दिया 'पुरुषोत्तम'। आप जानते ही हैं गीतामें तो पुरुषोत्तम शब्द पारिभाषिक है। एक खास मतलबसे पुरुषोत्तम शब्दका प्रयोग होता है। ऐसे तो व्यवहारमें किसीको भी पुरुषोत्तम कह सकते हैं। अरे भाई, ये तो प्रधान मन्त्रीके नाकके बाल हैं—हो गये न पुरुषोत्तम! राष्ट्रपति इनकी सलाहसे काम करते हैं। डॉक्टरोंके लिए कहते हैं—ये राष्ट्रपतिके खास चिकित्सक हैं—'पुरुषोत्तम' हो गये। महात्मा लोग भी जिनकी प्रशंसा करें, विद्वान् भी जिनकी प्रशंसा करें। हजार गवाही देकर लोग किसीका बड़प्पन सिद्ध करते हैं। 'राजानो यं प्रशंसन्ति यं प्रशंसन्ति पण्डिताः। साधवो यं प्रशंसन्ति स पार्थं पुरुषोत्तमः।' दुनियाँमें पुरुषोत्त कौन है? बोले राजा, विद्वान् और साधु तीनों जिसकी प्रशंसा करते हों। यह तो लौकिक पुरुषोत्तम हुआ और श्रीकृष्ण कैसे पुरुषोत्तम हैं? आपने गीतामें पुरुषोत्तम शब्दकी व्याख्या पढ़ी है। जो जड़-सृष्टि है और जो जीव-सृष्टि है, इन दोनोंका सञ्चालक, अन्तर्यामी, प्रेरक, प्रकाशक जो प्रभु है, क्षराक्षर विलक्षण है; क्षर अर्थात् जड़-सृष्टिसे विलक्षण और अक्षर अर्थात् जीव-सृष्टिसे विलक्षण! उसको बोलते हैं—'पुरुषोत्तम'।

> उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः।
> यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वरः॥ १५.१७
> यस्मात्क्षरमतीतोहमक्षरादपि चोत्तमः।
> अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः॥ १५.१८

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

लोकमें भी मेरा नाम पुरुषोत्तम है और वेदमें भी मेरा नाम पुरुषोत्तम है। क्योंकि क्षर पुरुष और अक्षर पुरुष, अष्टधा प्रकृति और परा प्रकृति दोनोंसे परे मैं हूँ। ये उलाहना मत देना कि भगवान्‌ने अपनेको पुरुषोंसे ही उत्तम बताया—स्त्रियोंसे भी उत्तम क्यों नहीं बताया ? संस्कृत भाषामें स्त्री-पुरुषके लिए भेद नहीं है। पुरुष शब्दका प्रयोग दोनोंके लिए होता है। क्योंकि जीवको देखकर वे बोलते हैं, शरीरको देखकर नहीं बोलते। स्त्रीके शरीरकी बनावट दूसरी है और पुरुषके शरीरकी बनावट दूसरी है। पर शरीरकी बनावट दूसरी-दूसरी है, आत्मामें, जीवात्मामें कोई फरक नहीं है। न पञ्चभूतमें कोई फरक है, और न चेतनमें कोई फरक है।

इसलिए संस्कृत भाषामें दोनोंके लिए प्रकृति शब्दका प्रयोग भी आता है। अष्टधा प्रकृति, परा प्रकृति, आपरा प्रकृति—परा प्रकृति रूप अक्षर-पुरुष और अपरा प्रकृति रूप ये पञ्चभूत। इन दोनोंसे विलक्षण है पुरुषोत्तम। क्षेत्रसे भी विलक्षण है और क्षेत्रज्ञसे भी विलक्षण है। तेरहवें अध्यायमें क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ। सातवें अध्यायमें परा प्रकृति, अपरा प्रकृति। पन्द्रहवें अध्यायमें क्षर और अक्षर पुरुष—इन दोनोंके लक्षणोंसे जिसका लक्षण अलग है विलक्षण है। विलक्षण कहनेमें कभी निन्दा भी होती है, कभी स्तुति भी होती है। भाई, यह तो विलक्षण पुरुष है। माने पता ही नहीं चलता कि क्या है ? न इसमें पूरा-पूरा साधुका लक्षण मिलता है, न पूरा-पूरा दुष्टका लक्षण मिलता है। तब कहेंगे 'विलक्षण' है। साधु-लक्षणसे भी विपरीत है और दुष्ट-लक्षणसे भी विपरीत है।

अब भगवान्‌के बारेमें क्या कहेंगे ? भागवतमें तो ऐसा लिखा है कि जब दो आदमी परस्पर वाद-विवाद करने लगते हैं, उसके पास भी वे धीरेसे बैठ जाते हैं। एक काटता है और एक उसका समर्थन करता है। काटनेवालेके भीतर बैठकर उसे धीरेसे काटनेकी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

युक्ति बताते हैं और समर्थन करनेवालेके भीतर बैठकर धीरेसे उसे समर्थन करनेकी युक्ति बताते रहते हैं।

यच्छक्तयो वदतां वादिनां वै विवादसंवादभुवो भवन्ति।

भागवत ६.४.३१

एक वकील वादी और प्रतिवादी दोनोंको सलाह दे तब उसे क्या कहें? पर ये भगवान् ऐसे विलक्षण—पुरुषोत्तम हैं। उनके लिए कोई अपना-पराया है ही नहीं—जो उनकी सन्निधिमें है उसको अपना ज्ञान देते हैं, अपनी शक्ति देते हैं, अपनी प्रेरणा देते हैं। यह देव-दानवका झगड़ा संसारमें है, भगवान्में नहीं है। अपने-परायेका व्यामोह बिल्कुल संसारी है। भगवान्में अपने-परायेका कोई भेद नहीं है।

यह जो पुरुषोत्तमत्व है उसका विवरण देनेके लिए—यदि पुरुषोत्तमपनेको समझनेमें कोई परदा पड़ा हो तो आओ इसका खुलासा कर देते हैं। अभी मैंने वाल्मीकि रामायणमें एक बढ़िया सूक्ति देखी। जब सीताजीको विभीषण लेकर पालकीमें आने लगे श्रीरामचन्द्रके पास—उन्हें वानर देखनेके लिए दौड़े। वहाँ छड़ीदार मार-मारकर वानरोंको दूर भगाने लगे, बोले पालकीके पास मत आओ। वे रक्षक कपड़े भी पहने थे। साफा भी बाँधे थे। उनके हाथमें छड़ी भी थी, रामचन्द्रने देखा क्या कोलाहल हो रहा है? सीताजीके दर्शनके लिए हल्लागुल्ला हो रहा है। बोले सीताजीको कह दो कि पालकीसे नीचे उतरकर पैदल आवें। वहाँ ऐसा बढ़िया वचन कहा है कि स्त्रीके लिए घरका परदा नहीं है कि वह चहार दिवारीके भीतर ही रहे। उसके लिए पालकीका परदा भी नहीं है। उसके लिए कपड़ेका परदा भी नहीं है।

'वृत्तमावरणं स्त्रियाः' (रामा० युद्ध० ११४.२७) जो आचरण है—वही उसका परदा है। क्या बढ़िया सूक्ति है—'वृत्तं चरित्रम्

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

आवरणं अवगुण्ठनं स्त्रियाः' स्त्रीका परदा क्या है? उसका आचरण। यदि उसका आचरण ठीक है तो वह परदेमें है। पुरुषके लिए भी ऐसा ही वर्णन है। 'छन्दांसि यस्य पर्णानि' (१५.१) यह जो अश्वत्थ वृक्षमें वेदका छन्दस् है, आच्छादन है, यही पत्ता है। इस अश्वत्थ वृक्षका पर्दा क्या है? पत्ता क्या है? छन्दस्—वेद। शास्त्रके अनुसार, संविधानके अनुसार, मर्यादाके अनुसार जो जीवन व्यतीत होता है, उसी जीवनको बोलते हैं कि वह पवित्र जीवन है। भगवान् सबमें रहकर सबको ज्ञान दे रहे हैं। अब उसका हम विवरण कर रहे हैं। पुरुषोत्तमका—विवरण माने खुलासा। भगवान्को—पुरुषोत्तमको परदा हटाकर देख रहे हैं, अनावृत करके देख रहे हैं।

भूतभावन भूतेश देवदेव जगत्पते।—ये पुरुषोत्तम हैं। 'भूतानि भावयति'। सब भूतोंको—'भवन्ति इति भूतानि'। संस्कृत भाषामें केवल भूत-प्रेतके लिए भूत शब्दका प्रयोग नहीं होता। और केवल भूत कालके लिए भी भूत शब्दका प्रयोग नहीं होता। 'भवन्ति इति भूतानि'। जो इस समय हो रहे हैं। बच्चा हो रहा है—भूत है। बच्चा जवान हो रहा है—भूत है। इन सबको बनानेवाले—'भूतानि भावयति'। जो सबको रसीला बना देता है। जो मुर्देमें जान फूँक देता है। उसका नाम है भूतभावन। मूर्खको पण्डित बना दिया, इसका नाम हो गया भूतभावन। जड़को चेतन बना दिया, इसका नाम हो गया भूतभावन। दुःखीको सुखी बना दिया, इसका नाम हो गया भूतभावन, जैसे वैद्य लोग किसी वस्तुको भावना देते हैं। एक कुचिला जो कड़वा होता है—उसको भावना देते हैं—गोबरमें रखते हैं। फिर दूध, दही, घी, शहदमें रखते हैं। अब वह कड़वा कुचिला जो है, वह भावना देते-देते एक रसायन बन जाता है।

इसी प्रकार इस विश्वसृष्टिमें जिसने भावना दे-दे करके अपने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्राणोंसे जीवित किया, अपनी आवाज भर दी, चिड़ियामें कितनी मधुर, कितनी सुरीली आवाज ! अपनी हरियाली भर दी वृक्षोंमें, अपना रस भर दिया फलोंमें—वह है भूत-भावना। कोयलमें जिसने मीठी आवाज भर दी वह भूत-भावन है। जिसने सुरीली, वीणाके तारमें मीठी आवाज भर दी—उसका नाम भूतभावन है। जिसने जलको रसीला बना दिया 'रसोऽहमप्सु कौन्तेय' (उसका) नाम भूत-भावन है। सबमें भावना भर रहा है। सब जीवित रह रहे हैं। सब जान रहे हैं। सब मजा ले रहे हैं। ये कौन हैं ? यह वही है। यह हमें दीखता नहीं है। यह जादूका खेल तो दिखाता है पर जादूगर नहीं दिखता। न तं विदाथ य इमा जजान। (ऋग्वेद १०.८२.७७)। लोग बगीचा तो देख रहे हैं पर यह बगीचा है किसका ? उसको नहीं देखते—वह है भूतभावन, माने सारे जगत्का माता-पिता है, पालक-पोषक है।

कोई-कोई लोग ऐसे भी निकल जाते हैं, जिनका माता-पितासे प्रेम नहीं होता है। वे केवल माता-पिता ही नहीं हैं। डंडा मारकर भी ठीक करनेवाले हैं। भूतेश—भूतोंके ईश्वर हैं—स्वामी हैं—ईशनशील हैं। ईश हैं—नियन्ता हैं। माता-पिताके काबूमें बालक भले ही न आवे किंतु ये तो ऐसे हैं कि सबको अपने नियन्त्रणमें-कर लेते हैं। भूतेश—कोई-कोई स्वामीसे भी विद्रोह करते हैं। भले कोई छोटे-मोटे स्वामीसे विद्रोह करे—ये तो देव-देव हैं। देव-देवका अर्थ है—सूर्यमें, चन्द्रमामें, ग्रहमें, नक्षत्रमें, तारामें जो चमक, जो प्रकाश है, ये इन सब प्रकाशोंके प्रकाशक, देवताओंके देवता—'तस्य भासा सर्वमिदं विभाति' उस परमात्माके प्रकाशसे ही यह सृष्टि प्रकाशित हो रही है। सबमें एक चमक है, उस चमकको, प्रकाशको, उस रश्मिको, उस रौनकको देखो जो सबमें भरी हुई है।

स्त्रीमें वही है, पुरुषमें वही है। परमात्मा वह तत्त्व है, जो नाम-रूपके भेदसे अलग-अलग नहीं होता। परमात्मा वह प्रेम है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

आवरणं अवगुण्ठनं स्त्रियाः' स्त्रीका परदा क्या है? उसका आचरण। यदि उसका आचरण ठीक है तो वह परदेमें है। पुरुषके लिए भी ऐसा ही वर्णन है। 'छन्दांसि यस्य पर्णानि' (१५.१) यह जो अश्वत्थ वृक्षमें वेदका छन्दस् है, आच्छादन है, यही पत्ता है। इस अश्वत्थ वृक्षका पर्दा क्या है? पत्ता क्या है? छन्दस्—वेद। शास्त्रके अनुसार, संविधानके अनुसार, मर्यादाके अनुसार जो जीवन व्यतीत होता है, उसी जीवनको बोलते हैं कि वह पवित्र जीवन है। भगवान् सबमें रहकर सबको ज्ञान दे रहे हैं। अब उसका हम विवरण कर रहे हैं। पुरुषोत्तमका—विवरण माने खुलासा। भगवान्को—पुरुषोत्तमको परदा हटाकर देख रहे हैं, अनावृत करके देख रहे हैं।

भूतभावन भूतेश देवदेव जगत्पते।—ये पुरुषोत्तम हैं। 'भूतानि भावयति'। सब भूतोंको—'भवन्ति इति भूतानि'। संस्कृत भाषामें केवल भूत-प्रेतके लिए भूत शब्दका प्रयोग नहीं होता। और केवल भूत कालके लिए भी भूत शब्दका प्रयोग नहीं होता। 'भवन्ति इति भूतानि'। जो इस समय हो रहे हैं। बच्चा हो रहा है—भूत है। बच्चा जवान हो रहा है—भूत है। इन सबको बनानेवाले—'भूतानि भावयति'। जो सबको रसीला बना देता है। जो मुर्देमें जान फूँक देता है। उसका नाम है भूतभावन। मूर्खको पण्डित बना दिया, इसका नाम हो गया भूतभावन। जड़को चेतन बना दिया, इसका नाम हो गया भूतभावन। दुःखीको सुखी बना दिया, इसका नाम हो गया भूतभावन, जैसे वैद्य लोग किसी वस्तुको भावना देते हैं। एक कुचिला जो कड़वा होता है—उसको भावना देते हैं—गोबरमें रखते हैं। फिर दूध, दही, घी, शहदमें रखते हैं। अब वह कड़वा कुचिला जो है, वह भावना देते-देते एक रसायन बन जाता है।

इसी प्रकार इस विश्वसृष्टिमें जिसने भावना दे-दे करके अपने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्राणोंसे जीवित किया, अपनी आवाज भर दी, चिड़ियामें कितनी मधुर, कितनी सुरीली आवाज ! अपनी हरियाली भर दी वृक्षोंमें, अपना रस भर दिया फलोंमें—वह है भूत-भावना। कोयलमें जिसने मीठी आवाज भर दी वह भूत-भावन है। जिसने सुरीली, वीणाके तारमें मीठी आवाज भर दी—उसका नाम भूतभावन है। जिसने जलको रसीला बना दिया 'रसोऽहमप्सु कौन्तेय' (उसका) नाम भूत-भावन है। सबमें भावना भर रहा है। सब जीवित रह रहे हैं। सब जान रहे हैं। सब मजा ले रहे हैं। ये कौन हैं ? यह वही है। यह हमें दीखता नहीं है। यह जादूका खेल तो दिखाता है पर जादूगर नहीं दिखता। न तं विदाथ य इमा जजान। (ऋग्वेद १०.८२.७७)। लोग बगीचा तो देख रहे हैं पर यह बगीचा है किसका ? उसको नहीं देखते—वह है भूतभावन, माने सारे जगत्का माता-पिता है, पालक-पोषक है।

कोई-कोई लोग ऐसे भी निकल जाते हैं, जिनका माता-पितासे प्रेम नहीं होता है। वे केवल माता-पिता ही नहीं हैं। डंडा मार-कर भी ठीक करनेवाले हैं। भूतेश—भूतोंके ईश्वर हैं—स्वामी हैं-ईशनशील हैं। ईश हैं—नियन्ता हैं। माता-पिताके काबूमें बालक भले हो न आवे किंतु ये तो ऐसे हैं कि सबको अपने नियन्त्रणमें-कर लेते हैं। भूतेश—कोई-कोई स्वामीसे भी विद्रोह करते हैं। भले कोई छोटे-मोटे स्वामीसे विद्रोह करे—ये तो देव-देव हैं। देव-देवका अर्थ है—सूर्यमें, चन्द्रमामें, ग्रहमें, नक्षत्रमें, तारामें जो चमक, जो प्रकाश है, ये इन सब प्रकाशोंके प्रकाशक, देवताओंके देवता—'तस्य भासा सर्वमिदं विभाति' उस परमात्माके प्रकाशसे ही यह सृष्टि प्रकाशित हो रही है। सबमें एक चमक है, उस चमकको, प्रकाशको, उस रश्मिको, उस रौनकको देखो जो सबमें भरी हुई है।

स्त्रीमें वही है, पुरुषमें वही है। परमात्मा वह तत्त्व है, जो नाम-रूपके भेदसे अलग-अलग नहीं होता। परमात्मा वह प्रेम है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

जिसमें प्रेमी और प्रियतमका भेद नहीं होता। परमात्मा वह धर्म है जिसमें मजहब नहीं होता। आचार्यमूलक जितने धर्म होते हैं सब पीछेसे चलते हैं—इन्होंने चलाया, उन्होंने चलाया। आदमीकी लिखी हुई किताब—आदमीके द्वारा चलाया हुआ मजहब—ये सब-की-सब पीछेकी चीजें हैं। परमात्मा वह धर्म है जिसको चलानेवाला कोई आचार्य नहीं—जो किसी समयमें नहीं चलाया गया। परमात्मा वह धर्म है जो भूगोलके किसी हिस्सेमें नहीं चलाया गया। वह सार्वदेशिक, सार्वकालिक है। सम्पूर्ण देवताओंका—सूर्य, चन्द्र आदिका भी—देवता है।

वह है देव-देव। 'देवानामस्मि देवः'। देवताओंका भी देवता है। सारी केनोपनिषद् देव-देवोंसे भरी हुई है। 'श्रोत्रस्य श्रोत्रम्' (केन० १.२) देव माने कान-का-कान है। 'चक्षुषः चक्षु' (केन० १.२) आँख-की-आँख है। वह प्राण-का-प्राण है, वह मन-का-मन है, वह वाणी-का-वाणी है। देव-देव वही है। कहाँ है परमात्मा? 'हमको क्या तू ढूँढ़े बंदे हम तो तेरे पास हैं'। हमको कहाँ ढूँढने जाता है? हम तो तेरे दिलमें हैं।

हम माँकी ओर न देखें पर हैं उसकी गोदमें। हम सूर्यकी ओर न देखें पर देखते हैं उसकी रोशनीमें। हम हवाको न पहचानें यह ठीक है, पर हम साँस लेते हैं हवामें। इसी प्रकार प्रत्येक शरीरमें जो चेतन है, चैतन्य है, वह अपने मूलभूत चैतन्य रूपको जाने या न जाने, वह उससे अलग होकर कभी रह नहीं सकता। वह देवताओंका भी देवता है। देवता मान लेते हैं कि जीत हमारी हुई—हमने यह चीज देखी है। दैत्य मान लेते हैं हमने यह चीज बनायी है। कर्मके द्वारा विजय प्राप्त करना और ज्ञानके द्वारा विजय प्राप्त करना। देव ज्ञानको लेकर लड़ें, दैत्य कर्मको लेकर लड़ें और दोनोंको अभिमान हुआ—हमने जीत लिया। दोनोंमें ज्योति आयी? कहांसे रोशनी आयी? 'देव-देव जगत्पते!

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आप जगत्के स्वामी हैं ! पति शब्दका अर्थं केवल मालिक नहीं होता। पति शब्द भी स्त्री-पुरुषके लिए एक सरीखा ही चलता है।

एक बार एक सभा हो रही थी। उमा नेहरूजी उसकी अध्यक्ष थीं। हमारे गाँवके पास हो रही थी। सम्पूर्णानन्दजीने उन्हें सम्बोधन किया—सभापत्नीजी ! स्त्रीके लिए सभापत्नी शब्द नहीं हो सकता। सभापति शब्द ही होगा। हँसी हो गयी। उन्होंने जान-बूझकर मजाक किया था। उनके साथ कृष्णकान्त मालवीय आये थे। पति शब्द जो है, यह पाति इति पतिः—जो सबकी रक्षा करता है, उसका नाम होता है पति। और पत्नी उसको कहते हैं जो धर्मंकार्यमें अपने पतिकी सहचारिणी हो। 'पत्युर्नो यज्ञसंयोगे (अष्टाध्यायी ४.१.३३)।' पत्नी जप करे तो पतिको उसका फल मिले। और पति कोई कर्मं करे, दान-पुण्य करे तो पत्नीको उसका फल मिले। यह पति, पत्नी दोनों मिलकर धर्मंके रथका सञ्चालन करते हैं। इसलिए पति शब्दका अर्थं केवल पुरुष नहीं होता—पति शब्दका अर्थं धर्मंरक्षक होता है।

आप जगत्के पति हैं—जगत् माने परिवर्तनशील। जितना भी पदार्थ है, उसको जगत् कहते हैं—दुनियामें सभी वस्तुएँ चल रही हैं, हिल रही हैं, उनमें परिवर्तन हो रहा है, ऐसा कुछ नहीं है—जो अचल है। एक परमाणुको यदि विखण्डित कर दें—तब भी गति रह जाती है, तब भी शक्ति रह जाती है। गति और शक्तिका लोप कभी नहीं होता। प्रलयमें भी गति रहती है, परन्तु साम्यावस्थापन्न रहती है। सत्त्व, रजः, तमः की विषम परिणति—विषम गति रहती है सृष्टिकालमें और प्रलयकालमें समगति रहती है। परन्तु गति रहती है। 'गच्छति इति जगत्'। जो व्यवहार-कालमें भी और प्रलयकालमें भी चल रहे उसका नाम होता है—जगत्। उसको मिट जाना चाहिए। क्षण-क्षण-क्षणमें मिट जाना चाहिए। परन्तु एक ऐसी वस्तु है जो अनादि कालसे अबतक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

प्रवाह कालमें नित्य इस जगत्‌की रक्षा करती है। जिसकी सत्ता, ज्ञान, आनन्दसे यह विश्व-सृष्टि बनी हुई है, उसको जगत्पति कहते हैं। पुरुषोत्तम किसको कहेंगे ? जो भूतभावन होगा, भूतेश होगा, देवदेव होगा और जगत्पति होगा—उसको कहेंगे कि पुरुषोत्तम है। और उसको कौन जानता है ? बोले—स्वयं जानता है।

स्वयमेवात्मनात्मानं वेत्थ त्वं पुरुषोत्तम।
भूतभावन भूतेश देवदेव जगत्पते॥
वक्तुमर्हस्यशेषेण दिव्या ह्यात्मविभूतयः।
याभिर्विभूतिभिर्लोकानिमांस्त्वं व्याप्य तिष्ठसि॥

१०.१५.१६

अब अर्जुन कहते हैं कि जब आपके सिवाय कोई जानता ही नहीं तो आप ही बताइये। 'वक्तुमर्हस्यशेषेण दिव्या ह्यात्मविभूतयः'। आप अपने आपको जानते हैं, तो अपनी विभूति बताइये। क्योंकि आपकी विभूतियाँ भी दिव्य हैं। असलमें अलौकिक क्या है ? जहाँ लोक नहीं हैं वहाँ क्या है ? सम्पूर्ण निवृत्त होकर—अन्यका निषेध करके—स्वस्वरूपमें स्थित होकर स्वयं अपनेको अलौकिक रूपमें अनुभव किया जा सकता है। यदि उस अलौकिकका वर्णन करना हो तो उसकी विभूतिका ही वर्णन किया जा सकता है।

यस्यावतारकर्माणि गायन्ति ह्यस्मदादयः।
न यं विदन्ति तत्त्वेन तस्मै भगवते नमः॥

भाग० २.६-३७

भागवतमें बताया कि हम लोग केवल अवतार-कर्मका ही गान कर सकते हैं। उस परमतत्त्वका सम्यक् वर्णन करके गान करें—यह शक्य नहीं है। 'न तं विदाथ न इमा जजान' ऋग्वेद (१०.८२.७) में यह मन्त्र आता है कि देखो भाई, उसको तुम नहीं जानते, जिसने यह सृष्टि बनायी है। जब-जब वह अवतार लेकर आता है, व्यक्त होकर आता है, विभवनशील होता है, उसको

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

देखो। विभूतियाँ, जिन बहत्तर विभूतियोंका आगे वर्णन है। इसमें भगवान्‌का अजन्मा-रूप नहीं है, विभव-रूप है। भगवान्‌का एक रूप होता है अजन्मा और एक रूप होता है प्राकट्यवाला—जो सामने दिखायी पड़ता है। 'अशेषेण दिव्या ह्यात्मविभूतयः। भगवान्‌की विभूति—भगवानकी संभूति। विभूतियोंका, बृहदारण्यक उपनिषद्‌में, संभूतिके नामसे वर्णन है—ईशावास्य उपनिषदमें भी संभूतिके नामसे वर्णन है।

भगवान्‌की अपनी विभूति हैं ये नैमेत्तिक नहीं हैं मायिक नहीं हैं। 'मत्स्थानि सर्वभूतानि न चाहं तेष्ववस्थितः। न च मत्स्थानि भूतानि' (९.४-५)। 'ये आत्मविभूति' हैं। कहनेका अर्थ यह है कि एक दृष्टिसे ये हैं और एक दृष्टिसे नहीं हैं। यह देखो हमारा वैभव, ये देखो चमत्कार, ये देखो जादूका खेल—अच्छा, आपका जादूका खेल, महाराज! आप ही समझाइये। पूरा-पूरा समझाइये—अशेषेण—अधूरा नहीं। एक बात और है—शेषसे प्रारम्भ करके मत सुनाइये—आत्मविभूति। शेष माने जब सृष्टिका प्रलय होता है तब बीज जो है वह शेष रह जाता है। बीजमें-से सृष्टि-वृक्ष कैसे हुआ और वृक्षमें-से बीज कैसे निकला—वह जो कार्य-कारण परम्परा है, इसके द्वारा मत समझाइये। स्वयं आत्मरूपमें ही अपना वैभव समझाइये। यह बताइये कि इस समय आप किन-किन रूपोंमें दीख रहे हैं? 'याभिर्विभूतिभिर्लोकानिमांस्त्वं व्याप्य तिष्ठसि' (१०.१६)। 'इमांल्लोकान्' ये जो दुनिया दीख रही है इसमें भगवान् क्या है? इसमें भगवान्‌की विभूति क्या है? भिन्न-भिन्न रूपोंमें भगवान्‌का दर्शन इस सृष्टिमें कैसे हो रहा है? पहले कभी आपको सुनाया होगा। मैं बालक-अवस्थामें गया अयोध्याजीमें, एक महात्माके पास। उनसे बोला—हमको भगवान्‌का दर्शन कराओ—उन्होंने पूछा कहाँसे आ रहे हो? मैंने कहा—कनक-भवनसे, सीतारामका

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

दर्शन करके आया हूँ। तो बोले कि तुमने वहाँ क्या देखा ? लाखों जिसमें भगवान् होनेपर श्रद्धा करते हैं, हजारों आदमी जिसके लिए सर्वस्व समर्पित करते हैं, सैकड़ों आदमी जिसकी सेवामें लगे रहते हैं, उसको पत्थर समझकर—देखकर आये हो और हम अब क्या भगवान्का दर्शन करावें ? डाँट दिया।

दूसरे महात्मासे कहा तो वे बोले—तुम क्या देख रहे हो ? यह सूर्य, चन्द्रमा, ग्रह, नक्षत्र ये तारे, ये धूल जिससे पृथिवी बनी है यह क्या है ? यह जल है, जिसमें रस है, यह क्या है ? अग्नि है, जिसमें तेज है, यह क्या है ? यह वायु है, जिसमें प्राण है—वह क्या है ? यह आकाश है, जिसमें सब रह रहे हैं—वह क्या है ? तुम देख क्या रहे हो ? कभी विचार किया है ? जब 'इमांस्त्वं व्याप्य तिष्ठसि'। जिन चीजोंको हम देख रहे हैं, उन चीजोंमें क्या है ? यदि इनमें तुम्हें भगवान् नहीं दीखता है तो क्या सो जानेपर भगवान् दिखेगा ?

समाधि लगानेपर भगवान् दिखेगा ? खुली आँखसे भगवान् नहीं दिखता है तो बन्द आँखसे भगवान् क्या दिखेगा ? इसका तो अर्थ हुआ कि आँखवालेको भगवान् नहीं दिखेंगे, अन्धेको भगवान् दिखेंगे। भगवान् है, भगवान् दीखता है और इन्हीं आँखोंसे दीखता है। और दीख रहा है। परन्तु हम भगवान्को पहचानते नहीं हैं। अर्जुनने कहा कि हमको वह विभूति बतावें जिनके द्वारा तुम इस लोकमें—माने इसी जीवनमें,—इन्हीं आँखोंसे, इसी नाकसे तुम देखे-सूँघे जाते हो। इसी जीभसे तुम चखे जाते हो, सो बताओ। इन्हीं त्वचासे छूये जाते हो, सो बताओ। हमारे रिश्तेदार, नातेदारके रूपमें बताओ। 'वृष्णीनां वासुदेवोऽस्मि'—ऐसे बोलो। 'पाण्डवानां धनञ्जय'—ऐसे बोलो। हमको यहीं-यहीं इसी जीवनमें इसी व्यवहारमें तुम अपने आपका दर्शन कराओ।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रवचन : ३

२-११-८१

नर-नारायण—श्रीकृष्ण-अर्जुन—एक रथपर बैठे हुए हैं। 'शरीरं रथमेव च'। यह शरीर रथ है और इसपर जीवात्मा और परमात्मा—नर और नारायण—दोनों इसी शरीरमें हैं। परमेश्वर ही शिक्षा देता है। गीतामें आप पढ़ते हैं—'आत्मैव आत्मनो बन्धुः आत्मैव रिपुरात्मनः'। आत्मा ही अपना मित्र है और आत्मा ही अपना शत्रु है। आत्मा ही आत्माको शिक्षा देता है और आत्मा ही आत्मासे शिक्षित होता है। श्रीकृष्णने अर्जुनसे कहा 'यस्त्वां द्वेष्टि समां द्वेष्टि'। अर्जुन—जो तुमसे द्वेष करता है वह मुझसे द्वेष करता है। जो जीवात्मासे द्वेष करता है वही परमात्मासे भी द्वेष करता है। जीवात्मासे द्वेष करना ही परमात्मासे द्वेष करना है।

किसी जीवसे द्वेष मत करो। न अग्रज न अन्त्यज, न शैव

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

दर्शन करके आया हूँ। तो बोले कि तुमने वहाँ क्या देखा ? लाखों जिसमें भगवान् होनेपर श्रद्धा करते हैं, हजारों आदमी जिसके लिए सर्वस्व समर्पित करते हैं, सैकड़ों आदमी जिसकी सेवामें लगे रहते हैं, उसको पत्थर समझकर—देखकर आये हो और हम अब क्या भगवान्‌का दर्शन करावें ? डाँट दिया।

दूसरे महात्मासे कहा तो वे बोले—तुम क्या देख रहे हो ? यह सूर्य, चन्द्रमा, ग्रह, नक्षत्र ये तारे, ये धूल जिससे पृथिवी बनी है यह क्या है ? यह जल है, जिसमें रस है, यह क्या है ? अग्नि है, जिसमें तेज है, यह क्या है ? यह वायु है, जिसमें प्राण है—वह क्या है ? यह आकाश है, जिसमें सब रह रहे हैं—वह क्या है ? तुम देख क्या रहे हो ? कभी विचार किया है ? जब 'इमांस्त्वं व्याप्य तिष्ठसि'। जिन चीजोंको हम देख रहे हैं, उन चीजोंमें क्या है ? यदि इनमें तुम्हें भगवान् नहीं दीखता है तो क्या सो जानेपर भगवान् दिखेगा ?

समाधि लगानेपर भगवान् दिखेगा ? खुली आँखसे भगवान् नहीं दिखता है तो बन्द आँखसे भगवान् क्या दिखेगा ? इसका तो अर्थ हुआ कि आँखवालेको भगवान् नहीं दिखेंगे, अन्धेको भगवान् दिखेंगे। भगवान् है, भगवान् दीखता है और इन्हीं आँखोंसे दीखता है। और दीख रहा है। परन्तु हम भगवान्‌को पहचानते नहीं हैं। अर्जुनने कहा कि हमको वह विभूति बतावें जिनके द्वारा तुम इस लोकमें—माने इसी जीवनमें,—इन्हीं आँखोंसे, इसी नाकसे तुम देखे-सूँघे जाते हो। इसी जीभसे तुम चखे जाते हो, सो बताओ। इन्हीं त्वचासे छूये जाते हो, सो बताओ। हमारे रिश्तेदार, नातेदारके रूपमें बताओ। 'वृष्णीनां वासुदेवोऽस्मि'—ऐसे बोलो। 'पाण्डवानां धनञ्जय'—ऐसे बोलो। हमको यहीं-यहीं इसी जीवनमें इसी व्यवहारमें तुम अपने आपका दर्शन कराओ।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रवचन : ३

२-११-८१

नर-नारायण—श्रीकृष्ण-अर्जुन—एक रथपर बैठे हुए हैं। 'शरीरं रथमेव च'। यह शरीर रथ है और इसपर जीवात्मा और परमात्मा—नर और नारायण—दोनों इसी शरीरमें हैं। परमेश्वर ही शिक्षा देता है। गीतामें आप पढ़ते हैं—'आत्मैव आत्मनो बन्धुः आत्मैव रिपुरात्मनः'। आत्मा ही अपना मित्र है और आत्मा ही अपना शत्रु है। आत्मा ही आत्माको शिक्षा देता है और आत्मा ही आत्मासे शिक्षित होता है। श्रीकृष्णने अर्जुनसे कहा 'यस्त्वां द्वेष्टि समां द्वेष्टि'। अर्जुन—जो तुमसे द्वेष करता है वह मुझसे द्वेष करता है। जो जीवात्मासे द्वेष करता है वही परमात्मासे भी द्वेष करता है। जीवात्मासे द्वेष करना ही परमात्मासे द्वेष करना है।

किसी जीवसे द्वेष मत करो। न अग्रज न अन्त्यज, न शैव

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

न वैष्णव, न हिन्दू न मुसलमान। सबके हृदयमें वही साईं बैठा हुआ है। 'सबके हृदयमें साईं बैठा कटुक वचन मत बोल रे। तोहे पीव मिलेंगे। घूँघटको पट खोल रे।' एक ही रथपर जीव और ईश्वर, अर्जुन और श्रीकृष्ण बैठे हैं और परमात्मा ही आत्माको शिक्षा दे रहा है। अर्जुनने कहा—'वक्तुमर्हस्यशेषेण दिव्या ह्यात्मविभूतयः। याभिर्विभूतिभिर्लोकानिमांस्त्वं व्याप्य तिष्ठसि'। आप अपनी दिव्य विभूतियोंका वर्णन करें। व्याकरणकी दृष्टिसे यहाँ थोड़ी-सी त्रुटि है। 'वक्तुम् अर्हसि'को कर्म होना चाहिए 'दिव्या आत्मविभूतीः कथयिस्यामि'।

व्याकरण तो ऐसे ही बनते बिगड़ते रहते हैं। यह तो आर्ष वचन है। यहाँ पाणिनिको भी चुप होना पड़ता है। व्यासकी रचना माहेश व्याकरणके अनुसार है, पाणिनीय व्याकरणके अनुसार नहीं है। अर्जुनने प्रार्थना की—जैसे शिष्य गुरुसे प्रार्थना करते हैं। 'याः दिव्याः आत्मविभूतयः, ताः अशेषेण वमक्तुर्हसि'।

कृपा करके अपनी सम्पूर्ण दिव्य विभूतियोंका वर्णन कीजिये। श्रोताके हृदयमें कितनी उत्सुकता है, कितना प्रेम है कि वह भगवान्‌की विभूतियोंको पूर्ण रूपसे सुनना चाहता है। फिर बोले भगवान्‌की विभूतियाँ तो दिव्य हैं। परन्तु विशेष, विशेष सुनावें। बड़े विनयसे 'वक्तुमर्हसि' आप वर्णन करनेकी कृपा कीजिये। आज्ञा नहीं है, आदेश नहीं है। पूरा शिष्टाचार है। विभूति क्या है? जल है, वरफ हो गया जमकर। जल है योग—भगवत्स्वरूप और उसमें जो बरफ जमा, वह है उसका वैभव। जल है—वह दूधके साथ मीठा है, दहीके साथ खट्टा है, नीबूमें वही दूसरा खट्टा है, आममें दूसरा खट्टा है, इमलीमें दूसरा खट्टा है—यह जलका वैभव है।

जल आमके बीजसे मिलकर कैसा हो गया, इमलीके बीजसे मिलकर कैसा हो गया, नींबूके बीजसे मिलकर कैसा हो गया,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

यह है जलकी विभूति। अपनी विशेषताको छोड़े बिना दूसरेकी विशेषताके साथ मिल गया। यह आपको पता है। यह देखो भगवान्‌की रचना। सबके साथ मिल गये, लेकिन उन्होंने अपनी भगवत्ता छोड़ दी—नहीं, भगवान् रहते हुए ही सबके साथ मिल गये। कह दिया मैं रस हूँ, जलमें रस हूँ—कौन-से रस हो? खट्टे हो, मीठे हो, चरपरे हो, तीखे हो, कौनसे रस हो। नहीं यह सब नहीं—मैं रस हूँ। चाहे वह खट्टा हो, चरपरा हो, मीठा हो—मृत्युका रस हो कि जीवनका रस हो। रस है भगवान्—इसीको विभूति बोलते हैं। यह है उनका वैभव। विशेष, विशेषरूपमें भवन—होना। यह होना ही विभूति है।

हमारे एक शंकरजीका लिङ्ग है—हमारे पुजारीजी कभी-कभी उनका शृङ्गार करते हैं। है तो वह लिङ्ग परन्तु जब वे भस्मका शृङ्गार करते हैं, तो उसमें नाक अलग, कान अलग, मुँह अलग, कुछ जोड़ते नहीं हैं, केवल विभूति ही ऐसी लगाते हैं कि वह लिङ्ग साकार हो जाता है। उसमें आँख-भौं हो जाती है। विच्छित्ति इसको बोलते हैं। संस्कृत भाषामें इसका नाम विच्छित्ति है। विच्छित्ति माने शोभा। जैसे स्त्रियाँ अपना बाल सँवारतीं हैं न! तो एक लट इधरको छोड़ देती हैं, एक आँखके ऊपर छोड़ देती हैं तो दो भागमें हो जानेसे सुन्दरता और बढ़ जाती है। इसी प्रकार भगवान् अपनी शोभा दिखाते हैं। कालिख लगाना सुन्दरताकी बात थोड़े हो है। लेकिन भौंहोंमें कालिख और आँखोंमें कालिख लगानेसे आँख बड़ी-बड़ी लगने लगतो है। इसोका नाम विभूति है, भस्म है। वह कोई चीज नहीं है—भस्मके द्वारा शोभा बढ़ गयी है।

भगवान्‌का जो सौन्दर्य है, उनका जो माधुर्य है, उनका जो ऐश्वर्य है, अनेक रूपमें प्रकट होकर हम लोगोंके सामने जो झलक रहा है, उसका नाम है विभूति। भगवान् शंकर अपने शरीरमें विभूति लगा लेते हैं। यह है ईश्वरको विभूति। ईश्वरने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

अपने ऊपर जो भस्म लगाया है, विभूति लगायी है, जो नाना रूप धारण किया है, उसको विभूति कहते हैं। अब देखो, मिट्टी तो मिट्टी है, पृथिवी है और जो ताँबा है, वह मिट्टी ही तो है। पीतल है, चाँदी है, सोना है यह सब पृथिवीको विभूति है। पृथिवी एक तत्त्व है, उसके साथ आप मिल सकते हैं। लेकिन पृथिवी अपना वैभव कितने रूपमें प्रकट कर रही है और जब तप जाती है तब तो और वैभव प्रकट करती है।

जब ज्वालामुखी फूटता है, जब बहुत ताप मिलता है, तब मिट्टी कोयला और कोयलेका चूरा कैसे बन जाती है? उसको कैसे छानकर निकालते हैं? मशीनपर, कोयलेपर कोयला जा रहा है—तब इसमें-से हीरा छाँट लेते हैं। हीरा क्या है? यह मिट्टीका वैभव है, मिट्टीकी विभूति है। सोनाको पुराने लोग तेजस् मानते थे। अग्निकी विभूति है। अब सोनेको भी भस्म करनेकी विधि निकल आयी है। वह भी राखकी राख ही हो जाती है। वह भी मृत्तिकाकी ही विभूति है। विद्युत एक तत्त्व है। सर्वव्यापी। इसकी विभूति क्या है? पंखा चलाना विभूति है। बल्बमें-से प्रकाश देना विभूति है। गरम करना विभूति है। ठण्डा करना विभूति है। यह सब बिजलीकी विभूति है।

यह जो विश्व-सृष्टि है। इसमें किसीमें कुछ, किसीमें कुछ—सबमें एक विशिष्ट चीज विद्यमान है। कोई अयोग्य नहीं है। सबमें कोई-न-कोई योग्यता है। हमारे गाँवसे १४-१५ मील दूरपर गंगा किनारे एक महात्मा रहते थे—वैसे तो वे ४०-५० वर्षसे रहते थे—हमलोग उनके पास गये तो उन्होंने बताया—४० वर्षमें परमात्माके विषयमें चर्चा करनेवाले केवल तीन आदमी मेरे पास आये। नहीं तो कोई रोगी होकर आता है, कोई कुछ लेने आता है। वे महात्मा घासपर नंगे बैठते थे। कोई आता तब जो भी घास उनके सामने होती उसको नोंचकर दे देते। जा, पीसकर पी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

जा। और बहुतोंका रोग दूर होता। मैंने एकदिन पूछा कि बाबा क्या करते हो? तो बोले—'सर्वंस्वं सर्वम्'। एक ही प्रकृति है वह सब रूपमें प्रकट होती है।

प्रकृतिके सब गुण सब चीजमें रहते हैं। हम संकल्प कर दे देते हैं कि भाई, इसमें तू प्रकट हो जा। इसमें रोग मिटानेवाली दवा प्रकट हो जा। इसमें टी बी. मिटानेवाली औषधि प्रकट हो जा। तो है सबमें सब, संकल्पसे वह प्रकट होती है। जिसका संकल्प कमजोर होगा—उसके द्वारा तो प्रकट नहीं हो सकती। भगवान् सत्य-संकल्प हैं और अपनेमें ही जो सारी विशेषताएँ भरी हुई हैं, उनको विभूतिके रूपमें प्रकट किया है। बोले, बाबा प्रकट तो कर दिया पर हम पहचानते नहीं। अब हमको पहचान करा दो। 'वक्तुमर्हसि' माने पहचान करा दो। पहचान भगवान् केवल शिष्योंको ही करवाते हों, सो बात नहीं है। मनुष्योंको अभिमान है कि हमको ही बताते हैं।

हमने एक जगह हमारी कुटियाके सामने देखा—एक नेवला और साँप दोनों लड़ रहे थे। साँप नेवलेको डँसनेको और नेवला साँपको काटनेको तैयार थे। जब साँप नेवलेपर अपना फण मारता तब झट वह छोड़कर थोड़ी दूरपर चला जाता और वहाँ एक घास अपने मुँहमें लेकर फिर आकर भिड़ जाता। साँपके जहरकी दवा नेवलेको भी मालूम है। हमने देखा जब कुत्तोंको अपच होता है तो वे दूब खा लेते हैं क्योंकि उनको मालूम है कि यह पाचनको औषधि है। सारिवाद्यारिष्ट जो आप लोग पीते हैं न! वह दूबका रस ही तो है? सारिवा माने दूब। सबमें यही विभूति है।

भगवान्‌की यही विभूति है कि भगवान् जीवन, भगवान्‌का आनन्द, भगवान्‌का अभेद सबमें प्राप्त है। श्रीकृष्णने कहा—अर्जुन, हमको ही जान ले तो सब विभूति जान ली गयी। अलग-अलग विभूति जानकर क्या करना है? ना, महाराज—आप अपने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

स्वरूपमें हैं तो छिपे हुए हैं। 'याभिर्विभूतिभिर्लोकानिमांस्त्वं व्याप्य तिष्ठसि'। हमको तो इस लोकमें चाहिए। हम जो देखते हैं—उसमें चाहिए। इन दृश्य पदार्थोंमें ये जो दीखनेवाली वस्तुएँ हैं, इनमें—तुम कहाँ हो? हमको दीखनेवाली चीजोंको अपनेमें बताओ। अनदेखेसे हमारी क्या दोस्ता? अनमिला साजन और अनजाना रास्ता वह नहीं। हमको यह चाहिए कि हम देखें—यह परमात्माकी विभूति है, यह वैभव है परमात्माका। हर जगह दिखायी पड़े।

'त्वं तिष्ठसि' तुम तो स्थिर हो—तुम अचल हो, सब जगह हो—सब समय हो—यह जो कहते हैं न कि सदा परमात्माका चिन्तन करो। यदि बहुत-सी चीजें होंगी और हम बहुत-सी चीजोंको देखेंगे तो बहुत-सी चीजोंकी याद आयेगी—सदा परमात्माकी याद कैसे आवेगी? सर्वत्र परमात्माकी याद कैसे आवेगी? यदि जगह अलग-अलग है और चीज अलग-अलग है और टाइम अलग-अलग है तो जो अलग-अलग चीजें हैं, उनकी भी तो याद आयेगी। जब उनकी आयेगी तो उनकी नहीं और उनकी आयेगी तो उनकी नहीं। जब सब परमात्मा होवे तो सदा, सर्वत्र और सर्वरूपमें परमात्माका स्मरण होगा। 'तद् विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः। दितीव चक्षुराततम्' (ऋग्वेद १.२२.२०)। सूर्य है योग और उसकी जो रोशनी है यह उसकी विभूति है।

जब हम लाल, पीला, काला, नीला देखते हैं तो सूर्यकी रोशनीमें देखते हैं। और सूर्यकी रोशनी ही लाल, नीली, काली, पीली होकर दिखायी पड़ती है। अब देखते हैं—सूर्यकी रोशनी और कहते हैं—हरियाली देख रहे हैं, हरी, नीली साड़ी देख रहे हैं। यह सब क्या है? कभी याद आता है कि सूर्यकी रोशनीमें सब दीख रहा है। रोशनी न हो तो लाल, पीला, काला, नीला कहाँसे दीखेगा? असलमें हम देखते हैं प्रकाश, परन्तु उपाधिके रंगको प्रकाशमें जोड़ देते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हमको किसीने बताया था कि बिजलीसे जितनी भी रोशनी होती है—शुद्ध नहीं है; सूर्यका प्रकाश जितना शुद्ध होता है उतना शुद्ध बिना रंगका अन्य प्रकाश नहीं होता। रंग होता है वस्तुओंका और हम वस्तुओंका रंग देखते हैं और जो सूर्यका शुद्ध प्रकाश है वह नहीं देखते। क्या माया है भगवान्‌की कि जो असली चीज है उसपर तो नजर जाती नहीं है और जो नकली चीज है उसको हम देख-देख करके मजा लेते हैं। ध्यान ही नहीं रहता कि सफेद कुरता देख रहे हैं कि हरी साड़ी देख रहे हैं—हरीमें हरियाली और सफेदमें सफेदी—सूर्यकी रोशनीकी है। सूर्यकी यह विभूति—एक चीजमें आकर सफेद, एक चीजमें आकर हरी दीखती है। यह जो वैभव है, इसपर हमारी दृष्टि नहीं जाती।

इसका व्यवहारमें बड़ा भारी उपयोग है। निर्द्वन्द्व होजाओ। माने परमात्माके सिवाय और कोई ज्योति है नहीं। 'ज्योतिषां ज्योतिरेकम्' (यजुर्वेदमाध्यन्दिन ३४.१)! वही वेद बोलता है। गीता बोलती है—'ज्योतिषामपि ज्योतिः' (१३.१८)। जितनी भी चीजें चमक रही हैं उसमें एक ही वस्तु चमक रही है। जहाँ हो वहाँ परमात्मा तुम्हारे साथ है। जब हो तब परमात्मा तुम्हारे साथ है। परमात्माको देखो, परमात्माकी रचनाको देखो।

एक महात्मा लखनऊमें आये थे। उनके पास एक बंगाली सज्जन अपने मनमें यह प्रश्न लेकर गये कि हम ईश्वरकी सेवामें लग जायें या जो संसारके काम हैं, उनको भी करते रहें। जब महात्माजीके पास गये प्रणाम किया और एक फूलोंका गुच्छा उन्होंने भेंट किया तब महात्माजी वह गुलदस्ता लेकर देखने लग गये। आहा, कितना बढ़िया गुलाबका फूल है—यह सफेद है, यह लाल है, यह गुलाबी है—कैसा बढ़िया है—बिना सीखे ऐसा सुन्दर सजाया नहीं जा सकता! क्या बढ़िया क्या बढ़िया!! दस मिनट वह गुलदस्ता ही देखते रहे, तो बंगाली बाबूने हाथ जोड़-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

कर कहा कि महाराज—इससे तो अच्छा होता कि मैं गुलदस्ता आपके पास न लाता तो आप मुझे तो देखते !

अच्छा, लो तुम्हारा गुलदस्ता फेंक दें—ना-ना महाराज फेंकिये मत। मैं बड़े प्रेमसे बनाकर लाया हूँ। इसके बनानेमें बहुत समय लगा है। मैंने अपने हाथसे बनाया है। अच्छा तो तुम बताओ हम क्या करें ? गुलदस्तेको देखते हैं तो तुम कहते हो—हमको नहीं देखा, और तुमको देखने लगे तो तुम कहते हो हमने बड़ी उत्तम रचना रची, इसको देखो। तो महाराज थोड़ी देर हमको देखिये, थोड़ी देर उसको देखिये। दोनोंपर आपकी नजर होनी चाहिए। महात्माजीने कहा यही तुम्हारे प्रश्नका उत्तर है—

ईश्वरकी ओर देखें कि ईश्वरकी रचनाकी ओर देखें। ईश्वरकी रचना भी देखो, काम भी करो और ईश्वरका ध्यान, स्मरण भी करो !

काम करनेसे प्रमाद दूर होता है, असावधानी दूर होती है और परमात्माका चिन्तन करनेसे बुद्धि प्रखर होती है—स्वच्छ होती है। जैसे आप अपने घरमें कोई रोशनी रखते हैं तो उसे स्वच्छ रखते हैं। नहीं तो कीड़े-मकौड़े भर जाते हैं। वृन्दावनमें रोशनी करते हैं तो उनमें कीड़े भर जाते हैं। बार-बार उसकी सफाई करनी पड़ती है। पर फिर उसमें कीड़े घुस जाते हैं। यह जो हमारी बुद्धि है न, यह हमारे जीवनकी रोशनी है। यह बल्ब है, उसको भी स्वच्छ रखना चाहिए।

एक बार जब संसारका चिन्तन छोड़कर भगवान्‌का चिन्तन करते हैं तब बुद्धि स्वच्छ हो जाती है, साफ हो जाती है। फिर इससे चाहे जो कुछ सोचो। धन कमानेकी बात सोच सकते हैं। यह मत सोचना कि बेवकूफ हैं। यदि हम अपनी बुद्धि धन कमानेमें

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

लगावें तो ठीक-ठीक समझ सकते हैं। धर्म करनेमें बुद्धि लगाओ, भोग भोगनेमें बुद्धि लगाओ, मोक्ष प्राप्त करनेमें बुद्धि लगाओ— व्यवहारकी शुद्धिमें बुद्धि लगाओ। पर आपकी बुद्धि स्वच्छ होनी चाहिए। बार-बार जब लक्ष्यका बुद्धि स्पर्श करती है तब वह स्वच्छ हो जाती है और जब बुद्धिपर वासनाका रंग चढ़ जाता है, तब वह अशुद्ध हो जाती है।

संस्कार भी इतने ही होने चाहिए जिसको हम धो सकें। यह संस्कृति, संस्कृति जो होती है—जैसे शरीरपर मैल लग गया— विकृति आगयी। अब साबुन लगाकर संस्कार किया। साबुनमें मैलको लिया और फिर उसको शुद्ध जलसे धो लो। यदि उस साबुनको लगा हुआ छोड़ दोगे—उसके धोये बिना तुम्हारे शरीरकी क्या दुर्गति होगी। एक बार तो उस पावडरके संस्कार तुम्हारे शरीरको चमका देगा। लेकिन फिर उसको धोना पड़ेगा न! ऐसे ही ये जो संस्कार, ये संस्कृतियाँ जो आती हैं—ये भी किसी विकारको धोनेके लिए आती हैं और फिर उनको धो देना पड़ता है। रोग अगर विकार है तो दवा संस्कार है। दवा जिन्दगीभर खानेकी नहीं होती—जबतक रोग मिट न जाय तबतक खानेकी होती है। रोगकी निवृत्तिके पश्चात् दवाकी आवश्यकता नहीं होती।

ये जो संस्कार होते हैं ये भी विकारकी निवृत्तिके लिए होते हैं। कोई संस्कृति अनादि, अनन्त नहीं होती। आती है जाती है। अबतक कितनी संस्कृतियाँ आयीं और चली गयीं। हमारा जो लक्ष्य है वह विकार और संस्कार, दोनोंसे निराला है। वस्तु तत्त्व है, इसलिए जगह-जगह जब उस वस्तु तत्त्वका दर्शन होता रहेगा— नाम चाहे कुछ भी हो, रूप चाहे कुछ भी हो। एक तत्त्व है उसका साक्षात्कार होना चाहिए। और कहाँ होना चाहिए? इसी जीवनमें होना चाहिए।

मरनेके बादकी बात तो पादरियोंपर छोड़ो, मौलवियोंपर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

छोड़ दो, पुरोहितोंपर छोड़ दो। ये पुरोहित संस्कृति और मौलवी संस्कृति और पादरी संस्कृति, ये लामा संस्कृति, अरहन्त संस्कृति, शून्य संस्कृति—ये तो बीच-बीचमें आती हैं और चली जाती हैं। इनमें जो एक है उसपर ध्यान दो। लोग बदलते हैं पर वह नहीं बदलता। 'याभिर्विभूतिभिर्लोकानिमांस्त्वं व्याप्य तिष्ठसि'। सारी दुनिया बदल गयी।

एक बार नीरज आये थे वे कविता सुना रहे थे। 'सपने मिट-मिट जाते हैं—जीवन नहीं मिटता है'। यह विकृतियाँ, संस्कृतियाँ मिट जाती हैं, परन्तु जो सच्चा जीवन है—परमात्मा, वह कभी मिटता नहीं है। यह सब संस्कृति, विकृति सपनेकी है। इनमें कहीं फँसो मत। निर्द्वन्द्व होकर आगे बढ़ो। 'चरैवेति चरैवेति'।

जो छूटे उसको छूटने दो, जो टूटे उसको टूटने दो, चलते जाओ। आज भूखे हो, कल साग मिलेगा। निराश मत हो जाओ। परमात्मा सर्वत्र परिपूर्ण है। यह बात बतानेका अर्थ ही यह है कि हमारे जीवनमें कहीं नैराश्य, कहीं उदासीनता नहीं आनी चाहिए। सर्वत्र परमात्मा तुम्हारे साथ है। आगे चलो। पीछे लौटकर देखनेकी कोई जरूरत नहीं है। 'आगे बढ़कर पीछे हटना नहीं काम मर्दानोंका'। हमारे आल्हा गाते हैं न! हमारे गाँवमें गाते हैं—'छमछम-छमछम लेजा बाजे। चम-चम कूके परवा'। बढ़ते चलो, बढ़ते चलो। यह विभूतिका वर्णन आपको अटकानेके लिए नहीं है, भटकानेके लिए नहीं है। ये आपको खटकानेके लिए नहीं है। इसका हमारे जीवनमें बहुत बड़ा उपयोग है। अच्छा बताओ महाराज—

वक्तुमर्हस्यशेषेण दिव्या ह्यात्मविभूतयः।
याभिर्विभूतिभिर्लोकानिमांस्त्वं व्याप्य तिष्ठसि॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

कथं विद्यामहं योगिंस्त्वां सदा परिचिन्तयन्।
केषु केषु च भावेषु चिन्त्योसि भगवन्मया ।।

अर्जुनको संबोधनका कुछ शौक है। जैसे कोई बात कहते हैं तो बार-बार सर-सर-सर बोलते हैं। बंगाली लोग बार-बार महाशय बोलते हैं। अर्जुनको श्रीकृष्णको पुकारनेका शौक है--कि कहीं दूसरी ओर न देखने लग जायँ, कहीं दूसरी बात न सोचने लग जायँ, कहीं हमारी बातपर ध्यान न दें, उपेक्षा कर दें। इसलिए बार-बार बुला लेता है। योगिन्—आप तो बड़े योगी हो—महायोगी हो—'कथं विद्यामहं—योगिंस्त्वां सदा परिचिन्तयन्'। योग शब्दका अर्थ है मिलना। ये परिवार हमारे अन्दर इतने घुल-मिल गये हैं कि हम उनको देख नहीं पाते हैं। एक महाराजा हैं। वह अपने कर्मचारियोंके साथ काम करने लगते हैं तो उनके साथ ऐसा हँसते, ऐसा बोलते हैं कि कर्मचारी भूल जाते हैं कि यह तो महाराजा हैं।

एक सेठ चुपचाप मुँह बनाये बैठे रहते थे खाटपर कई बार देखा वे बिलकुल चुप। मैंने उनसे पूछा तुम इतना मुँह बनाये क्यों बैठे हो? हँसते क्यों नहीं? तो बोले कि मैं हँसने बोलने, खेलने लगूँगा तो ये छोटे लोग जो हमारे साथ रहते हैं--ये माँगना शुरू कर देंगे। कोई माँगे नहीं, इसके डरसे वे हँसते नहीं थे। अरे भाई, माँगे तो तुम्हारी इच्छा हो तो देना। तुम्हारी इच्छा हो तो मत देना। इसके लिए चौबीसों घंटे मुँह बनाकर रखनेकी क्या जरूरत है? जरा बत्तीसी खिलने दो ना? योग माने जो सबसे मिल गया हो—आपने अपने आँखकी पुतली कभी देखी है? शीशेमें नकली पुतली देखी होगी।

लोग कहते हैं हम भगवान्‌को देखें नहीं तो मानें कैसे? आपकी आँखकी पुतली आपने कभी देखी? है न? आप पुतली देखते नहीं हो पर आँखकी पुतलीकी वजहसे ही सबको देखते हो।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

भगवान् तो आपकी आँखोंके तारे हैं। ये प्यारे-प्यारे, ऐसे नन्ददुलारे, ये आँखोंके तारे, आँखकी पुतली है। लेकिन सब रूपके साथ वह पुतली ऐसी मिल गई है कि हम रूपको तो देख लेते हैं और देखनेवाली पुतलीको नहीं देखते हैं। हम भगवान्‌को कैसे पहचानें ? वे सबके साथ जुड़ गये। और इतने जुड़ गये—माँ बन गये, बाप बन गये, भाई बन गये, बेटा बन गये, पति बन गये—ऐसे बने वैसे बने। विभूतियोंका स्वरूप है। कोई सम्बन्धसे है, कोई निर्धारणसे है। कोई अपने उत्तमत्वसे है और कोई उत्तमत्व प्रयोजक है। जड़-चेतनका तो कोई विवेक ही नहीं है।

पर्वतोंका वर्णन करने लगे तो बोले—'पर्वतानां हिमालयः' (१०.२५)—मेरे बाबा, यह पत्थरकी बरफकी ढेर तुम हो ? हाँ हम ही हैं। कुछ तो विचार करके बोलो बाबा, अपनेको पहाड़ बता रहे हो। बरफका ढेर बता रहे हो अपनेको ? बोले—हम पीपल हैं—अपनेको पेड़ बताया। दूसरा कोई कह दे कि तुम पेड़ हो, तो आदमी नाराज हो जाता। तुम पहाड़ हो—अगर मोटा आदमी हो तो जरूर चिढ़ जायेगा। 'पर्वतानां हिमालयः' मैं हिमालय हूँ। 'सर्पाणामस्मि वासुकिः १०.२८—मैं साँप हूँ।

भला बताओ तो यह कोई बड़प्पनकी निशानी हुई ? वे साँप भी हैं, वे पेड़-पौधा भी हैं, वे पहाड़ भी हैं—कहीं उत्तमताकी दृष्टिसे भगवान्‌ने अपनेको बताया, कहीं उत्तम बनानेवालेकी दृष्टिसे बताया। जितने जलजन्तु हैं, उनमें मैं वरुण हूँ। वरुणको तो किसीने देखा नहीं। मगरको तो देखा है, घड़ियालको देखा है, जलजन्तु देखे हैं, चिड़िया देखी हैं। इनका जो अदृश्य नियामक है, वह मैं हूँ—ऐसा भगवान्‌ने कहा। यह जो भगवान्‌की विभूति है इसका अर्थ ही है कि आप किसीका तिरस्कार मत कीजिये। सबमें भगवान्, सब रूपमें भगवान्। अच्छा तो आओ, इनका ध्यान करें—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

'सर्पाणामस्मिवासुकिः'

आओ वासुकिका ध्यान करें—पीपलका ध्यान करें, हिमालयका ध्यान करें। नहीं, ये उपास्य नहीं हैं। ये उनकी विभूतियाँ हैं। ये जो मरने-जीनेवाले प्राणी हैं, उनमें परमात्माका ध्यान न करके नित्य रूपमें परमात्माका ध्यान किया जाता है। यहाँ विभूति बताते-बताते श्रीकृष्णने अर्जुनको भी विभूति बता दिया है। 'पाण्डवानां धनंजयः (१०.३७)—वृष्णीनां वासुदेवोऽस्मि (१०.३२)। मैं भी विभूति हूँ और तुम पाण्डुनन्दन भी विभूति हो। गुरुजी ही विभूति नहीं हैं, चेला भी विभूति है। ये सब आचार्य अपनेको भगवान् या भगवान्का रिश्तेदार बताते हैं। कोई अपनेको सुदर्शन या कोई अपनेको चक्र बताता है, कोई अपनेको शेष बताता है। लेकिन अपने चेलेको कोई अपनी विभूति नहीं कहता। यही आचार्यता अधूरी हो जाती है। हमको बोलनेमें किसीका डर नहीं है। असलमें आचार्यता वहाँ है—जो मैं हूँ सो ही तुम हो। अपनेसे छोटा करके किसीको देखना, इसका नाम आचार्यता नहीं है। 'वृष्णीनां वासुदेवः' ठीक है—'पाण्डवानां धनञ्जयः' यह भी ठीक है। जो मैं हूँ सो तुम हो।

जैसे मेरा व्यक्तित्व विभूति वैसे तुम्हारा व्यक्तित्व भी एक विभूति। 'कथं विद्यामहं योगिंस्त्वां सदा परिचिन्तयन्'। मैं चाहता हूँ कि सदा तुम्हारा 'परि' माने परितः, सब जगह और 'सदा' माने सब कालमें और 'परि' माने सब देशमें और 'त्वां' माने तुमको। चिन्तन करनेके लिए एक ही वस्तु हो—चाहे काम कोई हो, चाहे स्थान कोई हो। चाहे नामरूप कोई हो। चिन्तन करनेके लिए वस्तु एक हो। मैं कैसे तुम्हें पहचानूँ? बड़ा भारी परदा ढककर हमारे सामने आये हो। अनजाना बने बैठे हो। आपमें आप छिपे, परदा करके बैठे। वह कहो चाहे तुम कहो, यह कहो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

चाहे मैं कहो, वस्तु तो एक ही है। यह ऊपरकी खोल, अलग-अलग परदेके भेदसे दृश्यका भेद हो रहा है, यह मेक-अपके भेदसे व्यक्तिका भेद हो रहा है। कभी बाल मुड़ाकर आगये तो कभी बाल लगाकर आगये। आदमी तो वही है, कभी मूँछ लगा ली, कभी मूँछ उड़ा दी।

वस्तु बिलकुल एक हैं तभी 'सदा' और 'परि'—उसका चिन्तन हो सकता है। जैसे एक योगी अनेक रूप धारण कर ले, अनेकमें व्याप्त हो जावे, परमात्मा भी वैसा ही विभिन्न रूपोंमें विद्यमान है। परमात्मा वह नहीं जो सातवें आसमानमें रहता है—जिसको मोहम्मदने भी नहीं देखा, वह निराकार सातवें आसमानमें रहता है। वे खुदा—केवल परचे लिख-लिखकर आये। जिसको ईसाने भी नहीं देखा कि वह वस्तुत: क्या है। जिस निराकारको किसीकी भी आँख नहीं देख सकी—हिन्दू हो, मुसलमान हो, शांकर हो, रामानुज हो—जिसको कोई दृश्य नहीं बना सका, उसका सब जगह सब समय हम चिन्तन कैसे करें? 'केषु केषु च भावेषु चिन्त्योऽसि भगवन्मया'। किन-किन भावोंमें अधिकरणोंमें उनको देखें?

आप एक बात पर ध्यान दें। एक वस्तु है उसको सत् बोलेंगे परन्तु वही जब बदलती रहेगी—भवनशील होगी तब उसको भाव कहेंगे। भाव माने जो बदलता हुआ विद्यमान; जैसे फिल्ममें चित्र बदलता है, वैसे। एक चित्र एक मिनट नहीं रहता वह। इतनी शीघ्रतासे बार-बार नये-नये चित्र आते-जाते हैं कि मालूम पड़ता है कि एक है। भाव माने होनेवाला। 'है' एक होता है और 'भाव' अनेक होते हैं। 'अस्ति' है, भाव माने होना। जो है वह तो सत्य है और जो होना है, वह परिवर्तनशील है। यह दुनियाँ बदल रही हैं। किसीके रोके न रुकी न रुकेगी। बड़े-बड़े आचार्य हुए और बड़े-बड़े अवतार हुए। दुनियाँमें क्या रह गया?

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

भगवान् रामने जिस धर्मकी स्थापना की थी आज वह पोथियोंमें लिखा रह गया है। और श्रीकृष्ण जिस धर्म-स्थापनके लिए आये थे, वह आज दुनियाँमें ढूँढनेसे कहाँ मिलता है? इसीको बोलते हैं 'भाव'—यह भवनशील है। 'भाव'—इस भाव शब्दमें प्रत्यय है अथवा अधिकरणमें प्रत्यय है। जो चीजें होती हुई दिखती हैं इनमें एक है। आइये, उसका चिन्तन करें—

हमें अपना दिल बनाना है—वस्तु नहीं बनानी है। दुनियाँमें वस्तु बनाकर कोई पार नहीं पा सका है। ब्रह्माको भी सन्तोष नहीं होता था। एक सृष्टि बनायी। फिर, अरे गलती हुई; फिर बनानेवाले शरीरको—मानको—ही तोड़ दिया। भागवतके तीसरे स्कन्धमें है—बहुत मजेदार है। एक चीज बनायी और छोड़ दी—फिर बनानेवाले भावको ही छोड़ दिया। फिर दूसरा भाव बना लिया। फिर उसमें भी संतोष नहीं; उसको भी छोड़ दिया। यह बहना है—इनमें भाव आता है, जाता है। अब कहो कि हम एक ही भावको बनाकर रक्खेंगे—तो पत्थर बनाना चाहते हो? भाव बदले, तुम मत बदलो। भाव बदले, परमात्मा न बदले। यह जड़ता जीवनमें आनेकी जरूरत नहीं है। जितना नया-नया आविष्कार हो, उसको स्वीकार करो। जितनी नयी-नयी सृष्टि बने उसको स्वीकार करते चलो। देखो, हम उसकी परम्पराके हैं, जिसमें नन्दबाबा जैसे बुड्ढे और कृष्ण जैसे सात बरसके बालक हैं। और पीढ़ी-दर-पीढ़ीसे इन्द्रकी पूजा चली आयी।

भावको स्वीकार करना चाहिए। 'भावेषु'का अर्थ है 'परिणामेषु'। 'केषु-केषु भावेषु'। भाव बहुत हैं और एक-एक भाव भी परिवर्तनशील है। उनमें हम आपका चिन्तन कैसे करें? यह भी वही, यह भी वही। फिर कहीं रुकनेकी जरूरत नहीं, चलते चलो, चलते चलो, देखते चलो। वही है—'केषु-केषु च भावेषु चिन्त्योऽसि भगवन्मया'। 'योगिन्'का अर्थ है, सबमें मिले हुए हो और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

'भगवान्'का अर्थ है—बड़े ऐश्वर्यशाली हो और बड़े सुन्दर, बड़े मधुर हो। आप जहाँ देखोगे—वहाँ भगवान्की मुस्कान मिलेगी। जहाँ देखोगे वहाँ उनकी प्यारभरी चितवन मिलेगी। वहाँ तुम्हारे जीवनके लिए एक नया सन्देश मिलेगा, एक नयी प्रेरणा मिलेगी। विभूतिका अर्थ है—यह संसार भगवान्का वैभव है। आपके पास ऐसा कोई कम्प्यूटर है, जो गणना करके बता दे कि आगे सृष्टिमें कितने परिवर्तन होंगे और कितने परिवर्तन हुए हैं? परिवर्तन होते रहते हैं और उसमें जो एक सत्य है, एक परमात्मा है उसका चिन्तन होता रहता है।

विस्तरेणात्मनो योगं विभूतिं च जनार्दन।
भूयः कथय तृप्तिर्हि शृण्वतो नास्ति मेऽमृतम्॥

अमृत ही कथा—यह कौन-सा अलङ्कार है—साहित्यिक लोग इसका पता लगावें। 'शृण्वतो नास्ति मेऽमृतम्'—'अमृतं शृण्वतः मे तृप्तिः नास्ति'। मैं अमृतको सुन रहा हूँ और मुझे तृप्ति नहीं है। वाक्यका अर्थ क्या है? तृप्ति नहीं—अमृत सुन रहा हूँ। अमृत सुननेकी चीज नहीं होती, पीनेकी होती है। और सुनना वाक्यका होता है, अमृतका नहीं होता। तृप्ति नदारत, पीते रहे, पीते रहे, परन्तु प्यास ज्यों-की-त्यों बनी रही। आओ, थोड़ा विस्तारसे इसको सुनावें। योग है 'अस्ति' और विभूति है 'भवति'—है, होता है। है तो भगवान् है और होता है—उसका वैभव है और यह सब कौन होता है? वही एक था, भवति द्विधा भवति, त्रिधा भवति—यह उसकी विभूति है।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

प्रवचन : ४

३–११–८१

वक्ता संक्षेपमें बोलना चाहता है, श्रोता विस्तारसे सुनना चाहता है। इससे श्रवणमें जो रुचि है, वह प्रकट होती है। 'विस्तरेणात्मनो योगं विभूतिं च जनार्दन। भूयः कथय।' फिरसे कहो और विस्तारसे कहो। इससे श्रवणमें श्रद्धा, श्रवणमें रुचि प्रकट होती है। श्रोताका यह विशेष गुण है। यदि वह कह दे बहुत लम्बा मत करो—अरे, तुमने तो दुहरा दिया—बारबार वही बात बोलते हो। उससे श्रोताकी अश्रद्धा और अरुचि प्रकट होती है। श्रोतामें तीन गुण होने चाहिए। एक तो वह श्रद्धालु हो, दूसरे चित्त एकाग्र हो और तीसरे मननशील हो। श्रवणके तीन अंग हैं। यदि सुनकर विचार न करे तो बैलने जैसे भूसा खा लिया, वैसे खा लिया उसने। वस्तुतः श्रवण ही मुख्य साधन है, ज्ञान-प्राप्तिका साधन है। सामने दीखती हुई चीज भी अगर बतायी न जाय कि वह क्या है तो उसका ज्ञान नहीं होता। लाल, काला, पीला आँखसे जान सकते हो और परोक्ष जो वस्तु है वह कैसे ज्ञात हो?

जैसे पूरबका आदि कहाँ है? पश्चिमका अन्त कहाँ है? यदि इसकी कल्पना करने लगो तब भी तुम्हें मालूम नहीं पड़ सकता। हमारे जीवनका प्रारम्भ कहाँसे और अन्त कहाँ है? आँख बन्द करके चाहे कितनी भी कल्पना करो, न इसका आदि-अन्त कभी मिला है, न मिलेगा। और खुली आँखसे देखो तो जहाँ तुम बैठे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

हो, वहींसे पूर्व-पश्चिम प्रारम्भ होता है और वहीं पूर्व-पश्चिमका अन्त है। जहाँ-जहाँ तुम रहोगे वहाँ पश्चिमकी आदि भी रहेगी और अन्त भी रहेगा। ऐसे जीवनका आदि और जीवनका अन्त यदि ढूँढ़ने जाओ तो ढूँढ़े नहीं मिलेगा। जहाँ तुम हो, वहीं आकृतियोंके बीजका आदि भी है और अन्त भी है। आत्मज्ञानसे जन्म-मरणकी निवृत्ति हो जाती है और आकृतियोंका आदि अन्त ढूँढ़नेसे अज्ञान ही मिलता है।

अब आओ मनन करें। मनन उत्पत्तिके द्वारा भी होता है और उपपत्तिके द्वारा भी होता है। किससे क्या चीज बनती है आप प्रयोगशालामें देखेंगे। हम लोगोंकी प्रयोगशाला हमारे साथ रहती है। शान्त बैठे। फिर हलचल हुई। गरमी हुई। पसीना आया। फिर माटी हो गयी। माटीके मूलमें पसीना—पसीनेके मूलमें गरमी, गरमीके मूलमें हलचल और हलचलके मूलमें शान्ति। यह है सृष्टिकी उत्पत्तिका मनन। पहले गाढ़ सुषुप्ति। फिर नींद टूटी, होश आया, इसी प्रकार परा प्रकृति और बुद्धिका जागरण—फिर मैं कौन हूँ—कहाँ हूँ ? देश, काल, वस्तुका युक्तिके द्वारा, उपपत्तिके द्वारा, मनन किया जाता है। सारी वस्तुएँ अपने अभावमें ही दीखती हैं। दोनों उँगली दीखती हैं, जब दोनों उँगलीके बीचमें उनका अभाव है। शब्द, अक्षर तब सुनाई पड़ते हैं जब एकके बाद दूसरे अक्षरके उच्चारणमें थोड़ा अवकाश हो। कोई भी वस्तु अपने अभावसे ही दिखायी पड़ती है। इसलिए अपने आत्माको जाननेके लिए योग करना पड़ता है।

अर्जुन सरल बुद्धिसे प्रश्न करते हैं—आप अपना योग और विभूति बताइये। भगवान्ने अपने योग और विभूतिके ज्ञानकी बहुत प्रशंसा की—ललचाया। लोभ भी उत्पन्न करना चाहिए। हमारे एक महात्मा कहते थे यदि मनुष्यके मनमें लोभ न हो और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

भय न हो तो कर्ममें उसकी प्रवृत्ति ही नहीं हो सकती। किसीको भी काममें लगाना हो तो थोड़ा ललचाना पड़ता है। इससे तुम्हें यह लाभ होगा और नहीं करोगे तो—भय बताना पड़ता है तुम्हारी हानि होगी। हानिसे बचनेके लिए और अभीष्ट वस्तुकी प्राप्तिके लिए, भय और लोभसे, मनुष्यकी प्रवृत्ति होती है।

अर्जुनने प्रश्न क्यों किया ? भगवान्‌ने ललचा दिया।

> एतां विभूतिं योगं च मम यो वेत्ति तत्त्वतः।
> सोऽविकम्पेन योगेन युज्यते नात्र संशयः॥ १०.७

अरे अर्जुन, मेरे योग और विभूतिको जो तत्त्वतः जान लेता है। वह योगसे युक्त हो जाता है। तत्त्व उसको कहते हैं जिसमें नाम-रूपकी कल्पना न की गयी हो। नाम-रूपकी कल्पनाके पूर्व जो स्थिति होती है उसे तत्त्व कहते हैं। जैसे ये कंगन हैं, ये हार हैं, ये कुण्डल हैं—जब अलग-अलग शक्ल नहीं बनायी गयी होगी और अलग अलग नाम नहीं रखे गये होंगे, तो पहले सोना था और सोना क्या है—सिल्ली है—चूरा है, द्रव है। अन्तमें स्वर्णकी एक ऐसी अवस्था मिलती है जहाँ वह मुझसे अलग नहीं मालूम पड़ेगा। स्वर्णका, मृत्तिकाका तत्त्व क्या है ?

अब अविकम्प योगकी चर्चा करें। इस योगका नाम गीतामें ही है।

> सोऽविकम्पेन योगेन युज्यते नात्र संशयः।

आओ, हमारी विभूतिको जानो और हमारे योगको जानो तो हमारा-तुम्हारा ऐसा योग होगा, ऐसा मिलन होगा, हम दोनों ऐसे मिल जावेंगे कि उसमें कभी विकम्प नहीं होगा, कभी भूकम्प नहीं आवेगा। कभी दोनोंकी धड़कन अलग-अलग नहीं चलेगी। हम दोनों एक हो जावेंगे। 'अविकम्पेन योगेन।' और योग वह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

होता है जो आता है और जाता है। आसन या प्राणायाम या प्रत्याहार किया, मनको एकाग्र किया। थोड़ी देरके लिए समाधि लग गयी। यह समाधि आती है और चली जाती है। इसलिए महात्मा लोग समाधिको पसन्द नहीं करते। हमें तो ऐसी चीज चाहिए जो अपना स्वरूप हो। न कहीं अलगसे आवे, न कहीं हमको छोड़कर जावे। तब अविकम्प योग, कम्पनरहित योग, अचल योग प्राप्त होगा।

भगवान्‌के मिलनेकी इच्छा बहुत बढ़िया है—जैसे भगवान् सृष्टि, स्थिति, प्रलयमें रहते हैं—ये चीज बना ली, इसकी स्थापना कर दी, इसको मिटा दिया। जैसे 'बैठा बानिया क्या करे ? इस कोठेका धान उस कोठे करे।' ऐसे भगवान् हर समय काममें लगे रहते हैं कभी निकम्मे नहीं रहते। एक जगह सृष्टि हो रही है, एक जगह प्रलय हो रहा है। एक जगह ब्रह्माण्ड बन रहा है, दूसरा फूट रहा है। सूर्य-चन्द्रमा निरन्तर चल रहे हैं। अविकम्प योगका अर्थ होता है—सब कुछ करते हुए भी विचलित नहीं होता।

जिसने परमात्माके साथ अपना सम्बन्ध जोड़ लिया—जैसे हृदय एक बल्व है—इसका मूलभूत विद्युत्से जो जोड़ना है—उसको योग बोलेंगे। पावरहाउसके साथ जो अपना रिश्ता है वह जब टूट जायगा तो हम निकम्मे हो जायेंगे। पावरहाउसके साथ कनेक्शन बना रहेगा तो हमें कभी कोई नीचा नहीं दिखा सकता। वह प्रदीप्त अन्तः दृष्टि बनी रहेगी। किसी देशमें रहो, किसी समयमें रहो, किसी परिस्थितिमें रहो, बिलकुल तार-से-तार मिला हुआ है। इसीको 'अविकम्प योग' कहते हैं। ईश्वरका ज्ञान अपने ज्ञानमें उतरता रहे। ईश्वरकी शक्ति अपनी शक्तिमें उतरती रहे। ईश्वरका अनन्त जीवन अपने जीवनके साथ सम्बद्ध रहे। इसका नाम है 'अविकम्प योग'।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

यह जो दसवें अध्यायमें विभूति और योग दोनोंका वर्णन है वह हमारे इस व्यक्तिगत जीवनको—परिच्छिन्न जीवनको—जो कतरा हो रहा है—एक कतरेको दरियाके साथ एक करनेका नाम 'अविकम्प योग' है। एक बल्वको मूलभूत शक्तिके साथ जोड़ देनेका नाम अविकम्प योग है। काम करो परन्तु ईश्वरसे जुड़कर काम करो।

सोऽविकम्पेन योगेन युज्यते नात्र संशयः।

ईश्वरका ऐश्वर्य, ईश्वरका वीर्य, ईश्वरका तेज, तुम्हारे जीवनमें प्रकट हो जावेगा। यह योग निकम्मेपनका नाम नहीं है। शुकदेवजीका वचन है—जब मैं बोलता हूँ तो भगवान् मेरी जीभ-पर आकर बैठ जाते हैं। जीभ तो होती है निमित्त और बोलती है वह अनन्त शक्ति। उसको हम छोटा बनानेका प्रयास तब करते हैं जब हम उसको किसी जातिमें, किसी मजहबमें, किसी भूगोलके एक हिस्सेमें, किसी परिस्थितिमें किसी मध्यकाल या वर्तमानकालमें जोड़ देते हैं। तब हम उस शक्तिका जो विशाल रूप है, उसको सीमित बना देते हैं। अतः इसे परमात्माके साथ जोड़ दो। इसको योग कैसे बताया?

मय्यासक्तमनः पार्थ योगं युञ्जन्मदाश्रयः।
असंशयं समग्रं मां यथा ज्ञास्यसि तच्छृणु ॥ ७.१

दो ओरसे जोड़ो—एक आसक्ति और एक आश्रय। आपका एक मुनीम है—सेठका आश्रय लेता है। आश्रय है सेठका और आसक्ति है किससे? अपनी स्त्रीसे, पुत्रसे। उसका जीवन बँट गया—एक ओरसे लेता है, दूसरी ओर देता है।

'योगं युञ्जन्'का क्या अर्थ हुआ? जहाँसे लेना, उसीको देना।

मय्यासक्तमनाः पार्थ योगं युञ्जन्मदाश्रयः।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

भगवान्‌से ही प्रीति है—सर्वात्मा प्रभुसे प्रेम है और सर्वात्मा प्रभुका आश्रय है। योग जुड़ गया। भक्तने भगवान्‌से लिया और भगवान्‌को दिया। प्रीति है तो भगवान्‌से और आश्रय है तो भगवान्‌का। इसका नाम होगया 'योग'। आप अपनी प्रीतिको भी तौलो और सहाराको भी तौलो। यदि दोनों एक होंगे तो आपका योग अविकम्प होगा। अविचल—योगका अर्थ हो जायेगा और अगर दो होंगे तो कभी दिल इधर जायेगा, कभी दिल उधर जायेगा। झूलेमें रहेंगे। झूलेका भी एक मजा होता है। वह दूसरा मजा है। लेकिन वह कभी दाँयें है कभी बाँयें है। कभी सामने है, कभी पीछे। और यह योग स्थिर है।

ब्रजनाथ झुलाओ सारी रैन आओ प्यारे।

हमारे हृदयके झूलेपर बैठ जाओ और मैं दिनरात तुमको झुलाता रहूँ : यह 'अविकम्प योग' है। सारी रैन माने सारी रात—सम्पूर्ण जीवन। झुलाओ माने भगवान्‌के साथ खेलो। खेल उनसे खेल रे मन! एक योग यह है। दूसरा योग कहाँ है? दसवें अध्यायमें है—विभूति योगमें। सातवें अध्यायके अन्तमें यह बात बतायी गयी कि—

साधिभूताधिदैवं मां साधियज्ञं च ये विदुः। ७.३०

पहचान लो भगवान्‌को—सूर्य, चन्द्रमा आदि अधिदैवके रूपमें भी वही हैं। पृथिवी, जल, अग्नि आदि अधिभूत रूपमें भी वही है और मन, बुद्धि आदि अध्यात्म रूपमें भी वही है। सब परमात्माका स्वरूप हैं, निर्द्वन्द्व है। कहीं हिचकनेकी कोई बात ही नहीं है। बेखटके चले चलो।

आप लोगोंको शायद सुनाया हो! एक बार हमने दिल्लीसे हरिबाबाके बाँधकी यात्रा की। सेकण्ड क्लासका टिकिट था—सेकण्ड

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

क्लास उस ट्रेनमें था ही नहीं। हमने कहा 'हिचको मत' फस्टं क्लासमें चलकर बैठो। फिर उन दिनों हमारे साथ कोई थे, वे नलका पानी नहीं पीते थे। वे चले गये कूएँपर पानी लेने। गाड़ी चल पड़ी। मैंने कहा हिचको मत जंजीर खींच लो। न मेरे पास पैसा था, न कोई साथी था, न टिकिट था—क्या करते? टिकिट कलेक्टर आया—टिकिट लेकर चला गया। एक-दो स्टेशन बाद आकर दे गया। ट्रेनसे उतरे तो कोई लेने ही नहीं आया और शाम हो गयी थो। हमने कहा—'हिचको मत' चलो।

वैलगाड़ी जारही थी; उसके मालकिनने आकर हाथ जोड़ा महाराज, आप बैठ जाइये। ना बाबा, तुमलोग स्त्री हो तुमलोग वैलगाड़ीसे चलो। हम पैदल चलते हैं। हमारा सामान तुम ले लो। फिर पीछेसे दूसरी अनजाने आदमीकी बैलगाड़ी आयी और उसने हमको पहुँचा दिया। वहाँ गया तो हमारे लिए जो कुटिया बनायी गयी थी, उसमें ताला लगा हुआ था। मैंने कहा 'हिचको मत'। रातमें बारह बजे ताला तोड़ दिया। हाथसे खींचा सो टूट गया। 'जाके मनमें अटक रही सो ही अटक रहा'। अटकोगे तो भटक जाओगे। 'चरैवेति'—चलते जाओ। दूसरा भगवान्‌का योग क्या है?

मत्स्थानि सर्वभूतानि न चाहं तेष्ववस्थितः।
न च मत्स्थानि भूतानि पश्य मे योगमैश्वरम्।
भूतभृन्न च भूतस्थो ममात्मा भूतभावनः॥ ९.४-५

योग क्या है? अद्भुत योग है। भगवान् कहते हैं—सब मुझमें हैं। जैसे सब घड़े माटीमें हैं। शक्ल-सूरत बननेपर भी घड़े माटीसे अलग नहीं हो सकते। ये सब अलग-अलग शक्ल-सूरत बनी हैं। हमसे लोग पूछते हैं कि जन्म कैसे होता है? पादरी बताते हैं कि जीव स्वर्गमें कैसे जाता है, नरकमें कैसे जाता है?

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

पुरोहित, मौलवी बताते हैं कि जन्म-मरण कैसे होता है। जन्म-मरणसे छूटें कैसे ? हम जो जन्म-मरणकी कल्पनामें भटक गये हैं, अटक गये हैं। अपनेको तो देखा नहीं—आकृतिमूलक अनुमान करते हैं। सामने प्रश्न यह है कि इसी जीवनमें जन्म-मरणसे मुक्ति कैसे हो ? हम जीते रहें, हम काम करते रहें, हम सुखी रहें, हम जानते रहें और जन्म-मरणसे मुक्त हों। मुक्त करनेवाला हमारा 'सन्त-विभाग' 'फकीरी विभाग' विभूति-विभाग है। जन्म-मरणके बन्धनमें आपको डालनेवाले नहीं हैं, छुड़ानेवाले हैं।

हमने श्रीउड़िया बाबाजीसे पूछा—पुनर्जन्म किसका होता है ? क्यों होता है नहीं पूछा। यदि तुम क्यों पूछोगे तो उसका जबाब दूसरा है। कैसे होता है, पूछोगे तो उसका जबाब दूसरा है। जन्म-मरण किसका होता है, इसका जबाब दूसरा होता है। श्रीरामसुखदासजी महाराज भी थे। मैं मौन था, इसलिए लिखकर पूछा—सन् ३६ की बात है। मैंने कह दिया कि मुझे यह मत बताइये कि यदि जन्म नहीं होगा तो इस कर्मका फल क्या होगा ? यह भी मत बताइये कि ईश्वरमें पक्षपात या निर्दयता होगी। यह भी मत बताइये कि १७ तत्त्वका लिंग शरीर, वासनाके कारण जन्म होता है। हमको तो बताइये वह तत्त्व—वह चेतन वस्तु, जिसका जन्म-मरण होता है।

बाबा बोले—बेटा, तुम्हारा काम लोगोंको जन्म मरणसे छुड़ानेका है, जन्म-मरण सिद्ध करनेका नहीं है। तुम तो यह कहो कि इस जन्मका बन्धन भी तुम्हारे नहीं है। पूर्व-पूर्व जन्मके बन्धन होंगे कि उत्तर-उत्तर जन्मके बन्धन होंगे। यह तुम्हारा विभाग नहीं है।

मत्स्थानि सर्वभूतानि—देखो यह ग्वालियेकी बात। बिलकुल ग्वाला, जैसे अनपढ़ बोल रहा हो। **मत्स्थानि सर्वभूतानि**—सब

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

प्राणी मुझमें हैं। **न च मत्स्थानि भूतानि।** एक मिनट नहीं बीता—एकबार कहता है—सब मुझमें हैं और एकबार कहता है कि मुझमें कुछ नहीं है। 'न च मत्स्थानि भूतानि' वही 'भूतानि' है, जिनको पहले वाक्यमें कहा कि मुझमें सब भूत हैं और दूसरे वाक्यमें कह दिया—'न च मत्स्थानि भूतानि'—मुझमें कुछ नहीं है। ये सब अपने अधिष्ठानमें, आधारमें, दिखायी पड़ रहे हैं। अधिष्ठान दृष्टिसे यह कुछ नहीं है। अनन्तमें कोई भी टुकड़ा नहीं होता। किसी भी गणितके द्वारा हम यह सिद्ध नहीं कर सकते कि कोई धरती और आसमान अनन्त अद्वितीय ब्रह्मके किस हिस्सेमें है। जब हम ब्रह्मको नहीं देखते तब मालूम पड़ता है कि यह सब अनन्तमें है। जब अनन्तमें देखते हैं तो अनन्तमें कोई हिसाब-किताब, कोई हिस्सा, होता ही नहीं है। हमारी देहकी आँखसे सब कुछ है। हमारे ब्रह्मकी आंखसे कुछ नहीं। हम जन्मको भी जानते हैं और जन्माभावको भी जानते हैं। यह योग है।

कौन-सा योग बताया? 'न च मत्स्थानि भूतानि पश्य मे योग-मैश्वरम्।' ये ऐश्वयं, आश्चर्य है; जादूगरकी दृष्टिसे जो चीज नहीं है, वही जादूमें फँसे हुए को दिखायी पड़ रही है। इस योगको यदि हम जान लेंगे—फिर तो हर हालतमें—सोते-जागते, 'सोवत-जागत पड़े उताने…' हर समय हम वही हैं। इसमें न जन्मका अन्तर है न मृत्युका। न बीमारीका अन्तर है न आरोग्यका। न इसमें भारतीय है, न पाकिस्तानी। न इसमें यूरोपी है न अमेरिकन। न हिन्दू है न मुसलमान। न इसमें प्राकृत जातियाँ हैं। (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य ये सब कल्पित जातियाँ हैं।) और अकल्पित जाति मानव है। पशु-पक्षी ये प्राकृत जाति हैं।

मजहब किसी व्यक्तिके द्वारा कभी चलाये गये। वे पहले थे ही नहीं। अन्तमें रहेंगे भी नहीं। देखो आश्चर्य कि हम भूगोलके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

एक कोनेमें ही हैं—एशियाई हैं; भारतीय हैं—बंगाली हैं। एक बंगालीको भारतीय होनेमें क्या प्रयास करना पड़ेगा ? कौन-सी साधना वह करेगा तो भारतीय हो जायेगा ? एक हिन्दूको मनुष्य होनेमें कौन-सी साधना करनी पड़ेगी ? जैसे एक हिन्दूको अपनेको मनुष्य समझनेके लिए किसी साधनाकी जरूरत नहीं है—वह पहलेसे ही मनुष्य है। इसी प्रकार यह जो आत्मा है, यह पहलेसे ही परमात्मा है। हमारे मनमें जो भ्रम बैठ गया है—हम ये हैं-ये हैं—हम महाराष्ट्र हैं, हम भारतीय हैं, हम पाकिस्तानी हैं—उसे दूर करना है। भला बताओ, हमारे सामने ही तो पाकिस्तान नाम पैदा हुआ। न बीचमें समुद्र आया, न नदी आयी, न पहाड़ आया, न कोई खाईं खोदी गयी। किसने विभाग किया ? दिमागने विभाग किया। हमारे मनने—हमारे मानसिक मनमुटावने विभाग किया। ये जितने भेद हैं, अपनेको परमात्मासे अलग करनेवाले हैं, ये सब-को-सब मानसिक भ्रान्तियाँ हैं।

घड़ेको मिट्टीसे अलग किसने किया ? दूधको पानीसे अलग किसने किया ? चिनगारीको आगसे अलग किसने किया ? हमारी सांसको हवासे अलग किसने किया ? बरफको पानीसे अलग किसने किया ? इस तत्त्वको ठीक-ठीक समझ जायें तो इसका नाम हो गया 'योग'। अर्जुन कहते हैं—जरा विस्तारसे बताओ। अपना वैभव भी बताओ, विभूति भी बताओ। इन विशेष-विशेष रूपमें तुम कैसे हुए ? 'भूति' माने भवन और 'विभूति' माने विशेष-विशेष रूपमें होना। 'विभूतिं च जनार्दन'।

भूयः कथय तृप्तिर्हि शृण्वतो नास्ति मेऽमृतम्। १०.१८

'भूयः कथय'—दुबारा कहो। संस्कृतके पण्डित लोग इसको ऐसे बोलते हैं—'द्विर्बद्धं सुबद्धं भवति'। यदि किसी चीजमें दो गाँठ लगा दी जाये तो वह भली प्रकार बँध जाता है। एक बात अगर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

दुबारा कहकर सुना दी जाय तो वह ठीक-ठीक समझमें आजाती है। 'भूय: कथय'—पुन:-पुन: और विस्तारसे कहो। 'भूय: कथय'में सुननेकी रुचि है और 'विस्तारसे' कहनेमें उस वचनमें, उस पदार्थमें रुचि है—पदार्थमें रुचि होना और समझमें रुचि होना। समझनेकी रुचि अपने भीतर होती है और बाहरवाले पदार्थके सम्बन्धमें हम श्रवण करते हैं। पदार्थ बाहर होता है और श्रद्धा भीतर होती है।

फिर कहो! अरे अर्जुन, तुम शिष्टाचारवश तो नहीं बोल रहे हो। अर्जुन और श्रीकृष्णमें कोई शिष्टाचार नहीं है। बिल्कुल साले-बहनोई जैसे बात करते हैं, वैसे ही बात करते हैं। श्रीकृष्ण साले हैं और अर्जुन बहनोई हैं। श्रीकृष्णकी बहन सुभद्रा अर्जुनसे ब्याही है। गीतामें सालेका भी वर्णन है—'स्यालासम्बधिनस्तथा'। खास सम्बन्धी होता है साला—'जिसकी बहन अन्दर उसका भाई सिकन्दर'। साफ-साफ अर्जुनने कह दिया कि तुम मुझे घोर कर्ममें क्यों लगाते हो? 'व्यामिश्रेणेव वाक्येन'—असंदिग्ध बात क्यों नहीं बोलते? दुहरी बात बोलते हो। तुम कहीं हमको झूठ-मूठ तो नहीं बोलते हो, जनार्दन!

जनार्दन शब्दका अर्थ होता है—लोग जिससे प्रार्थना करें कि हमको हमारी अभीष्ट स्थितिमें पहुँचा दो। 'जनै: अर्द्यते प्रार्थ्यते इति जनार्दन:'। लोग जिसे हाथ जोड़कर कहें—हे प्रभो, तुम हमारी नावके मल्लाह होकर खेओ। तुम हमारी मोटरके ड्राइवर हो। भगवान्‌की करुणापर भी एक बार विचार करो। सबका जो मालिक है, वह अर्जुनको रथी बनाकर पथपर बैठा देता है और स्वयं सारथि होकर, गौण होकर, मददगार होकर, ड्राइवरके स्थानपर बैठकर मोटर चला रहा है। भगवान् तुम्हारे ड्राइवर, तुम्हारे जीवन-रथके सारथि स्वयं भगवान् हैं। जहाँ किसीका हित

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

करना हो और उसको ठीक-ठीक समझाना हो और हमको बड़ा बनाकर हमारा हुक्म न मानना चाहता हो, तो उससे छोटे बनकर ही उसका हित कर देना चाहिए। उसको समझा देना चाहिए।

हाँ, भाई ! तुम बहुत समझदार हो, हम तुम्हारी समझका आदर करते हैं। लेकिन हमारी विनती तो सुन लो। हम बड़े विनयसे तुमसे निवेदन करते हैं। लोग जिनसे प्रार्थना करते हैं हमारी मदद करो, उनको 'जनार्दन' बोलते हैं। हमको आगे बढ़ावे और हमसे काम ले, यह ईश्वरका दोनों काम है—इसलिए उसको जनार्दन कहते हैं। जो हमारे जीवनमें प्रगति दे और उन्नति दे—उसका नाम होता है जनार्दन। जो जन्म-मृत्युके चक्करसे छुड़ा दे, उसका नाम है जनार्दन। क्या देखते हो कि कहाँसे पैदा हुए और क्या देखते हो कि मरकर कहाँ जाओगे ? अपने जीवनको बिल्कुल ठीक-ठीक सञ्चालित करना चाहिए। मरनेके बाद हम क्या होंगे, यह मालूम करना हो तो मरे बिना मालूम नहीं पड़ेगा और हमारे जन्मके पहले क्या थे, यह सिवाय कल्पनाके और कुछ हाथ नहीं लगेगा। नयी-नयी कल्पना करते जाओ। ये थे, ये थे, ये थे।

योगदर्शनमें जो पूर्व जन्मके ज्ञानकी प्रक्रिया लिखी है, वह बड़ी मजेदार लिखी है। हमको यह शरीर क्यों मिला ? और इसके पहले क्या शरीर था ? अगर यह जानना हो किस प्रकारका ध्यान और किस प्रकारकी साधना करनी चाहिए—इसका उल्लेख योग-दर्शनमें मिलता है। एक महात्मा कहते थे कि हमको मालूम पड़ जाता है। मैंने उनसे पूछा कि कैसे मालूम पड़ता है ? तो उन्होंने कल्पनाकी रीति बतायी।

बोले—जहाँ तक तुम्हें बचपनका होश आता है वहाँ तक चलो। माँके पेटसे निकलनेके बाद तुम जब दूध पीते थे, उसको

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

याद आती है ? बहुत कम। अच्छा; माँके पेटमें तुम्हारा कैसा रूप था, उसका ध्यान करो। अब जब ध्यान करने लगा तो और बच्चोंके बारेमें हम पढ़ते-सुनते हैं, जैसे कि पेटमें वे बड़े होते हैं, कैसे जीवन-प्राण आता है—उसकी कल्पना होने लग गयी। उसकी कल्पनाके पहले रज-वीर्यका मिश्रण याद आया। फिर उसके पहले वीर्यमें जीवन-शक्ति थी। वीर्यमें कहाँसे आया ? तो इस तरहसे योगदर्शनमें प्रक्रिया बतायी है कि अगर अपने पूर्व जन्मका साक्षात्कार करना हो तो कैसे करना। तो उसमें तो कल्पना ही जुड़ती जाय—कल्पना ही जुड़ती जाय। इसके पहले यह होगा—इसके पहले यह होगा। अरे बाबा—यह कल्पना छोड़ो—यह देखो मैं कौन हूँ ?

अर्जुन कहते हैं फिरसे सुनाओ। फिरसे सुनोगे तो ऊब जाओगे। एक बात बार-बार कही जाय तो वे बोर हो जाते हैं—जब देखो तब वही रट लगाये रहते हैं, ये तो और कुछ जानते ही नहीं। अर्जुन कहते हैं नहीं—मैं तो बार-बार सुनना चाहता हूँ, क्योंकि एक बार सुननेसे तृप्ति नहीं मिलती। अमृत कहीं सुना जाता है ? अमृत तो पीया जाता है। पीनेके लिए अमृत चाहिए। वह भी सुना ही हुआ है। आप लोगोंमें-से किसीने अमृत पीया हो तो पीया हो। ऐसे वाक्यको रूपकालंकारसे अमृत बोलते हैं और वाक्यमें जो माधुर्य है, उसके लिए अमृतत्व अतिशयोक्ति है। यह अलङ्कारकी बात है और इसमें वाक्य शब्द छिपा दिया तो अपह्नुति हो गयी। तब यहाँ क्या है ? अलङ्कारोंका सङ्कर हो गया। श्रीकृष्ण बड़े भारी साहित्यिक थे। अर्जुन बड़े भारी साहित्यिक थे। उन्होंने कहा—

अमृतं शृण्वतः मे तृप्तिः नास्ति।

फिरसे सुनाओ। मैं अमृत सुन रहा हूँ। अमृत पी रहा हूँ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

यह गीतारूपी अमृत है। श्रीकृष्ण स्वयं अमृत, उनकी वाणी अमृत और जो सुननेको मिल रहा है सो अमृत। अरे यह वाक्य नहीं है— अमृत है। अमृत क्यों बोलते हैं? जो जन्म और मृत्युसे छुड़ा दे उसका नाम अमृत होता है। 'मृतं मृत्युर्नास्ति यस्मात् तत् अमृतम्'—जिसके सेवनसे मौतका डर बिल्कुल मिट जाय, उसका नाम अमृत है। अपने मरनेका तो मिट ही जाय, दूसरेके मरनेका भी मिट जाय।

यह गीता तो ऐसी है न! अर्जुनको अपने मरनेका डर नहीं है। दूसरोंके मरनेका बहुत डर था। बोले—बाबा मैं मर जाऊँ तो मर जाऊँ, लेकिन मेरे ये लोग न मरें। श्रीकृष्णने वह अमृत पिलाया अर्जुनको कि अपने मरनेका डर भी गया और दूसरोंके मरनेका डर भी गया। मृत्युसे निर्भय करनेवाली वस्तु यदि कोई है तो यह अमृत है सृष्टिमें। हमने देवताओंके अमृतको देखा नहीं है— न तो समुद्र-मन्थनके समय देखा, न देवताओंको पीते समय देखा, न कहाँ वह घड़ेमें रखा हुआ है, यह देखा। हमें तो यह वचनामृत, वाक्यामृत, देखनेको मिलता है, क्योंकि हमें मृत्युसे बचानेवाला तो यही है।

अरे भाई, बहुत बार सुन चुके हो—तृप्ति नहीं होती तो—यह भी एक प्रेमका लक्षण है। प्रेममें दो ही चीज होती है। एक प्यास और एक तृप्ति। पीते जायें और तृप्ति न हो—और चाहिए और चाहिए और मजा आता जाय उसको 'तृप्ति' बोलते हैं। मजा आता जाय और प्यास लगी रहे और प्यास लगी रहे और मजा आता जाय—इसको बोलते हैं 'प्रेम'। यदि प्यास-ही-प्यास रहे तो प्रेमको कोई चाहेगा नहीं, जब देखो तब प्यास ही लगी रहती है और ऐसी तृप्ति रहे कि भूख-प्यास लगे ही नहीं, तब भी कोई तृप्ति नहीं चाहेगा। प्रेम वह वस्तु है जिसमें प्यास और तृप्ति दोनों एक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

साथ चलती है। श्रीकृष्ण प्यास हैं तो राधा तृप्ति हैं। राधा प्यास हैं तो श्रीकृष्ण तृप्ति हैं और कभी वे तृप्ति कभी प्यास। वे कभी प्यास कभी वे तृप्ति।

आओ गीताका अमृत पीने चलें और प्यासे भी रहें—

भूयः कथय तृप्तिर्हि शृण्वतो नास्ति मेऽमृतम्।

मैं पीता जा रहा हूँ—पर मेरा मन भरा नहीं। यह कोई हानिकारक शराब नहीं है। यह अमृत है। रस देनेवाली वस्तु है। 'नूतनम् नूतनम् पदे पदे'। पद-पद पर नूतन है। 'स्वादु स्वादु पदे पदे'—पदे-पदे संस्कृतमें बोलते हैं तो उसका दो अर्थ होता है। कदम-कदम पर स्वाद बढ़ता जाता है। 'पदे-पदे' माने एक-एक कदम पर और एक-एक पदमें, एक-एक शब्दमें एक-एक शब्द सुनते जाते हैं और हमको रस आता जाता है। अब भगवान् बोले—ऐसे श्रोताको नहीं बतावेंगे तो किसको बतावेंगे—श्रोता तो ऐसा ही चाहिए। कवि लोग श्रोता ढूँढते रहते हैं। लोग कविता सुनते-सुनते ऊब जाते हैं। लेकिन यहाँ तो ऐसा श्रोता मिला जो कहता है—'और और और' 'स्वादु स्वादु'–'नूतनम् नूतनम्'—और बोलो। खुशीकी बात है 'आश्चर्य है, हर्ष है।'

आश्चर्य है अर्जुन, तुम्हारे मनमें इस युद्धभूमिमें जब दोनों ओरसे शस्त्रास्त्रकी वर्षा होनेवाली है—'प्रवृत्ते शस्त्रसंपाते' (१.२०) वहाँ तुम हमारा योग और विभूति सुनना चाहते हो? आश्चर्य! श्रोता तो ऐसा चाहिए। सुननेमें अर्जुनको मरनेकी भी परवाह नहीं। चलता है शस्त्र तो चले। लोग मरते हैं तो मरें। लेकिन हम तो तुम्हारी वाणीका अमृत पीयेंगे। आश्चर्य! तुम ऐसे श्रोता हो? बड़ा हर्ष! अरे कहाँ तो तुम रो रहे थे और कहाँ तुम्हें सुनते-सुनते अतृप्ति हो रही है। माने, और-और सुनना चाहते हो!

'हन्ति'का अर्थ है विषाद; खेदकी बात है। क्या बात खेदकी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

है ? यह कि इस युद्धभूमिमें मैं विस्तारसे तुमको कैसे सुनाऊँगा। तुम्हारे मनमें इतनी प्यास होनेपर भी मैं तुम्हें पूरी तरहसे सुना नहीं पाऊँगा।

> हन्त ते कथयिष्यामि दिव्या ह्यात्मविभूतयः।
> प्राधान्यतः कुरुश्रेष्ठ नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे ॥ १०.१९

भगवान् कहते हैं कि अर्जुन, विस्तारसे नहीं कह पाऊँगा। किन्तु आश्चर्य यह है कि ऐसी परिस्थितिमें भी तुम सुनना चाहते हो ! हर्षकी बात यह है कि अब तुम्हारा रोना छूट गया और तुम सुनना चाहते हो। सुनो, मैं अपनी दिव्य विभूति सुनाऊँगा। व्याकरणकी दृष्टिसे यहाँ अशुद्धि है। जब 'कथयिष्यामि' यह क्रिया पद बोल दिया तो 'दिव्या आत्मविभूतयः' कर्म होना चाहिए। अर्थात् 'दिव्या आत्मविभूतीः कथयिष्यामि' कहना चाहिए। लेकिन गाँवके ग्वालियेको व्याकरण वगैरहकी कुछ परवाह नहीं है। बीसों जगह गीतामें ऐसी हैं जहाँ श्रीकृष्णको व्याकरणकी परवाह नहीं है। अपनी बात कहना चाहते हैं—भले अशुद्ध हो। भाषा अशुद्ध हो, पर हमारी बात तुम्हारी समझमें आ जावे। भाषाके पक्षमें जाकर ज्ञानका अनादर कभी नहीं करना चाहिए। जिस भाषासे ज्ञान मिले, जिस मजहबसे ज्ञान मिले, जिस पशु-पक्षीसे ज्ञान मिले, उससे ज्ञान ग्रहण करना चाहिए। बोली पर मत आओ; यह देखो कि अच्छी समझ मिल रही है कि नहीं। फिर इस वाक्यको इस प्रकार भी समझा जा सकता है—'या मे मम दिव्या आत्मविभूतयः, तास्ते कथयिष्यामि'। हमारी जो दिव्य आत्म-विभूतियाँ हैं, उनको मैं तुम्हें कहूँगा। प्रतिज्ञा कर ली कि कहूँगा। क्या कहेंगे ? दिव्य आत्मविभूतिका वर्णन करेंगे।

यह दिव्य शब्द भी बहुत विलक्षण है। दिव्य माने अनिर्वचनीय दिव् क्रीडाविजिगीषाव्यवहारद्युतिस्तुतिकान्तिगतिषु (धातुपाठ)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

सबसे अधिक फैलाववाले जो धातु हैं उनमें एक 'दिव्' धातु भी है। 'जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वतः' गीतामें ही तो है (४.९)। 'जन्म कर्म मे दिव्यम्'—मेरा जन्म भी दिव्य है—दिव्य है माने कर्मके अधीन होकर यह जन्म नहीं है, मैंने इस शरीरको धार लिया है। मेरे कर्म भी दिव्य हैं, उनमें कर्तापन नहीं है। देखा, कर्तापनका तो अभिमान न हो और मनमें, वासना न हो और फलकी उत्पत्ति होकर अपने साथ जुड़े नहीं—खेलते चलो। यदि तुम ठीकसे खेलो—उसमें भी जीत होती है, उसमें भी हार होती है, लेकिन खेल खेल ही है। उसमें दुश्मनी नहीं होती। आजकलके खिलाड़ी आपसमें दुश्मनी कर लें, वह बात दूसरी है।

दिव्य जन्मका अर्थ क्या है? जन्म-मृत्युके चक्करमें पड़नेके लिए नहीं है। दिव्य कर्म क्या है? फल भोगनेके लिए नहीं है। यह सब दुनिया क्या है? बिना कर्तापनके, बिना वासनाके और बिना फल-सम्बन्धके, यह भगवान् इस संसारमें क्रीडा कर रहे हैं, खेल रहे हैं। इसलिए इसको दिव्य बोलते हैं। हमारी ये विभूतियाँ दिव्य हैं।

यदि भगवान् विभूतयाँ या विभूति कह देते, तब भी एक दूसरी बात होती। 'आत्मविभूति' कहनेका अर्थ है—'आत्मरूपा विभूतयः'—यह सब मैं ही हूँ। 'माँ' तो 'तुमने पीछे मानी—बाप पीछे मान लिया' 'भाई पीछे मान लिया'। पुत्र पीछे मान लिया'। ये सब माने हुए हैं। कहते हैं कि हम प्रयोगशालामें आँखसे देखेंगे, परीक्षा करेंगे कि हमारी माँके साथ हमारा खून मिलता है कि नहीं। हमारे पिताके साथ हमारा खून मिलता है कि नहीं? परीक्षा करके देखोगे? ना बाबा, माँकी बातपर विश्वास करो कि ये तुम्हारे पिता हैं और गाँववाले बड़े बूढ़ोंकी बातपर विश्वास करो कि यह तुम्हारी माँ है। उस समय तुम्हारी आँख बन्द थी। तुमने देखा तो है नहीं। जो उपयोगी हो उसको रखना पड़ता है। वह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

सत्य है कि नहीं, यह प्रश्न दूसरा है और वह उपयोगी है कि नहीं, यह प्रश्न दूसरा है।

यह जमीन हमारी है। क्यों भाई, धरती तुम लेकर आये थे ? धरती तो पहलेसे थी—तुमने अपने उपयोगके लिए उसे अपनी मानी। इसका अर्थ हुआ—उपयोगी। कोई लड़की लेकर लड़का आता है दोनोंका विवाह होता है। सत्य क्या है ? वे पति-पत्नी पहलेसे ही रहकर आये हैं ? नहीं पति-पत्नी होनेका बड़ा भारी उपयोग है। उसमें अनेक प्रकारके जो अनाचार-व्यभिचार हैं; उनकी निवृत्ति हो जाती है। कोई बात उपयोगकी दृष्टिसे मानी जाती है, कोई बात प्रयोजनकी दृष्टिसे मानी जाती है और कोई बात सत्यकी दृष्टिसे मानी जाती है। सत्य यह है कि हमसे अलग रहकर कोई चेतन हो नहीं रह सकता।

'प्राधान्यतः'—प्रधान रूपसे हम वर्णन करते हैं। प्रधानका मतलब है—जैसे राजधानीमें 'धानी'—जैसे मसिधानी—जिसमें स्याही रखी जाती है। धानी माने 'धीयते अस्याम्'; प्रधानम्। 'प्रकर्षेण धीयते अस्याम्'—छोटी-सी बातमें बहुत बड़ी बात रख दी जाय। हमको प्रधानका अर्थ ऐसे समझाते थे—एकके घरमें दस पतीली—सबसे छोटी पतीलीको उससे बड़ीमें रखा और उसको उससे बड़ीमें रखा और उसको उससे बड़ीमें रखा तो दस पतीली एक पतीलीके पेटमें आगयीं—एक पतीलीको उठाया तो दसों उठ गयीं। प्रधान उनमें कौन है ? जिसके पेटमें सब आगयीं उसका नाम हो गया प्रधान ? संस्कृत भाषामें शब्दोंकी माया ऐसी है कि उस शब्दमें उसका अर्थ भरा रहता है।

जिस एकके वर्णनसे अनेकका वर्णन हो जाये, उस ढङ्गसे मैं प्रधान-प्रधान विभूतियोंका वर्णन करता हूँ, क्योंकि तुम कुरुश्रेष्ठ हो—श्रोता बहुत अच्छे मिले हो। कुरुश्रेष्ठका अर्थ है कि तुम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

सुनकर करोगे। 'कुरु' माने करनेवाला। ऐसे आदमीको बताकर क्या करना जो कभी करे ही नहीं। हम बतावें प्राणायाम ऐसे किया जाता है और करनेवालेने एक मिनट भी प्राणायाम नहीं किया। आसन समझानेमें हमारा घण्टाभर गया और उसने एक आसन भी नहीं किया। बतायी हुई बातको जो करे उसको बोलेंगे—कुरुश्रेष्ठ। कर्मशील है, जो काम करना चाहता है।

अच्छा प्रधानरूपसे हम तुमको बताते हैं, क्योंकि तुम करना चाहते हो। विस्तारसे क्यों नहीं बताते ? 'नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे'। मेरे विस्तारका अन्त नहीं है। यदि मैं अपना विस्तार बताने लगूँ तो उसका अन्त नहीं होगा। यह आसमान धरतीका कितना गुना है ? आप बता सकते हैं। यह नहीं बताया जा सकता। धरती इतनी छोटी है कि आकाशके किस कोनेमें यह है--यह बताया नहीं जा सकता। यह अनिर्वचनीय होता है। दिक्तत्त्व धरतीका कितना गुना है ? लाखगुना, करोड़गुना--नहीं; अनन्त दिक्में पृथिवी कहाँ है--मूलार्थरूपसे यह भी नहीं बताया जा सकता।

एक सेठके घरमें गये। उनके घरमें विश्वका गोल नक्शा था। उसे घुमा-घुमाकर वे बता रहे थे कि यह अमेरिका है। यह यूरोप है। हम भूगोल-इतिहास नहीं जानते--पर जिसको भूगोल-इतिहास मालूम पड़ता है, उसको जानते हैं। भारत वर्ष यह है। बम्बई कहाँ है ? यह बिन्दी है—बम्बईकी जगहपर एक बिन्दी थी। मैंने कहा—सेठजी आपका महल कहाँ है ? विश्वके नक्शेमें तो सेठजीका महल ही नहीं था !

यह जो अनन्त वस्तु, अनन्त तत्त्व है–इसमें वे चीजें जिसको हम बहुत महत्त्व देते हैं–प्रयोजनकी दृष्टि भी देते हैं, अपने लिए देते हैं। अपनी जातिके लिए देते हैं, अपने धर्मके लिए देते हैं, वह सब ठीक है। परन्तु तत्त्वदृष्टिसे विश्वके नक्शेमें सेठजीका महल ही नहीं है !

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

प्रवचन : ५

४–११–८१

यह है भगवान्‌की करुणा—अपने भक्तको यदि अपनेको छोटा बनाकर भी ठीक रास्ता बताना पड़े तो छोटा बनकर भी रास्ता बताना चाहिए। रथी अर्जुन और सारथि भगवान्। रथी तो बड़ा होता है और सारथि छोटा। परन्तु यदि किसीका कल्याण करनेके लिए, भला करनेके लिए कभी अपने बड़प्पनको छोड़कर छोटा भी बनना पड़े तो उसको स्वीकार करना चाहिए। नरका हित करनेके लिए नारायण सारथि बने हैं। अर्जुन हैं नर और श्रीकृष्ण हैं नारायण।

नारायणो नरश्चैव तत्त्वमेकं द्विधा स्थितम्। उद्योगपर्व ४९.२१

एक ही तत्त्व दो रूपमें एक ही परब्रह्म परमात्मा जीव और ईश्वर दोनोंके रूपमें स्थित है। यह उसका उपलक्षण है। परब्रह्म परमात्मा है एक और जीव और ईश्वर ये दोनों उसके विभाग हैं।

हमारे एक मित्र थे वृन्दावनमें। वे कहते थे गीता कोई शास्त्र थोड़े ही है। यह तो दो मित्रोंकी बात-चीत है। एक मित्रको युद्धके समय विषाद हो गया और दूसरेने उसको प्रसाद दे दिया। गीता प्रसाद है। अर्जुनको हुआ विषाद और श्रीकृष्णने दिया उसको

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

प्रसाद। जब उसने अपने बुद्धिकी जीभसे उसका आस्वादन किया तो वह भी हँस पड़ा। जैसे एक मित्र उदास हो रहा हो, विषण्ण हो रहा हो और दूसरा उसके कन्धेपर हाथ रखकर और बड़े प्रेमसे समझा दे कि यह समय विषण्ण होनेका नहीं है। इस समय तो तुम अपना पौरुष दिखाओ। पौरुषके लिए उत्साहित करनेवाले मित्र हैं—श्रीकृष्ण। वह प्रेरणा देते हैं, प्रेरक हैं। भक्तोसि मे।

श्रीकृष्ण अर्जुनको कहते हैं 'तुम हमारे इष्ट हो—तुम हमारे मित्र हो, तुम हमारे सखा हो और तुम्हारे रूपमें मैं ही हूँ। 'पाण्डवानां धनञ्जय': (१०.३७)। इसलिए दोनोंकी बातचीत बड़े प्रेमसे सुनना और समझना चाहिए। 'यस्त्वां द्वेष्टि स मां द्वेष्टि'—श्रीकृष्ण अर्जुनसे कहते हैं कि जो तुमसे द्वेष करते हैं वह मुझसे द्वेष करता है। जो तुम्हारे पीछे चलता है वह मेरे पीछे चलता है। आओ; तुम हमारी विभूति और योग सुनना चाहते हो तो तुम्हें योग और विभूति सुनावें।

आप भागवतके साथ गीताको मिलाइये। भागवतमें मौतका पता चल जानेके बाद कि कब होगी, राजा परीक्षित सब कुछ छोड़कर गङ्गा-तटपर विराजमान हैं। और शुकदेवजी-जैसे अवधूत उनको भागवतका उपदेश दे रहे हैं। वहाँ प्रवृत्तिका प्रश्न नहीं है, वहाँ तो निवृत्तिका प्रश्न है, मरणोत्तर गतिका प्रश्न है। लेकिन यहाँ तो मरणोत्तर गतिका प्रश्न नहीं है। यहाँ प्रश्न यह है कि कुरुक्षेत्रमें जहाँ कर्तव्य-पालन और कर्तव्य-त्यागका प्रश्न उपस्थित है युद्ध करें कि न करें? 'प्रवृत्ते शस्त्रसंपाते' (१.२३)। दोनों ओरसे हथियार चलनेवाले हैं। वहाँ उस प्रवृत्तिके क्षेत्रमें, धर्मक्षेत्रमें, श्रीकृष्ण अर्जुनको अपनी दिव्य विभूति बता रहे हैं। यहाँ यह नहीं हैं कि ऐसे प्राण-त्याग करो तो मुक्त हो जाओगे। यहाँ ऐसे हैं—इस प्रकार लड़ो तो मुक्त हो जाओगे। लड़कर मुक्ति पानेके लिए है गीता और मरके मुक्ति पानेके लिए हैं भागवत।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

दोनोंका क्षेत्र पृथक्-पृथक् है। अधिकारी श्रोता भी पृथक् है, वक्ता भी पृथक् है।

हन्त ते कथयिष्यामि दिव्या ह्यात्मविभूतयः।
प्राधान्यतः कुरुश्रेष्ठ नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे॥ १०.१९

आओ खुशी कि बात है कि तुम हमारी विभूति जानना चाहते हो। आश्चर्यकी बात है कि ऐसे कोलाहलमें भी तुम्हारी ऐसी जिज्ञासा है। और भगवान्ने बताया—

अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूतेष्ववस्थितः। १०.२०

बहुत प्यारका सम्बोधन है गुडाकेश! इसमें सुन्दरताकी भी प्रशंसा है और उसके संयमकी—योगीपनेकी भी प्रशंसा है। सुन्दरता क्या है?

अङ्गुष्ठ-तर्जनी-योगो गुडा मुद्रेति कथ्यते।

जब अँगूठे और तर्जनीको जोड़ देते हो तो गुडा नामकी मुद्रा बनती है। ऐसे हैं केश जिसके अर्थात् घुँघराले बालवाले। श्रीकृष्णने अर्जुनसे कहा—अरे ओ घुँघराले बालोंवाले! यह प्रेमका सम्बोधन हो गया। रूपकी प्रशंसा, बालोंकी प्रशंसा तो कोई बहुत बड़ी बात नहीं हुई। उसका दूसरा अर्थ करते हैं—'गुडाका-निद्रा तस्य ईशः'। गुडाका माने नींद। नींदपर जिसने विजय प्राप्त कर ली हो। निद्रापर विजय प्राप्त करना माने—प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा, स्मृति इन पाँचोंपर विजय प्राप्त करना। निद्रा तो उपलक्षण मात्र है। किसी बातपर विचार करना हो तो प्रमाण-पूर्वक विचार करनेवाले तुम हो। तुममें प्रमाद नहीं है। विपर्यय कभी तुमको होता नहीं। विकल्पपर भी तुमने विजय प्राप्त कर ली है, दुविधा नहीं है। स्मृति तुम्हारी ठीक है, और जब सोना चाहो तब सो सकते हो, जब जागना चाहो तब जाग सकते हो।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

अपनी अवस्थाएँ भी मनुष्यके अधीन होनी चाहिए। यह नहीं कि काम करना है और नींद आगयी। सोना है और नींद आवे ही नहीं। ऐसा नियन्त्रण चाहिए अपने शरीरकी अवस्थाओं-पर भी कि मनुष्य उनके पराधीन न हो। इसीसे योगमें क्लिष्ट और अक्लिष्ट—दो प्रकारकी वृत्तियाँ हैं। एक तो क्लेश देने-वाली अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश। ये पाँचों वृत्तियाँ क्लेश देनेवाली हैं। हमारी नासमझी हमको दुःख देती है। हमारा अभिमान हमको दुःख देता है। हमारा राग हमको दुःख देता है। हमारा द्वेष, नफरत, दुश्मनी हमको दुःख देती है और अभिनिवेश—जब हम किसी वस्तुमें इतने तन्मय हो जाते हैं कि अपने आपको भूल जाते हैं—वह हमको दुःख देता है। दुःख देनेवाला दूसरा कोई नहीं है।

ईश्वर न किसीको दुःख देता है, न प्रकृति दुःख देती है, न प्रारब्ध दुःख देता है। घटनाएँ सब घटित हो सकती हैं, पर हम अपने अन्तःकरणको ऐसा बनाकर रख सकते हैं कि उनसे प्रभावित हुए बिना, हम अपने कर्तव्यका पालन करते रहें। यह जो अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेशसे अनुविद्ध वृत्तियाँ होती हैं उन्हींको क्लिष्ट कहते हैं। समयसे निद्रा आवे, समयसे दूर हो जावे। अपने सारे काम समय-समयसे होते रहें। उनमें अनवधानता न हो, प्रमाद न हो। उसको कहेंगे गुडाकेश। 'गुडाका निद्रा तस्य ईशः—गुडाकेशः'। अर्जुनने प्रमादपर विजय प्राप्त कर ली है। असाव-धान नहीं है—हर बातमें अर्जुन सावधान है, हर काममें सावधान है। जो अपने कर्म और भोगके परिणामका गणित नहीं जानता, वही दुःखी होता है। हम जो कर रहे हैं, उसका फल क्या निकलनेवाला है, इसके बारेमें हमेशा सावधान रहना चाहिए।

'प्रमादं वै मृत्युमहं ब्रवीमि'। (उद्योग. ४२.४)—प्रमादका नाम है मृत्यु। 'न मै मृत्युर्व्याघ्र इवात्ति जन्तून्'। (उद्योग. ४२.५)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

शेरकी तरह आकर मौत किसीको नहीं झपटती है। जब हम असावधान हो जाते हैं, हमारे जीवनमें प्रमाद आजाता है, तब मौत हमारे सिरपर छा जाती है। गुडाकेश अर्जुन ! तुम सावधान हो—एक तो सौन्दर्यकी प्रशंसा हुई, और दूसरी प्रशंसा हुई उसके संयमकी; निद्रापर विजय की और तीसरा अर्थ इसका होता है—शिवजीका कृपापात्र—टीकाकारोंने यह अर्थ भी किया है और ऐसा अर्थ होना सम्भव भी है। शंकरजीके प्रति तुम्हारी श्रद्धा बहुत है तो संहार-शक्तिकी प्रधानता होनेसे जितने भी दोष-दुर्गुण हों तुम्हारे अन्दर, उनको मिटा देनेकी सामर्थ्य तुम्हारे अन्दर है। तुमने तपस्यासे शंकरजीको प्रसन्न नहीं किया। युद्ध करके शंकरजीको प्रसन्न किया। ऐसा प्रसन्न किया कि उन्होंने अपना पाशुपत-अस्त्र अर्जुनको दे दिया।

अर्जुन सुन्दर है, संयमी है और वीर है तथा श्रीकृष्णका मित्र है, उसको सम्बोधन करके श्रीकृष्ण बोलते हैं—

अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः।
अहमादिश्च मध्यं च भूतानामन्त एव च ॥

अब अपना योग बताते हैं। क्योंकि प्रश्न यह है—

एतां विभूतिं योगं च मम यो वेत्ति तत्त्वतः।

एक विभूति है और एक योग है। और 'विभूतिं योगं च'—दोनोंके बारेमें अर्जुनका प्रश्न है। परमात्मा हमसे कहाँ मिला हुआ है ? योग कहाँ है, हमारा और परमात्माका। हम परमात्माकी शक्तिको, प्रेरणाको, उनकी सत्ताको, उनके ज्ञानको, उनके आनन्दको कहाँसे ग्रहण करते हैं ? वह कौन-सी वस्तु है, जहाँ परमात्माके सत्से अनन्त जीवन हम प्राप्त करते हैं—जहाँ परमात्माके चित्से अनन्त ज्ञान हम प्राप्त करते हैं। जहाँ परमात्माके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

आनन्दसे हम अनन्त आनन्द प्राप्त करते हैं। वह जो हमारे जीवन, ज्ञान और आनन्दका उत्स है, उद्‌गम है, मूल स्रोत है, वह कहाँ है? भगवान्‌ने बताया—

अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः।

पहले तो अपना पता बताया। भगवान् कहाँ रहते हैं। एक तो हम मौन होते हैं तब भगवान् बोलते हैं। यह नहीं है कि जैसे सट्टा बाजारमें दस आदमी एक साथ बोल रहे हों—उसमें एक आदमी चिल्ला रहा है, तो हम भी चिल्लाते रहें, बोलते रहें—और कोई बड़े आदमी भी उसके बीचमें बोलना शुरू कर दे तो यह तो बड़ोंका स्वभाव नहीं है। जब और लोग बोलते हों तो वे कहेंगे—बोल लो भाई तुम—हम चुप हैं। जब एक चुप होता है तब दूसरा बोलता है। जब जीव अपने संस्कारके अधीन होकर, अपनी वासनाओंके अधीन होकर, सुने-सुनायेके अधीन होकर बोलने लगता है तब भगवान्‌की आवाज सुनायी पड़ती है। और जब जीव चुप हो जाता है तो वहाँ भगवान्‌की आवाज सुनायी पड़ती है। इसीसे अर्जुन हो गये चुप और भगवान् लगे बोलने।

उनका पता देखो—यदि हम सौन्दर्यका अभिमान छोड़ दें तो भगवान्‌का सौन्दर्य प्रकट हो जाता है। यदि हम अपनी बुद्धिमत्ताका अभिमान छोड़ दें तो भगवान्‌की बुद्धि हमारे जीवनमें प्रकट हो जाती है। यदि हम अपने सुखका, थोड़ेसे सुखका जो अभिमान लिये बैठे हैं, उस अभिमानको छोड़ दें तो अनन्त सुख हमारे जीवनमें प्रकट हो जाता है। भगवान्‌का पता कहाँ है? किसीने पूछा भगवान्‌के टेलीफोनका नम्बर क्या है? मालूम रहना चाहिए। बोले भाई—अपने दिलको खाली कर दो। शून्य कर दो। शून्य ही परमात्माके साथ बात करनेका नम्बर है। जबतक अपने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

विचार, अपने संस्कार, अपना ढंग, अपनी वासना लेकर हम बैठे रहेंगे, तबतक परमात्माका साक्षात्कार कैसे होगा ?

भगवान् मिलते कहाँ हैं ? 'सर्वभूताशयस्थितः'। सम्पूर्ण भूतोंके, प्राणियोंके आशयमें भगवान् स्थित हैं 'आशेरते संस्कारा अस्मिन् इति आशयः'।

जिसमें संस्कार सोते रहते हैं, उनका नाम है आशय। हमने बचपनमें एक दृश्य देखा था। विश्वनाथजीकी गलीमें-से नीलकण्ठ महादेवकी ओर जा रहा था। ऊपरसे बन्दर कूदा और एक पत्थर गिरा। वह एक आदमीके सिरपर गिरा और वह वहीं मर गया। जरा-सी घटना—अबतक याद है। वह चीज क्या है ? इसीको हृदय बोलते हैं—आशय। हरति संस्कारान् इति हृत्—जो संस्कारोंको इकट्ठा करके अपनेमें रख लेता है, उसका नाम होता है हृदय, जिसमें संस्कार सोये रहते हैं और समय-समयपर जाग जाते हैं। कौन-सा संस्कार पहले है, कौन-सा पीछे है और कितने संस्कार हमारे हृदयमें सोये हुए हैं। इसकी कोई गिनती नहीं है।

अभीतक ऐसा कोई यन्त्र नहीं बना जो हमारे हृदयकी परीक्षा करके बता दे कि इसमें क्या-क्या संस्कार हैं। यन्त्रकी पकड़में नहीं है। वे मालूम कब पड़ते हैं जब उभर आते हैं। जब उनकी वृत्ति उभर आती है तब मालूम पड़ता है कि ये संस्कार हमारे हृदयमें कहाँ बैठे हुए थे। हम पढ़ रहे थे। मैं बाँचता जाता था और हमारे गुरुजी लेटकर सुनते थे। एक शब्द हमसे छूट गया। गुरुजीने कहा एक शब्द छूट गया। महाराज, कौन-सा शब्द छूट गया ? बोले—जो तुम हो वही शब्द छूटा ? अब वह शब्द क्या था ? 'उल्लू' शब्द था। यह बात आप समझो कबकी होगी। हम १०-११ वर्षके रहे होंगे। वह अबतक कहाँ बैठी है ? आप किसी मशानसे उसको बता सकते हो ? है कोई आपके पास ऐसा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यन्त्र, ऐसा गणित जिससे निकल आवे कि यह अमुक जगहपर बैठा हुआ है—कलेजेके अमुक हिस्सेका ऑपरेशन करके निकाल दिया जाय तो वह बात निकल जावेगी ? इसीको बोलते हैं, सूक्ष्म संस्कार।

सूक्ष्म शरीर इसीका नाम होता है। वह शरीरके साथ बहुत अधिक सम्बन्ध नहीं रखता है, स्थूल शरीरके साथ—उसको बोलते हैं—सूक्ष्म शरीर। उसका नाम होता है—आशय। कभी-कभी ऐसी बातें याद आती हैं और कभी-कभी भविष्यकी ऐसी कल्पना उदय होती है कि देखकर आश्चर्य होता है। यह निश्चय है कि वह आत्मा नहीं है। आशय ईश्वरमें नहीं होता। योगदर्शनमें यह है—क्लेश, कर्म, विपाक और आशय ये चार बात ईश्वरमें नहीं होतीं। ईश्वरमें अविद्या-नासमझी, अभिमान, राग, द्वेष, अभिनिवेश ये नहीं होते। क्लेश नहीं होता और कर्मके अनुसार ईश्वर सुखी-दु:खी नहीं होता। और आशय माने संस्कार उसमें जमा नहीं होते।

अपनेको अगर तत्त्व जानोगे तो न तुम्हारा जन्म है, न मरण है, न पवित्रता है न अपवित्रता है, न काला है न गोरा है। अब तुम मिट्टी हो कि घड़ा ? मूल प्रश्न यहीं जाकर अटकता है कि हमारा 'मैं' कहाँ है ? इसी आशयको अपना स्वरूप मानकर यह जीव बैठ जाता है। जैसे स्वप्न-कालमें, मनोरथ-कालमें, हम किसी दृश्य शरीरको अपना मैं समझकर बैठ जाते हैं—और उसके सुख-दु:खको भोगने लगते हैं—वैसे ही हम इस शरीरको 'मैं' समझकर बैठ जाते हैं। यह जो द्रव्यके अनुभवका अन्त:करणमें सामर्थ्य है, उस सामर्थ्यके साथ 'मैं' का जुड़ना इसका नाम जन्म है। और उस सामर्थ्यके साथ जो 'मैं' जुड़ा है उसका छूट जाना, उसका नाम मुक्ति होगा।

यह जो जीवके साथ आशय लगा हुआ है—मैंने यह काम-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

किया, मैंने यह भोग किया, मैंने यह बात कही—ये हमारे अन्तःकरणमें इकट्ठा होता रहता है और यह आशय सब प्राणियोंके हृदयमें होता है। शरीर तो होते हैं सबके अलग-अलग और अन्तःकरण भी होते हैं सबके अलग-अलग। संस्कार भी होते हैं सबके अलग-अलग और उनमें जो अभिमान करनेवाली चेतना है, वह भी होती है अलग-अलग। लेकिन परमात्मा ऐसा है—

अहमात्मा गुडाकेशः सर्वभूताशयस्थितः।

भूत अलग-अलग—आशय अलग-अलग, लेकिन उनमें जो तत्त्व है वह सबमें एक है। यह है परमात्माका पता। जबतक अलगाव मालूम पड़े कि मैं तू अलग, वहाँतक तो हम विशेषणको देखते हैं। जिसके जीवनमें अलगाव जितना कम है—परिवारका अलगाव है, शरीरका अलगाव, जाँत-पाँतका अलगाव, धर्मका, मजहबका, आचार्यका अलगाव—वह उतना महान् होता है। ये जितना-जितना अलगाव जिसके मनमें ज्यादा है—वह संसारमें उतना फँसा हुआ है। और जिसके चित्तमें अलगाव जितना कम है वह उतना मुक्त है, उसको दुःख भी उतना कम होगा। आओ परमात्माको ढूँढ़ें—कहाँ है?

सब शरीरोंमें एक आशय है, अन्तःकरण है। शरीर अलग, अन्तःकरण अलग, संस्कार अलग और उसमें चेतना अलग और उनमें परमात्मा एक। घड़ा अलग—काले गोरे घड़े अलग, उनकी बनावट छोटे-बड़े अलग और उनमें शराब और गङ्गाजल अलग और उनका चलना-फिरना, उठना-डोलना अलग, उनमें चन्द्रमाकी ज्योति अलग, उनमें सूर्यकी ज्योति अलग, परन्तु सबमें एक चीज क्या है? जो आकाश है वह सभी घड़ोंमें एक है। इसी प्रकार जो चिदाकाश परमात्मा है, वह सबमें एक होता है। जबतक उस एक को नहीं पहचानेंगे तबतक न अज्ञानकी निवृत्ति होगी और न

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दुःखको निवृत्ति होगी। अब प्रश्न होगा कि हमारे शरीरमें तुम क्या हो ?

अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः।

इसमें भी आप देखो एक चेतनाका वर्णन है और एक परमात्माका। 'भूतानामस्मि चेतना' (१०.२२) भूतोंमें जो चेतना है वह मैं हूँ। एक ओर बुद्धि पैदा होती है वह दूसरी चीज है। उसी परमात्माको लखानेके लिए यह विभूतिका वर्णन है। हमलोग संस्कृतके शब्दोंसे ही थोड़ा खेल लेते हैं—अहमात्मा गुडाकेश। हमने ताश तो कभी छुई ही नहीं—हम गाँवके रहनेवाले, वहाँ जिसके पास ताशके पत्ते हों उनको बड़े आदमी समझते थे। हम लोगोंका खिलौना शब्द है। हम उसके साथ खेलते हैं। भगवान्‌ने अपने लिए कहा—'अहम्'—अच्छा, आप हैं, ठीक है। पर कहाँ रहते हैं ? 'सर्वभूताशयस्थितः' सबमें मैं हूँ—सबमें आप कौन हैं ? आत्मा हैं। आत्मा माने उसकी जो स्वयंता है। वह जो खुद है। आत्मा माने स्वयं—खुद—जो वह है, वही है वह। 'अहमात्मा गुडाकेशः सर्वभूताशयस्थितः।' एक है, आत्म-अनात्म-विवेक है, वे विवेकी हैं। यदि जो लोग जिज्ञासापूर्वक श्रद्धासे, एकाग्र मनसे आत्माका विचार करते हैं, मनमें जाननेकी इच्छा न हो तो ऊपर-ऊपरसे पढ़ सुनकर निकल जावेंगे। गम्भीरतामें प्रवेश नहीं करेंगे।

यह हमलोगोंका आत्मा क्या है ? देखो हड्डी, मांस, चामका बना हुआ शरीर, मिट्टी, पानी, आग, हवा, आसमान—इसमें धातु जो है—क्या इसका नाम आत्मा है ? इसका नाम आत्मा नहीं है। विवेक करके गम्भीरतासे जब चिन्तन करो तब अपने आपको देख सकोगे। हाथ उठाते हैं, हाथ उठता है, गिरता है। उठानेकी शक्ति क्या है ? यह हाथ ही उठानेकी शक्ति है क्या ? हाथमें

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

उठानेकी शक्ति है जो पक्षाघात होनेपर नहीं रहती है और वह प्राणशक्ति जो है—क्रियाशक्ति जो है—वह क्या है ? यह मिट्टी, पानी, आगका बना हाथ है और इसमें जो शक्ति है, वह प्राण है। और इसको उठाने और गिरानेकी जो इच्छा है वह मन है और उठाने, गिरानेका जो अभिमान है, उसको बोलते हैं 'अहंकार'। उसमें जो सुख है उसको बोलते हैं—'आनन्दमय कोश'। ये पाचों चीजें आती और जाती रहती हैं और अपना आत्मा साक्षीके रूपमें रहता है, इनके बदलनेसे बदलता नहीं है। यदि कोई अपनेको मिट्टीका ढेला ही मान ले तब भी उसको विचार करना चाहिए कि यह मिट्टीका ढेला एक बूँद पानीमें-से निकला।

पॉल ब्रन्टन उड़िया बाबाके पास आया था। सन्तोंकी खोज करने आया था। बोला—बाबा, हमको कोई चमत्कार दिखाओ। वह चमत्कार ही ढूँढ़ता फिरता था। रमण महर्षिके पास गया। विशुद्धानन्दजीके पास गया। जगह-जगह जाता था, चमत्कार दिखाओ। उड़िया बाबाजीने उससे कहा—देखो भाई, हमारे बापके शरीरमें एक बूँद पानी था। वह माँके शरीरमें आकर एक बच्चा बन गया। वह बच्चा छोटा-सा बाहर निकला और यह लम्बा-चौड़ा हो गया। यह चलता है, फिरता है, सोचता है, विचारता है, प्रेम करता है। कितनी वृत्तियाँ इसमें आगयीं ? एक बूँद पानीसे ऐसी वस्तुका बन जाना—यह यदि तुम्हें चमत्कार नहीं मालूम पड़ता तो तुम्हें और क्या चमत्कार दिखावें। यह तो अद्भुत साक्षात् अपरोक्ष संस्कार है। चमत्कार है।

आओ बाबा, यह अपना आत्मा क्या है, इस शरीरमें, यह ढूँढ़ें। जो इस शरीरमें अपनी आत्माको ढूँढ़ लेता है वह विश्वका रहस्य, सृष्टिका रहस्य वहीं प्राप्त कर लेता है। जो अपने आपको

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ही नहीं जानता है, वह दूसरेका रहस्य क्या जानेगा ? आपके हाथमें एक दूरबीन है, एक खुर्दबीन है। लेकिन आपको यह मालूम नहीं है कि यह खुर्दबीन किसी वस्तुको कितना गुना कम करके दिखाती है या यह दूरबीन किसी चीजको कितना बड़ा करके दिखाती है। जब यह मालूम नहीं है तब आप उससे जब देखेंगे तो आपके मनमें गलत धारणा बनेगी। छोटी चीजको बड़ी मान लेंगे। बड़ी चीजको छोटी मान लेंगे। आपकी आँख ठीक है कि नहीं ? वह खुर्दबीन ठीक है कि नहीं ? आप सावधान होकर देख रहे हैं कि नहीं ? यदि अपने बारेमें आपको मालूम नहीं है तो दूसरेके बारेमें जितनी धारणाएँ बनेंगी उनके गलत होनेकी सम्भावना तो बनी ही रहेगी।

भगवान्‌ने कहा आओ पहले देखो—अपने अन्दर देखो—मैं क्या हूँ ? गीताके सातवें अध्यायमें पहले भूतप्रकृतिका वर्णन अलग है और परा प्रकृतिका वर्णन अलग है। जैसे तेरहवें अध्यायमें क्षेत्रका वर्णन अलग है और क्षेत्रज्ञका वर्णन अलग है। यहाँ आत्मा शब्दका अर्थ है पराप्रकृति। क्षेत्र तो है भूत। भूत जो है वह क्षेत्र है।

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनोबुद्धिरेव च।
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा ॥ ७.४

यह वह खेत है जिसमें हम पाप-पुण्यका बीज बोते हैं और उनके द्वारा सुखदुःखका फल प्राप्त करते हैं। यह शरीर ही खेत है और क्षेत्रज्ञ माने किसान—यह जीवात्मा है, जो अपने खेतको पहचानता है—यह मेरा खेत है। पाप-पुण्यकी मनुष्य खेती करता है। पाप माने—जिससे रक्षा न हो सके ! पा धातु रक्षाके अर्थमें होती है और प प्रत्यय होता है—उसका अर्थ होता है जिसमें रक्षा नहीं है। यदि पाप करोगे तो आज नहीं कल, कल नहीं परसों—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

तुम्हारी रक्षा कोई नहीं कर सकेगा और उसका फल भोगना पड़ेगा। और पुण्य उसको कहते हैं जो अपने हृदयको पवित्र कर दे—'पुनाति यः' जो हमारे हृदयको निर्मल बनावे, उज्ज्वल बनावे, प्रसन्न कर दे। उसका नाम है—पुण्य।

किसीने महात्माजीसे पूछा, महात्माजी ईश्वर हमारे ऊपर प्रसन्न है कि नहीं! कैसे मालूम पड़े? बोले—बेटा, तुम अपने ऊपर प्रसन्न हो कि नहीं? अपने कर्मसे तुम प्रसन्न हो? अपने भोगसे तुम प्रसन्न हो? अपनी भावनाओंसे तुम प्रसन्न हो? अपनी स्थितिसे तुम प्रसन्न हो? ना बाबा; ऐसा तो नहीं है। तुम स्वयं अपने ऊपर प्रसन्न नहीं हो तो ईश्वर तुम्हारे ऊपर प्रसन्न कैसे होगा? तुम्हें स्वयंको ही अपने जीवनसे संतोष नहीं है तो ईश्वर हमारे ऊपर संतुष्ट है, ऐसा सोचनेका तो कोई कारण ही नहीं है। क्योंकि ईश्वरने अपने लिए कोई कुटिया बनायी नहीं, कोई महल बनाया नहीं। 'सर्वभूताशयस्थितः'। एक माँ है—बम्बईमें उनके सात बेटे हैं। वह एक महीना एक बेटेके घरमें—दूसरे महीने दूसरे बेटेके घरमें—अपना घर बदलती रहती है। ईश्वरको घर बदलना तो नहीं पड़ता, पर अपना घर अलग बनाना नहीं पड़ता। वह तुम्हारे घरमें ही रहकर अपनी गुजर कर लेता है।

'सर्वभूताशयस्थितः'। 'स्वे महिम्ने प्रतिष्ठितः'।

परमात्मा किसी दूसरे घरमें नहीं रहता। सब उसीमें रहते हैं। अपनी महिमामें वह प्रतिष्ठित है। अपने स्वरूपमें स्थित है। आपके हृदयमें ही परमात्मा रहता है। यही है उसका घर। नया घर बनाकर परमात्मा नहीं रहता। यदि आप अपने ऊपर प्रसन्न हैं तो आपके घरमें रहनेवाला, आपके हृदयमें रहनेवाला परमात्मा भी आपके ऊपर प्रसन्न है। यह जो परा प्रकृति है उसको कह दिया 'आत्मा' और अपरा प्रकृतिको कह दिया—'भूताशयस्थितः'। और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परमात्मा जो स्वयं है उसके लिए आया 'अहम्' शब्द। भगवान् अपने लिए बार-बार 'अहम्' शब्दका प्रयोग करते हैं। 'अहम्' माने परमात्मा होता है। 'अहं क्रतुरहं यज्ञः स्वधाहमहमौषधम्'। मन्त्रोऽहमहमेवाज्यम् (९.१६)। अहंकी झड़ी लगा दी। एकने गीतामें अनुसन्धान करके देखा। सर्वापेक्षा 'अस्मत्' शब्दका प्रयोग गीतामें ज्यादा मिलता है। अहम्, मम मयि, मया—ये सब अपने आपके वाचक शब्द हैं। उनका प्रयोग गीतामें सर्वापेक्षा अधिक है। परमात्माने कहा अहम् ..अहम्...अहम्।

एक महात्मासे किसीने पूछा कि परमात्मा क्या है तो बोले कि देखो जब दाल पकती है तो उसमें खुदर-बुदर खुदर-बुदर आवाज निकलती है। तो खुदर-बुदर आवाज तो अलग-अलग होती है लेकिन पानी एक ही रहता है। इसी प्रकार ये सबके हृदयकी बटलोईमें जो 'अहम्—अहम्—अहम्' ये खुदर-बुदर हो रहा है। ये देखनेमें तो बिल्कुल अलग-अलग हैं लेकिन परमात्मा सबके अन्दर एक ही है। 'अहं क्रतुरहं यज्ञः स्वधाहमहमौषधम्। मन्त्रोऽहमहमेवाज्यम्'। इस तरहसे सारी गीतामें भगवान्ने अस्मत्—शब्दका प्रयोग ज्यादा किया। 'अहम्' है परमात्मा और 'आत्मा' है परा प्रकृति। और दोनोंका यहाँ सामानाधिकरण्य है। माने जिस विभक्तिका अहम् है, उसी विभक्तिका आत्मा है। इसका अर्थ यह हुआ कि दोनों एक हैं।

अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः।

अब आपको शब्दका खेल सुनाते हैं। 'अहम्' माने जिसका हनन कभी न हो—'अ' माने नहीं और 'हं' माने हत्या। जिसकी हत्या कभी न हो सके, उसका नाम है 'अहम्'। आप या हम कोई भी अपनेको मार नहीं सकता है, आत्महत्या नहीं कर सकता। कभी दुनियामें कोई यह अनुभव नहीं कर सकता कि मैं मर गया,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

यह अनुभवके क्षेत्रमें है ही नहीं। इस बातको निश्चय कर लो, 'न हि्कश्चित् सन्दिग्धे अहं वा नाहं वेति' (भामती, अध्यासभाष्य) किसीको यह अनुभव कभी हो ही नहीं सकता कि मैं नहीं हूँ। मैं मर गया। यदि यह अनुभव किसीको हो कि मैं नहीं हूँ—मैं मर गया तो जिसको अनुभव हो रहा है वही मैं है और वही रह रहा है। वह तो कभी मिटा ही नहीं है। विचार करके देखलो तुम्हारी मृत्यु कभी नहीं होती है। यह घड़ा फूट जाना दूसरी बात है और घड़ेका अभाव होना यह दूसरी बात है। वह तो बिल्कुल मिट्टी है। मिट्टीके रूपमें तो घड़ा हमेशा रहेगा ही रहेगा।

महात्मा गान्धी बनारस आये थे तो एकने भजन गाया—'अब हम कबहूँ न मरेंगे।' अरे बाबा! कभी मरोगे नहीं सो बात नहीं है। कभी मरे नहीं हो। यदि अबतक कभी मर गये होते तो आज तुम कैसे होते? मृत्युकी कल्पना बिल्कुल झूठी है। न अभी मरकर उसका स्मरण कर सकते हैं और न मरनेका अनुभव कर सकते हैं और जब अनुभव नहीं कर सकते तो मरनेकी कल्पना बिल्कुल झूठी है। ये तो कपड़े उतारनेको और दूसरे पहननेको—जैसे बच्चे रोनेका कारण मान बैठते हैं वैसे ही इस सृष्टिमें है। और 'अहम्' नं हन्यते इति अहम्, न हन्ति इति अहम्, न हीयते इति अहम्, न जहाति इति अहम्—'ओहाङ् गतौ'—न कहीं जाता है न मरता है, न कभी बदलता है—यह तो ज्यों-का-त्यों—यह अहं है। हमारा अहम्—उपाधियाँ बदलती हैं—छाया बदलती हैं, प्रतिबिम्ब बदलता है।

कोई अनजान बच्चा है—उसने प्रातःकाल देखा कि हमारी छाया बड़ी लम्बी है, तो बोला कि मैं बढ़ गया, लम्बा हो गया। और दोपहरमें जब छाया छोटी हो गयी, तब उसने कहा—हाय-हाय! मैं तो छोटा हो गया। अब परछाइँ छोटी-बड़ी होनेसे जैसे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मनुष्य छोटा, बड़ा नहीं होता, इसी प्रकार यह जो हमारा शरीर है, अन्तःकरण हैं, इसके छोटे-बड़े होनेसे हम छोटे-बड़े नहीं होते। और असलमें यह है क्या? 'न जहाति', 'न हीयते'—'न जिहीते'। न कहीं जाता है, न किसीको छोड़ता है, न मरता है। योग-वासिष्ठमें 'अहम्' शब्दकी व्याख्या ऐसे की गयी है—वर्णमाला 'अ' से शुरू होती है और 'ह' पर शेष होती है। अ से ह तक जितने भी अक्षर हैं उन अक्षरोंके द्वारा, वर्णोंके द्वारा अकारादि स्वरोंके द्वारा और ककारादि व्यञ्जनोंके द्वारा, जितने भी शब्द बनते हैं, जितने भी वाक्य बनते हैं—और जितना भी उनका अर्थ होता है वह सब-का-सब 'अहम्' है। 'अ' और 'ह' से लेकर जो कुछ बोला गया, बोला जा रहा है—बोला जायगा, वह सब अहम् है।

'अहमात्मा'; तुम्हारे इस शरीरमें, अन्तःकरणमें, मैं ही आत्माके रूपमें विराजमान है। आत्मा अर्थात् जो जाग्रत-अवस्थामें बाहरके विषयोंको देखता है। स्वप्नावस्थामें भीतर विषयोंको बना लेता है और सुषुप्तिके समय सबका उपसंहार करके अकेला होता है। जैसे एक बाबूजी हैं, वह ऑफिसमें जाकर काम करते हैं, उसकी जाग्रत्-अवस्था है। प्रयोगशालामें जाकर प्रयोग करते हैं—बड़ी भारी प्रयोगशाला है—स्वप्नावस्था। उसकी शक्तियोंपर विचार करो, देखो, तुम्हारे मनमें क्या अद्भुत सामर्थ्य है। यह कोई झूठ-मूठकी चीज नहीं है। तुम्हारा मन नये-नये आदमी बना लेता है। वह नयी धरती बना लेता है। नया पानी, नयी हवा, नया सूर्य-चन्द्रमा गढ़ लेता है। यह तुम्हारा मन कितनी बड़ी सृष्टि रचता है।

यह जो स्वप्नमें नवीन-नवीन वस्तुओंके निर्माणकी शक्ति है, वह जाग्रत्में कहाँ चली जाती है? कभी आपने इसपर विचार किया? सपनेमें तो आपके मनमें इतनी ताकत है कि वह नयी-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

नयी चीज बनाकर देख सके, भोग सके। जाग्रत्-अवस्थामें वह शक्ति उतनी नहीं रहती है। सच भगवान्ने हमको दिखा दिया है—तुम्हारे मनमें इतनी शक्ति है—तुम जैसे स्वप्नकी सृष्टि बना सकते हो, वैसे जाग्रतमें भी तुम वैसी ही सृष्टि बना सकते हो। तुम्हारा सामर्थ्य कम नहीं है। समेटनेका सामर्थ्य है—सुषुप्ति अवस्थामें। जो तुम चाहो—दुनियाकी वस्तुको छोड़ दो। जैसे सुषुप्तिमें सो जाते हो, वैसे तुम संसारकी किसी वस्तुको छोड़ सकते हो, किसी वस्तुको बना सकते हो। ये जीवात्मामें जो निहित शक्तियाँ हैं—उनका प्रदर्शन भगवान्ने हमारे सामने एक नुमाइश करके रख दी है। रोज-रोज देख लो और अपनेको ठीक-ठीक ढंगसे सञ्चालित करो। आफिस जाग्रत्-अवस्था, प्रयोगशाला स्वप्नावस्था और विश्राम-कक्ष है सुषुप्ति-अवस्था। विश्रामकी भी सबको आवश्यकता होती है। परन्तु उसमें उपसंहारका सामर्थ्य किन्हीं लोगोंमें ही देखा जाता है। यह स्थिति, जाग्रत्-आवस्थामें, सृष्टि, स्वप्नावस्थामें और प्रलय, सुषुप्ति-अवस्थामें जो हमको दिखायी पड़ते हैं—ये सब क्या हैं? हमारे अन्दर यह सामर्थ्य है। यह कहाँसे आया? इसके अन्तर्हित होनेका कारण है—परमात्मा अलग हो गया और जीवात्मा अलग हो गया। शक्तिका लोप हो गया। परमात्मा और आत्मा एक हो गया तो सारी शक्तियाँ अपने काबूमें आगयीं।

'अहमात्मा गुडाकेश'—आत्मा माने जाग्रत्-अवस्थामें काम करनेवाला। हाथ काम नहीं करता, हाथमें आरूढ़ चेतन काम करता है। बुद्धि भी काम नहीं करती, बुद्धिमें आरूढ़ चेतन काम करता है। तत्त्वज्ञान भी अज्ञानको नहीं मिटाता। तत्त्वज्ञानकी वृत्तिमें आरूढ़ परमात्मा अज्ञानको मिटाता है। यह जो हमारे जीवनमें सब कुछ हो रहा है, उसपर जरा ध्यान दें। उसीको बोलते हैं 'अस्ति इति आत्मा'। जो भोग करता है, उसे बोलते हैं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आत्मा। 'अतति व्याप्नोति'—इसका नाम है आत्मा। 'आदत्ते इति आत्मा'—जो पुण्य-पापको ग्रहण कर लेता है, उसका नाम आत्मा। जो सुख-दु:खका भोग करता है, उसका नाम आत्मा। जो तीनों अवस्थाओंमें चलता है, उसका नाम आत्मा और जो कभी नहीं थकता उसका नाम आत्मा। 'न ताम्यति इति आत्मा'—यह कभी थकानका नाम नहीं लेता। घर बदल-बदलकर कुछ-न-कुछ समेटता रहता है। कुछ-न-कुछ फैलाता रहता है। कुछ-न-कुछ करता रहता है। थकान नामकी वस्तु आत्मामें नहीं है! इसलिए इसको बोलते हैं आत्मा। दर्शन पढ़ो, विज्ञान पढ़ो, इतिहास-पुराण पढ़ो, काव्य पढ़ो, कहानी पढ़ो कभी थकनेका नाम नहीं है। यह सोते समय भी टुकुर-टुकुर देखता रहता है।

यह जो तुम्हारे भीतर बैठा हुआ द्रष्टा है—सुषुप्तिका भी द्रष्टा है—यह कौन है? तो भगवान्‌ने बताया अहमात्मा। तुम और मैं ये दो चीज नहीं हैं। बिलकुल एक हैं। 'अहमात्मा' महावाक्य हो गया। 'अहमात्मा' 'अयमात्मा ब्रह्म।' 'अहं ब्रह्मास्मि।' यहाँ अहम् माने ब्रह्म और आत्मा माने पराप्रकृति—अक्षर पुरुष। ये सब एक हैं। परमात्माके योगका वर्णन है। सबके हृदयमें परमात्मा हमसे जुड़कर, मिलकर रहता है। हम जब उसको अलग मान बैठते हैं, तब हमारी वे शक्तियाँ, वह ज्ञान और वह आनन्द सारा-का-सारा पीछे पड़ जाता है। हम व्यवहारमें जो भी काम करें, उसको पकड़कर करें। उसके साथ मिलकर काम करें। हमारा मददगार कौन है? सारथि कौन है? यही अहं जीवनका सारथि है।

जो अपने ज्ञानसे, अपनी शक्तिसे, अपनी सत्तासे, अपने आनन्दसे सर्वदा हमारे इस जीवनको अनुप्राणित करता रहता है, उस परमात्माके साथ हमारा योग हो जाता है तब फिर क्या पूछना? किसके लिए रोयेंगे? किसके लिए दु:खी होंगे? किसके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

लिए शोक करेंगे ? क्या खो जायगा ? क्या मिल जायगा ? कहाँ योग होगा और कहाँसे योग होगा ? यह जो जीवन है, मरण है, गमनागमन हैं और स्वर्ग-नरक हैं और पाप-पुण्य हैं—उस परमात्माकी शक्तिसे मिलते ही ये सारे-के-सारे समाप्त हो जाते हैं और यदि देहसे मिले रहोगे तो जन्म हुआ ही है। जिसका जन्म होता है, उसकी मृत्यु भी होती है। जो आया है वह जायगा भी। जो ऊपर उड़ेगा वह नीचे गिरेगा भी। यह संसारका नियम है। इससे छूटनेका एक ही उपाय है। हम अपने आपका परमात्माके साथ जो योग है, उस योगको समझें और परमात्माके योगको समझ लेनेके बाद ये संसारके जितने विकार हैं, वे छूट जाते हैं।

अब देखो एक नयी बात आती है, वह यह कि—यह भूत क्या है ? यह क्षेत्र क्या है ? यह अपरा प्रकृति क्या है ? असलमें परमात्मासे अलग ये सब भी कुछ हैं क्या ? ये श्रीकृष्णका तत्त्व-ज्ञान यहाँतक कि उनको जब हम युद्धभूमिमें देखते हुए, युद्धभूमिसे पलायन करते हुए, उनको चोर-चोर लोग पुकार रहे हैं, वह भी देखते हैं—उनको छैलचिकनिया कह रहे हैं—वह भी देखते हैं। उनको वीर-बहादुर कह रहे हैं, वह भी देखते हैं, उनको छली-कपटी कह रहे हैं, वह भी देखते हैं। श्रीकृष्णके जीवनमें यह निर्द्वन्द्वता कहाँसे आयी ? क्योंकि सर्वात्म-बोध जो है, वह उनके अन्दर प्रतिष्ठित है। कोई भी सृष्टि, स्थिति, प्रलय कोई भी गति-आगति ऐसी नहीं है, जो श्रीकृष्णका स्वरूप न हो। 'अहमादिश्च मध्यं च भूतानामन्त एव च।' बताते हैं—सब मैं ही हूँ। केवल आत्मा ही हूँ सबके हृदयमें—ऐसा नहीं। बल्कि जो कुछ दिखायी पड़ रहा है, आदि, मध्य, अन्त—ये सब मैं ही हूँ।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

प्रवचन : ६

५-११-८१

अर्जुनने प्रश्न किया—

कथं विद्यामहं योगिन्। १०.१७

मैं आपको कैसे जानूँ? भगवान्‌ने उत्तर दिया—

अहमात्मा गुडाकेश भूताशयस्थितः।
अहमादिश्च मध्यं च भूतानामन्त एव च ॥ १०.२०

पहले सबसे पास जो मैं हूँ तुम्हारे 'अपना आत्मा' उसके रूपमें मुझे जानो। और—

केषु-केषु च भावेषु चिन्त्योसि भगवन्मया। १०.१७

उसका उत्तर है—

अहमादिश्च मध्यं च सर्वभूतानामन्त एव च। १० २०

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

'आदि मध्य अन्त राम साहिबी तुम्हारी'। तुलसीदासजीने कहा है। 'कथं विद्यामहम्'का उत्तर है—'अहमात्मा गुडाकेश' और 'केषु केषु च भावेषु चिन्त्येषु भगवन्मया'—इसका उत्तर है—'अहमादिश्च मध्यं च भूतानामन्त एव च'। भगवान्‌की बात कभी टेढ़ी होती है, कभी सीधी होती है। भगवान् खुद भी टेढ़े हैं और सीधे भी हैं। श्रीकृष्ण भगवान् जरा टेढ़े-टेढ़े हैं। पाँव टेढ़ा, कमर टेढ़ी, ठुड्डी टेढ़ी, आँख टेढ़ी। रामचन्द्र भगवान् सीधे-सीधे हैं।

चिन्तन कहाँ करना? भगवान्‌का दर्शन कहाँ करना? कैसे करना? 'कथं विद्यामहं योगिन्'। बोले—'सर्वभूताशयस्थितः'। 'सर्वेषां भूतानां आशयेषु परिवर्तमानेषु स्थितः अचलः आत्मा अहम्'। सम्पूर्ण प्राणियोंकी जो अन्तःकरण-वृत्ति है, आशय है, चित्तवृत्ति है, उसमें परिवर्तन होता रहता है। ऐसा किसीका मन नहीं होता, जो बदलता न हो। 'भूताशयेषु परिवर्तमानेषु'। मन बदलता रहता है लेकिन मैं एक ही रहता है। बचपनका मन बदल गया। जवानीका मन बदल गया। बुढ़ापेका मन बदल गया। कितनी स्मृतियाँ आयीं, कितने संस्कार आये। इसमें बहुत बखेड़ा है। भगवान्‌ने तो अपना ऑपरेशन हो कर दिया। आशयको निकालकर फेंक दिया। जैसे आजकल स्त्रियाँ गर्भाशय निकाल देती हैं, वैसे भगवान्‌ने अपने अन्दर आशय रखा ही नहीं—अद्भुत है।

जो लोग भगवान्‌के बारेमें कम सोचते-विचारते हैं—उनको शायद यह बात मालूम नहीं होगी—भगवान्‌को किसीकी स्मृति नहीं होती! स्मृति नामक वस्तु भगवान्‌में है ही नहीं। लोग तो नाराज हो जायेंगे। भगवान्‌को हमारी याद नहीं आयेगी? अरे भाई, याद उसको आती है जिसको वस्तु परोक्ष होती है। कलकी देखी आज याद आयेगी। वहाँ देखी यहाँ याद आयेगी। वह देखी यह याद आयेगी। अब भगवान्‌के लिए तो देश-कालका कोई भेद

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नहीं है। इसलिए उनको परोक्ष नहीं होता। और परोक्ष नहीं होता तो अपरोक्ष ही रहता है। तुम्हारे लिए जो भूत, वर्तमान और भविष्यका भेद है, वह तो भगवान्‌में है नहीं। जो सब देख रहा है, उसको स्मरण करनेकी क्या आवश्यकता? इसीसे क्लेश, कर्मविपाक और आशय ये तीनों भगवान्‌में नहीं होते। यह बात योगदर्शनके प्रारम्भमें ही कही हुई है—'क्लेशकर्मविपाकाशयै—रपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः'। (१.२४)

तो भगवान्‌ने तो अपनेमें आशय रखा नहीं और जीवोंके साथ लग गया यह आशय। देखो जो बड़े लोग होते हैं वे अपने पास न नोट रखते हैं, न चाभी रखते हैं। सब मुनीमके पास होता है। भगवान्‌ने अपने खजानेकी चाभी अपने पास नहीं रखी। वह तो महात्माओंको दे दी। जब जरूरत हो तब खोल लेना, देख लेना। रजिस्टर भी महात्माओंके पास ही रहता है। एक चीज अपने पास नहीं रखी। अपने पास पैसा वे लोग रखते हैं जो जहाँ जा रहे हैं वहाँ यदि पैसा मिलनेकी सम्भावना न हो तो लेकर जाते हैं। जिनको सब जगह पलङ्ग मिल जाये, सब जगह बिस्तर मिल जाये, सब जगह खाने-पीनेको मिल जायें, नौकर-चाकर मिल जायें तो साथ क्यों रखें? हवाई जहाजमें जाते हैं तो लेकर थोड़े ही जाते हैं।

परमात्मा तो सब जगह है न! उनको न भूतकी स्मृति रखनी पड़ती है, न भविष्यकी कल्पना रखनी पड़ती है, न वर्तमानमें कोई चीज अपनी करके रखनी पड़ती—वह तो हैं बिलकुल ठन-ठन-पाल—खाली। और यह जो जीवोंका आशय है—उसमें जीव पीछेकी लेकर भी आते हैं और आगेकी कल्पना भी रखते हैं और वर्तमानमें भी मैं, मेरा रखते हैं। इसीका नाम होता है आशय। यह बदलता है। कलकी स्मृति सम्भव है पचास वर्ष बाद आवे, और पचास वर्ष पहलेकी स्मृति आज आजावे। स्मृतियाँ बदलती

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

रहती हैं। कल्पनाएँ बदलती रहती हैं। मैं-मेरा बदलते रहते हैं। पर इसमें एक अचल है, कूटस्थ है। उसको बोलते हैं—'प्रत्यगात्मा'।

परमात्माका चिन्तन करना हो तो बदलते हुए देशको देखनेवाला, बदलते हुए कालको देखनेवाला, बदलती हुई वस्तुओंको देखनेवाला, अन्तःकरणकी वृत्तियोंको बदलते हुए देखनेवाला, जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्तिको बदलते हुए देखनेवाला—जो स्थित आत्मा है, शास्त्रकी दृष्टिसे इसका नाम होगा कूटस्थ आत्मा—प्रत्यगात्मा—अपना आत्मा। यह कौन है ? भगवान्‌ने कहा—मैं हूँ। यदि तुम्हें मेरा चिन्तन करना हो, मुझे जानना हो, तो अपनेको जानो। यहाँ बडे-बड़े महात्मा प्रवचन करने आते होंगे—कभी रङ्गनाथानन्द आते होंगे। कभी चिन्मयानन्द आते होंगे। कभी जे. कृष्णमूर्ति भी आते होंगे—नेति-नेति करनेवाले। हम उस ढङ्गका गीताका अर्थ आपको नहीं सुनावेंगे तो आगे कट जायेगा।

इसलिए आओ सर्वभूत, सब प्राणी, सबका अलग-अलग अन्तःकरण—और बदलता हुआ—कभी काम आता है, कभी क्रोध आता है, कभी लोभ आता है, कभी मोह आता है, कभी शान्ति आती है, कभी प्रेम आता है, कभी परोपकारकी वृत्ति आती है। कभी निष्ठुरता आती है, कभी कोमलता आती है। सबके हृदयकी यह स्थिति है। उसमें एक चिर स्थित है, वह रहता ही है। चेतन है कि जड़ है ? बोले आत्मा है। आत्मा है माने साक्षी है। द्रष्टा है—सबको देखता रहता है। भगवान् बोले कि वह मैं ही हूँ। 'अहमात्मा गुडाकेश।' एक महात्मासे किसीने पूछा कि परमात्मा कैसा है ? महात्माने पूछा—तुम कैसे हो ? सो तो नहीं मालूम है महाराज ! अरे भलेमानुष, साढ़े तीन हाथके शरीरमें तुम—अपनेको तो जानते नहीं तो सम्पूर्ण विश्वमें रहनेवाले परमात्माको तुम कैसे जान सकते हो ?

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

कितनी मूर्तियाँ गढ़ी जाती है और कितनी तोड़ी जाती हैं। परन्तु वह जो निहाय है वह ज्यों-का-त्यों रहता है। यह हमारे अन्तःकरणमें कितने अबतक आये और कितने गये। एक दिन एक चेलेपर गुरुजी नाराज हुए। चेलेको भी जोश आगया। उसने कहा जाओ-जाओ—तुम्हारे जैसे सैकड़ों गुरु बनाकर मैंने छोड़ दिये। इसीको बोलते हैं 'कूट'। यह जो हमारी मनोवृत्तियोंकी स्थिति है, यह बदलती रहती है। एक सरीखी नहीं रहती है। जो आज प्यारा है, वह कल दुश्मन हो जाता है। जो दुश्मन है, वह प्यारा हो जाता है। जो अच्छा लगता है, वह बुरा लगने लगता है। जो बुरा लगता था वह अच्छा लगने लग जाता है। पहले हमको खीर बहुत अच्छी लगती थी। जब बड़ा हुआ तो खीरसे ऐसी ग्लानि हो गयी कि देखकर बमन आवे। हमारे गाँवमें एक हलुवा-पूरी खानेवाले ब्राह्मण थे। बुढ़ापेमें यदि अनजानमें भी घीकी चीज उनकी थालीमें आजाय तो उनको बमन हो जाता था। यह मनोवृत्तियाँ बदलनेवाली हैं। इनमें अचल है अपना 'आत्मा'। यही है ज्यों-का-त्यों।

हमको बचपनमें एक महात्माने बताया था—देखो अनित्यमें परमात्माको जब तुम ढूँढ़ने जाओगे—अनित्य माने जो बदलता रहता है—आज है कल नहीं है। कल था आज नहीं है। वह तो बदल गया। उसमें परमात्माको मत ढूँढ़ो। परमात्माको उसमें ढूँढ़ो जो नित्य है। इदम्-इदम्-इदम्—'यह यह यह'—इस प्रकार बदलता रहता है और मैं बिलकुल एक रहता है। परमात्माको ढूँढ़ना हो तो 'यह'में मत ढूँढ़ो 'मैं' में ढूँढ़ो। नहीं तो, अयोध्यामें जाओगे तो वृन्दावनीको बदल देंगे। और वृन्दावनमें जाओगे तो अवधूको बदल देंगे। काशीमें जाओगे तो अवध, वृन्दावनको बदल देंगे। ऐसे नहीं बनेगा। जो एक 'मैं' है वहाँ परमात्माको ढूँढ़ो। वह वहाँ मिलेगा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

अनित्यमें परमात्माको मत ढूँढ़ो। अनित्यको कर दो बाहर। नित्य है अपना आत्मा। 'अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः। अयमात्मा ब्रह्म' (माण्डूक्य उप०)। श्रुति कहती है—यह आत्मा ब्रह्म है। 'अहं ब्रह्मास्मि' (वृहदा० १.४.१०) 'प्रज्ञानं ब्रह्म' (ऐत० उप० ३.४.) श्रीकृष्ण बोलते हैं—'अहमात्मा' और वसिष्ठजी बोलते हैं—'तत्त्वमसि'। वसिष्ठजी जब रामचन्द्रको उपदेश देते हैं तब कहते हैं—'तत्त्वमसि' राम, तुम्हीं ब्रह्म हो। और श्रीकृष्ण जब अर्जुनसे बोलते हैं तो—मैं ही ब्रह्म हूँ।' दोनोंका अर्थ एक ही है। दोनों परमात्माकी दृष्टिसे ही अपनेको ब्रह्म कहते हैं, परमात्माको ढूँढ़ना कहाँ ? 'अयमात्मा ब्रह्म'। अब दूसरी बात बोलते हैं—'केषु केषु च भावेषु चिन्त्योसि भगवन्मया' (१०.१७)। यह कोई कहानी, उपन्यास नहीं है।

सभी प्रामाणिक आचार्योंने गीताको प्रमाण माना है। शांकर-भाष्य है गीतापर, रामानुजका श्रीभाष्य है गीतापर, निम्बार्काचार्यजी तथा वल्लभाचार्यजीकी टीका भी है। मध्वाचार्यका आनन्द भाष्य है। गीतापर सभी आचार्य शैव-शाक्त, गाणपत्य, सौर, वैष्णव—सभी गीताका आदर करते हैं। गीताको कहानीकी तरह नहीं—मन एकाग्र करके थोड़ी गम्भीरतासे इसका श्रवण करना चाहिए। दुर्गापाठ है; वह केवल पाठ करनेके लिए है, श्रवणके लिए नहीं। और उपनिषदें श्रवण करनेके लिए हैं, पाठ करनेके लिए नहीं हैं और यह गीता जो है—यह श्रवण करनेके लिए भी है और पाठ करनेके लिए भी है। पाठ करनेसे पुण्य होता है और श्रवण करनेसे ज्ञान होता है। कान ज्ञानेन्द्रिय है और जीभ कर्मेन्द्रिय है। जिह्वासे कर्म होता है और कानसे ज्ञान होता है। गीता ज्ञान और कर्म दोनोंको मिलाकर कल्याण करनेवाली है। अद्भुत लीला है भगवान्‌की—

हन्त ते कथयिष्यामि दिव्या ह्यात्मविभूतयः। १०.१८

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

आप देखें—

अहमादिश्च मध्यं च भूतानामन्त एव च । १०-२०

ये जितने भूत हैं, माने जो कुछ पैदा हुआ है, 'भवन्ति इति भूतानि' जो हुए हैं, हो रहे हैं और होंगे—उनका नाम है भूत। जो पहले हुए और गिर गये—अब हो रहे हैं और मिटते जा रहे हैं और आगे होंगे और मिट जायँगे, उनका नाम है—'भवन्ति इति भूतानि'। केवल 'भवन्ति' कह देनेसे काम नहीं चलता है, उसको सोचना पड़ता है। 'अस्ति' और 'भवति'में क्या अन्तर है? यद्यपि धातुका अर्थ एक ही है फिर भी 'अस्ति' और 'भवति'में अन्तर होता है। यह कहते हैं कि जो कुछ हुआ है, और होगा—उसका आदि में—मध्य में—अन्त में, मानो सभी पदार्थोंके आदिमें, मध्यमें, अन्तमें, हमारा चिन्तन करो—

केष केषु च भावेषु चिन्त्योसि भगवन्मया । १०.१७

किस-किस पदार्थमें आपका चिन्तन करें तो सभी पदार्थोंके आदिमें, मध्यमें, अन्तमें मेरा चिन्तन करो। ये भगवान् बताते हैं। अब एक ऐसी बात है कि भूतोंका तो आदि, मध्य, अन्त है परन्तु जो भगवान् बता रहे हैं कि 'अहमादिश्च मध्यं च भूतानामहमेव च', उस 'अहम्'का आदि, मध्य, अन्त है कि नहीं। बस, यहाँ विवेकको आवश्यकता होगी।

गीता सब लोग पढ़ेंगे पर इस बातपर ध्यान नहीं जायेगा। वह कहते हैं कि भूतोंका आदि; मध्य, अन्त तो होता है, पर आदि, मध्य, अन्त मैं हूँ। मेरा आदि, मध्य, अन्त नहीं है। यह उसमें-से ध्वनि निकलती है कि भगवान्की न आदि है, न मध्य है, न अन्त है। और सबके आदिमें, मध्यमें, अन्तमें, भगवान् ही हैं। हम घरसे निकलें तो भगवान्का स्मरण करके निकलें और बीचमें

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

कहीं बैठें तो भगवान्का स्मरण कर लिया और फिर लौटकर जब घरमें आये तब भी भगवान्का स्मरण किया। आदि, मध्य, अन्तमें सर्वदा भगवान् हैं।

मङ्गलादीनि, मङ्गलमध्यानि, मङ्गलान्तानि शास्त्राणि प्रथन्ते।
महाभाष्य १.१.१

आदि, मध्य, अन्त सबमें भगवान् है। अब आपको थोड़ी-सी वेदान्तकी बात सुनाते हैं। जो अपनी आदिके पहले नहीं था और जो अपने अन्तके बादमें नहीं होगा उसकी स्थिति क्या है? अनन्तमें वह क्या चीज है? लोग पूछेंगे, यह सब सुननेसे क्या फायदा है? फायदा यह है कि आप कहीं बँधोगे नहीं। आदि, मध्य, अन्तवाले पदार्थोंमें आप फँस जाते हो, आसक्ति हो जाती है; पाशबद्ध हो जाते हैं, फँस जाना माने पाशबद्ध हो जाना। यह जो जीवनमें फँसावट है, यदि संसारके रहस्यको केवल एक बार—बार-बार विचार करनेकी जरूरत नहीं है—एक बार संसारको समझ लो तो कहीं भी फँसावट नहीं रहेगी। बिल्कुल निर्द्वन्द्व व्यवहार करो। यह चीज छूट गयी। उसके लिए कभी रोना नहीं पड़ेगा। छूटनेवाली चीजके लिए रोना नहीं पड़ेगा—आनेवाली चीजके लिए ललकना नहीं पड़ेगा। व्याकुल नहीं होना पड़ेगा और वर्तमान वस्तुसे मोह नहीं होगा।

आओ सुनो आदि, मध्य, अन्तमें कौन है? अब सृष्टिका विचार हुआ तब कहा गया 'आदावन्ते च यन्नास्ति वर्तमानेऽपि तत्तथा' (माण्डूक्यकारिका २.६)। जो आदि, मध्य, अन्तमें नहीं है वह वर्तमानमें भी नहीं है। एक कहानी वेदान्ती लोग कहते हैं—एक कुम्हार गधा लेकर माटी लानेको जाता था। रोज-रोज जाता। दोपहरको गधोंको बाँध दिया करता था और खुद माटी खोदता था—खाता था, पीता था—लौटते समय गधोंपर लादकर ले

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

आता था। बीचमें गधोंको बाँध देता था और चलते समय गधोंको खोल देता था। अब बन्धनके पहले गधे खुले होते थे। और अन्तमें भी खुले होते थे। बन्धन तो बीचमें आता था। भाग न जायँ इसके लिए बाँध दिया और माटी लेकर घर चलना है, इसके लिए खोल दिया। एक दिन एक रस्सी कम हो गयी। एक गधा खुला रह गया। अब वह कान पकड़कर विचारा खड़ा, क्योंकि गधेके बारेमें आपको मालूम होगा कि वह एक बार जब घास चरने जंगलमें जाता है तो लौटकर स्वयं अपने मालिकके घरमें नहीं आता। उसको लाना ही पड़ता है—डण्डा मारकर, कान पकड़कर लाना पड़ता है, खदेड़कर लाना पड़ता है—लाना पड़ता है तब वह आता है।

एक गधेकी रस्सी नहीं—कैसे बाँधे? फिक्रमें पड़ा था; इतनेमें कोई सज्जन आगये। उन्होंने कहा भाई. उसे जहाँ रोज बाँधते हो वहाँ ले जाकर झूठ-मूठ हाथसे बाँध दे। बाँध दिया, गधा खड़ा हो गया। उसको तो यह लगा कि हम बँध गये। उसने खाया, पीया—मिट्टी लाद दी—चलनेके लिए और सब गधोंको खोल दिया—उसको नहीं खोला। उसको डण्डा मारे कि चल, तो चले नहीं। वहीं-का-वहीं बँधा समझे। फिर वह सज्जन मिले। उन्होंने कहा—जैसे झूठमूठ बाँधा है, वैसे झूठमूठ खोल दे। जाकर हाथ अपना घुमाया और खोल दिया। फिर चलने लगा। देखो बन्धन उसके पाँवमें पहले भी नहीं था और बीचमें भी नहीं था और बादमें भी नहीं था, लेकिन गधेके मनमें जो भ्रम हो गया कि मैं बँधा हुआ हूँ—उसीसे वह बन्धनमें है।

यह जो सृष्टिका, संसारका, बन्धन है यह बन्धनकी उत्पत्तिके पहले नहीं था और बन्धनके बाद नहीं है। यह तो बीचमें है। अब हम अपने लोगोंको क्या बोलें? ईश्वरके घरसे आये, ईश्वरके भेजे हुए आये और लौटनेकी तो सुध है नहीं। आप लोग दृष्टान्तको

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

अपने ऊपर मत घटावें। लेकिन ऐसा लगता है कि जबतक कान पकड़कर कोई ले न जाय, जबतक कोई डण्डा न मारे, जबतक कोई खदेड़े नहीं, इस जंगलमें भटकते रहते हैं। दुनियाँमें जब कोई खदेड़ता है, डण्डा मारता है, कान पकड़कर ले जाता है, सभी लोग ईश्वरकी ओर चलना चाहते हैं। यह जो सृष्टिका आदि, मध्य, अन्त है, यह कहाँ है ? अद्भुत है। कोई सातवें आसमानमें कोई रस्सी होगी और उससे हम लोग बँधे होंगे! अच्छा; रस्सी सातवें आसमानमें नहीं होगी तो नीचे कहीं होगी ? अगाड़ी-पिछाड़ी कुछ लगी होगी।

हम एक बार स्वामी ब्रह्मप्रकाशजी महाराजके यहाँ गये—उत्तर काशीमें—एक महीना रहे—जब मैंने कहा कि अब लौट जानेका मन है तो बोले,—क्यों लौटते हो ? स्वामी तपोवनजीने भी कहा—तुम क्यों लौटकर जाते हो ? अब यहीं रहो। वे लोग माण्डूक्यका प्रवचन सुनते थे। स्वामी तपोवनजी, ब्रह्मप्रकाशजी देवीगिरीजी सबलोग इकट्ठे होते थे। वे बोले—देखो भाई, पीछे कुछ छोड़कर आये हो, तब तो लौटना ही पड़ेगा क्योंकि घोड़ेको बाँधते हैं तो एक रस्सी आगे लगती है और एक उसके पिछले पाँवमें बँधी रहती है। तो अगलीको तोड़ भी दे लेकिन पिछलीको नहीं तोड़ पाता है। यदि तुम्हारी पिछाड़ी लगी हुई हो तब तो लौट जाओ और नहीं तो यहाँसे जानेका क्या काम है ? देखो, आनन्दसे सत्संग करते हैं!

हम जो बँधे हैं—कहाँ बँधे हुए हैं ? ऊपरसे कि नीचेसे—रस्सी तो कहीं दिखती नहीं—अगलसे, बगलसे—इस सृष्टिमें जो बन्धन है वह कहाँसे हैं ? ये केवल मानसिक बन्धन हैं। नहीं तो हिन्दूको कब किसने कहा था कि तुम मनुष्य नहीं हो, मुसल्मानको कब किसने कहा था कि तुम मनुष्य नहीं हो। मनुष्य रहते हुए ही वह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

अपनी मनुष्यताको भूलकर हिन्दू, मुसलमान बन गया। मनुष्यता रहते हुए ही शैव और शाक्त बन गया। मनुष्यता रहते हुए ही शिया, सुन्नी बन गया। और मनुष्यता रहते हुए ही कैथोलिक और प्रोस्टेटंट बन गया। किसने मनुष्यको यह सब बनाया था?

यही भ्रम उत्पन्न हो गया—कैसे? जैसे गधेको बन्धनका भ्रम पैदा होता है, वैसा ही यह बन्धन है। हम ब्राह्मण और तू अन्त्यज, दोनों मनुष्य हैं। मनुष्यताके रहते ही एकमें अन्त्यजपनेका बन्धन हो गया। एकमें ब्राह्मणपनेका बन्धन हो गया। मनुष्यता कहाँ चली गयी? एक ब्राह्मणको मनुष्य होनेके लिए क्या करना पड़ेगा? कौन-सा साधन? छूने-न-छूनेकी बात जुदा है—जब मासिक धर्म होता था तब अपनी माँको नहीं छूते थे। अपनी बहनको, अपनी पत्नीको, नहीं छूते थे। तो क्या हम उससे घृणा करते थे? घृणा नहीं करते थे। जैसे गधेका बन्धन पहले नहीं था बादमें झूठमूठ उसके मनमें बैठा दिया गया। और जैसे बन्धन नहीं था, खोल दिया गया। इसी प्रकार हम लोगोंने अपने मनमें, सुनके-सुनाके, बोलके अपने जीवनमें बन्धन समेटकर रख लिया है।

देखो सृष्टिके आदि, मध्य, अन्तमें कौन है? एक आठ वर्षका बालक अध्यात्म-रामायण सुननेके लिए रोज आता था। पूरा अध्यात्म-रामायण सुनाया और वह आकर पूरे समय बैठता था। एक दिन उसने पूछा—स्वामीजी, आप बीचमें बोलते थे तत्त्व-ज्ञान, ब्रह्मज्ञान—यह सब क्या होता है? आठ वर्षकी उमर है। मैंने कहा—देख घड़ेमें जो माटी रहती है न, उसको तत्त्व बोलते हैं, माटी तत्त्व है और उसमें घड़ा हुआ है। समझ गये? हाँ समझ गया। अच्छा घड़ा जिसमें गढ़ा हुआ है उसका नाम माटी है और माटी जिसमें गढ़ी हुई है, उसका नाम ब्रह्म है, समझ गये? बोला—हाँ, समझ गया। माटीको समझना तत्त्व-ज्ञान है और माटी जिसमें गढ़ी हुई है, उसको समझना ब्रह्म-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

ज्ञान है। संतोष हो गया उसको। ये जो आदि, मध्य, अन्त दिखाई पड़ता है, यह किसमें गढ़ा हुआ है? यह मत समझना कि यह बन्धन पूरबसे आता है। हम अपनी शक्तिको समझते नहीं। यह जो सपना आता है, भगवान्‌ने बड़ी कृपा करके दिया यह। इससे हम अपनी मानसिक शक्तिको समझ पाते हैं। जहाँ रथ नहीं है वहाँ रथ, जहाँ पथ नहीं है वहाँ पथ—जहाँ अथ-इति नहीं है वहाँ अथ-इति—किसने बनाया रथ, पथ?

एक दिन मैंने स्वप्नमें देखा था कि कल्याण-सम्पादनका जो विभाग है, वहाँ लक्ष्मणनारायण गर्दे, नन्ददुलारे वाजपेयी, माधवजी, देवधरजी ये सब इटलीका युद्ध देखने गये। वहाँ जाकर हमको नीचे उतारकर छोड़ दिया और स्वयं हवाई जहाज लेकर उड़ गये। हम पुकारें कि अरे बाबा! हमको भी ले चलो—हमको भी ले चलो! ये लोग कोई सुनें नहीं। लेकिन इतनेमें सपना टूट गया तो न हवाई जहाज, न देवधरजी, न माधवजी, कोई नहीं। मैंने पूछा क्यों माधवजी, रातमें तुमने हमसे ऐसा व्यवहार क्यों किया? बोले—हमको तो नहीं मालूम है। आप लोगोंको ऐसा तो नहीं करना चाहिए था। बोले—बाबा, न तो हम इटली गये, न हवाई जहाज न हम, न तुम! देखो, वह निर्माण किसने किया था? और जिस समय निर्माण हुआ था, बिलकुल सच्चा। उस समय झूठा नहीं मालूम पड़ता था। यह है हमारे मनकी शक्ति। विश्वामित्रने जो नयी सृष्टि बनायी थी, वह शक्ति विश्वामित्रको कहाँसे मिली थी? सारे संसारको संहार करनेकी शक्ति—हमारी सुषुप्ति, हम सब समेटकर सो जाते हैं।

हम दूसरी बात कह रहे थे। भूत, भविष्य बनानेवाला कौन है? आपका जो यही मिनट है—आपका जो यही वर्तमान जीवन है, यह एक ओर भूतको फेंकता जा रहा है और एक ओर भविष्यको बुलाता जारहा है। भविष्यको भविष्य नाम किसने दिया?

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आपके वर्त्तमानने। और भूतको भूत नाम किसने दिया? आपके वर्तमानने। जरा वर्तमानका भी पोस्टमार्टम करलो। एक मिनट—आधा भूत, आधा भविष्य। एक सेकेंड आधा भूत, आधा भविष्य। सन्धिस्थलमें कौन है? एक सेकेण्डके अरबों हिस्से कर दो। और उसमें आधा बादमें और आधा पीछे—बीचमें कौन है? अरे बाबा, भूत और भविष्यका जो विभाजक है, वह तुम हो।

तुम भूत बनाकर चलते हो और भविष्यकी सृष्टि करते चलते हो और भ्रमसे जो कभी दिखा नहीं, जो कभी पकड़में आया नहीं, उसको वर्तमान बोलते हो। एक महात्मा थे, वे कहते थे—जिसको कभी कोई छोड़ नहीं सका, उसका नाम है 'परमात्मा' और जिसको कभी कोई पकड़ नहीं सका, उसका नाम है 'संसार'। सीधी-सीधी बात है न! आजतक कोई इस संसारको पकड़कर नहीं लेगया और कोई नहीं छोड़ सका, अपनी आत्माको। आप अपनी शक्तिपर विचार करें। यह पूरब-पश्चिम किसने बनाया है? ईश्वरने? ये ऊपर, नीचे, सामने, पीछे, दाहिने, बाँये, किसने बनाया? ऐसे लगता है कि ईश्वरने पूरब-पश्चिम, उत्तर-दक्षिण हमारे साथ कर दिया है।

देखो, हम यहाँ बैठे हैं तो आपलोग किस तरफ हैं? और वहाँ बैठ जायें तो? आप किस तरफ होंगे? ये बिन्नाणीजी और संगीताचार्य गङ्गादासजी बैठे हैं। अभी तो हमसे पूरब हैं और देवधरजी पश्चिम हैं लेकिन हम इनसे पूरब जाकर बैठ जायँ तो ये हमसे पश्चिम हो जायेंगे। कौन पूरब-पश्चिम बनाता है? ईश्वर नहीं बनाता है। आपका मैं जहाँ रहता है, वहाँसे पश्चिम शुरू होकर—इधरको जाता है। पूरब-पश्चिमका आदि-अन्त देखो। हमारे पास आकर पूरबका अन्त हो जाता है। हमारे पास आकर पश्चिमका अन्त हो जाता है। नया-नया पूरब, नया-नया पश्चिम,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

नया-नया ऊपर, नया-नया नीचे हम बनाते चलते हैं। लेकिन इस आत्मशक्तिका बोध कहाँ है ?

हमको दूसरी बात कहनी है। ये जो दुनियाँ दीख रही है, ये पेड़, ये पौधे, ये चिड़ियाँ, ये स्त्रियाँ, ये पुरुष, ये पोथियाँ, ये रेकार्डर, ये सब किसने बनाये ? हमारे ज्ञानने बनाया है। जब हम सो जाते हैं तो ये सब कहाँ जाते हैं ? जिससे जिसकी उत्पत्ति होती है, जिसमें जिसकी स्थिति होती है और जिसमें जो लीन हो जाता है, उस उत्पत्ति, स्थितिके आधारसे, अधिकरणसे, अधिष्ठानसे उत्पन्न होनेवाला, स्थित होनेवाला, अलग होना ही नहीं है। हे भगवान् ! सृष्टिका निर्माता कहाँ रहता है ? बच्चेसे पूछते हैं। सृष्टि बनाने-वाला कहाँ रहता है ? अङ्गुली दिखा देगा, आसमानमें। ठीक है, वह बच्चा है। धरती कहाँ टिकी है ? बैलके सींगपर। आपलोगोंने सुना है कि नहीं ? नहीं आठ हाथी आठों तरफ रहते हैं और वे अपनी सूँड़पर धरतीको उठाये हैं। पर असली बात यह है कि धरतीको उठाये हुए है आपका मन—आपके मनके भीतर रहने-वाला परमात्मा। इसको आत्मा कहो, परमात्मा कहो। यदि यह नहीं, तो लय नहीं होता। जब हमारा भान रहता है तब सब मालूम पड़ता है। जब हमारा भान शान्त हो जाता है—भान माने मालूम पड़ना—प्रतीत होना। जब कुछ नहीं—मूर्च्छामें, सुषुप्तिमें, समाधिमें किसने यह दुनियाँ देखी है ? कहाँ जाती है वह ? जब हमारा होश है तब सब है और होश नहीं है तो कुछ नहीं है। होशसे जुदा दुनियाँ कुछ नहीं है।

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं—जो पहले नहीं था और पीछे नहीं रहेगा—मध्यमें भी वह नहीं है, केवल नाम मात्र है, कल्पित नाम है। जिसके पहले माटी—पीछे माटी—मनगढ़न्त घड़ा। भूत माने प्रसिद्ध; जिससे जिसकी उत्पत्ति होती है, और जिससे जिसका भान होता है, वह अहम्—परमात्मा। जो दूसरेके द्वारा प्रकाशित

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

होता है और दूसरेसे उत्पन्न होता है। वह उत्पन्न हुई परन्तु, वह मालूम पड़नेवाली वस्तु जिससे मालूम पड़ती है, जिससे उत्पन्न होती है, उससे निराली नहीं होती है, न्यारी नहीं होती है, जुदा नहीं होती है वह। वह ब्रह्म है, परमात्मा है। हमारे जाननेमें सब दुनियाँ बची है, हमारे सोनेसे हमारी दुनियाँ बिगड़ जाती है। 'अत्र पिताऽपिता भवति माताऽमाता, लोका अलोका:, देवा अदेवा: बेदा अवेदा:' (बृहदा ४.३.२२)। इसका नाम वेदान्त-दर्शन है। केवल भानसे मालूम पड़ता है और अभानसे लोप हो जाता है और केवल सत्से उत्पन्न होता है और सत्में लीन हो जाता है। सत् और भान दोनों एक हैं; इसलिए परमात्मासे अलग यह सृष्टि नहीं है। सृष्टि परमात्मारूप है।

गांधीजी एक वाक्यका प्रयोग किया करते थे 'सबै भूमि गोपालकी यामें अटक कहाँ? जाके मनमें अटक है सोई भटक रहा'। कौन दुश्मन है? कौन दोस्त है? न दुश्मन है, न दोस्त है। अपने मनके खिलाफ हो तो दुश्मन हो गया और अपने मनके मुताविक हो तो दोस्त हो गया। मतलब क्या हुआ? दोस्त-दुश्मन किसने बनाया? मनने बनाया। और हम मनके साक्षी, द्रष्टा मनसे परे, मनके भीतर बैठके मनको देख रहे हैं। मनने देखी मनकी आदि। जब नींद टूटी तो मन आगया सामने। जाग्रत रहा, स्वप्न रहा—मन बना रहा। जाग्रत-स्वप्न गया फिर सुषुप्ति आयी मनकी आदि देखी। मनका मध्य देखा। मनका अन्त देखा। ये कौन है? हमने माँ बनायी, हमने बाप बनाया। हमने भाई बनाया। हमने जाति बनायी। हमने मजहब बनाया। हमने राष्ट्र बनाया। अपने-परायेका भेद किया और अपने ही बनाये हुए भेदमें ऐसे उलझ गये मानो यही त्रिकालाबाधित सत्य हो। यही परमात्मा हो—कभी न मिटनेवाला।

एक दिल्लीमें सेठ रहते थे। आर्यसमाजी थे। वे मुहूर्त वगैरह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

नहीं मानते थे। पञ्चाङ्ग, मुहूर्त, ग्रह कुछ नहीं मानते थे। एक बार उनके लड़केकी शादी पड़ी तो उन्होंने स्वयं निश्चय किया कि बरात यहाँसे शामको सात बजे निकलेगी और घण्टेभरमें वहाँ दरवाजेपर पहुँचेगी और फिर साढ़े आठ या नव बजे तक विवाह सम्पन्न हो जायेगा और फिर खान-पान होगा। अब बरात निकलनेके समय बाजेवाले नहीं आये। देर हो गयी—देर हो गयी तो वे छटपटाये—भीतर जायें, बाहर निकलें और कहें मुहूर्त बिगड़ रहा है। अब सात बजेका मुहूर्त तो उन्होंने ही बनाया था, वह कोई ज्योतिषीने नहीं बनाया था। हमने एक बड़े पण्डितसे पूछा—यह सब भद्रा-वद्रा कहाँ वेदोंमें है ? वेदमें तो भद्रा शब्द बड़े अच्छे अर्थमें आता है।

आनोभद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः। ऋग्वेद १.८९.१
भद्रं कर्णेभिः श्रुणुयाम देवाः भद्रं पश्ये माक्षभिर्यजत्रा।
ऋग्वेद १.८९.८

तब ज्योतिषमें खराब अर्थमें भद्रा कहाँसे आयी ? अब पण्डितजीने तो कुछ बताया नहीं और हमको मिला नहीं। बात रह गयी ज्यों-की-त्यों। ये रविवार, सोमवार, मङ्गलवार जो हैं, इनका २००० वर्षके पहलेसे किसी ग्रन्थमें वर्णन नहीं है। किसने बताया कि रविवार और शुक्रवारको पश्चिम नहीं जाना; सोमवार, शनिवारको पूरब नहीं जाना और मङ्गल, बुधको उत्तर नहीं जाना और गुरुवारको दक्षिण नहीं जाना। अब यह प्राचीन ग्रन्थोंमें तो कहीं मिलता ही नहीं है। किसने बनाया ? हमारे बापने बनाया। हमारे दादाने बनाया। लेकिन भाई वह इसलिए नहीं बनाया कि कभी रविवार, शुक्रवारको पश्चिम चले जाओ तो नरक मिले—सोमवार, शनिवारको पूरब जाओगे तो नरक मिलेगा ? नहीं उसका स्वर्ग-नरकसे कोई सम्बन्ध नहीं है। वह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

एक लौकिक मान्यता है। हम बनाते हैं और अपने बनाये हुए जालमें स्वयं उलझ जाते हैं।

यह सारी सृष्टिकी स्थिति यही है। हमने बनायी यह—जातीयता, राष्ट्रीयता और मजहबीपना। यह सब हमने बनाया और हम बनाकर उसमें इतने उलझ गये—देखो आदिमें, मध्यमें, अन्तमें भगवान्की यह लीला है। इसका नाम विभूति है। आदिको मत देखो—अहम्को देखो—अन्तको मत देखो, परमात्माको देखो। और महात्मा लोग यह देखते हैं, और देखते हैं इसलिए उनके लिए जीवन-मरण एक हो जाता है। आप तो गणितके बड़े विद्वान् हैं। सूर्यका सम्बन्ध पृथिवीसे क्या है, आप इनको गिन लेते हैं लेकिन एक आदमीके साथ इसका सम्बन्ध क्या है, इसको गणना करनेके लिए कोई गणित है? ज्योतिषी लोग नाराज न हों। अपने आप बनाते हैं और अपने आप रोते हैं।

आपने सुना होगा एक सज्जनने बाजारमें एक घड़ा तेल खरीदा। और एक कुलीके सिरपर रखवा लिया और तय किया कि एक रुपया मजदूरी देंगे हमारे घर तक पहुँचा दो। जब वह कुली चला—उसने सोचा, एक रुपयेसे मुरगी खरीदेंगे फिर बचे तो बकरी खरीदेंगे। फिर गाय खरीदेंगे। फिर घोड़ा खरीदेंगे। फिर मकान बनवायेंगे। फिर व्याह करेंगे। फिर घरवाली होगी। फिर बच्चे होंगे और मैं दरवाजेपर, पलङ्गपर बैठकर गुड़गुड़ी पीता होऊँगा और बेटा आकर कहेगा कि मुझे भोजनके लिए बुलाया है और मैं कहूँगा उँ! बस घड़ा गिर गया।

अब मालिकने कहा तुमने हमारा एक घड़ा तेल खराब किया!

उसने कहा—बाबू, तुम्हारा एक घड़ा तेल खराब हुआ और हमारे तो बकरी गयी, गाय गयी, घोड़ा गया, घर गया, घरवाली गयी, बच्चा गया, हमारा तो सर्वनाश हो गया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

यह अपने मनसे जो दुनिया बनाते हैं, यदि आप सोचोगे तो मालूम पड़ेगा। हम आप यदि इसपर विचार करेंगे कि क्या-क्या आपने बनाया है, और क्या-क्या आप बिगाड़ कर सो जाते हैं—तो केवल आत्मसत्ताके सिवाय दूसरी कोई वस्तु नहीं मिलेगी।

एक कुम्हार किसी राजाके महलके पास रहता था। दिनभर बिचारा घड़ा बनाता—माटी लाता, उसको तपाता, बाजारमें बेचता, रुपया दो रुपया मजदूरीका मिल जाता, काम चलता था। पर रातको जब सोता तब राजा हो जाता। महलका मालिक, रानी, सेनापति, धन, सम्पदा—रोज-रोज! अब वह जब घड़ा बनावे, माटी खोदे, बजारमें बेचने जावे तो रोता रहे—क्यों रोता रहे—अरे कब नींद आयेगी? हम सोजायेंगे और फिर राजा हो जायेंगे। वह सपनेका राजा उसके लिए इतना प्यारा हो गया, इतना अभ्यस्त हो गया। इतना वह ठीक समझने लगा, उस राज्यको कि उसको जाग्रत-अवस्थाकी कोई वस्तु अच्छी ही न लगे।

हमने यह जो अपना सपना सँजोया है, वह इतना पक्का हो गया है कि अपनी असलियत अच्छी नहीं लगती, अपनी बनावट अच्छी लगती है। भगवान्को जाननेका, सृष्टिका आदि, मध्य, अन्त जाननेका फायदा क्या है? सच यह है कि हम जो अपने ही बनाये हुए कटघरेमें हैं, अपने ही बनाये जेलखानेमें हैं, अपने ही बनाये हुए बन्धनमें बँध गये हैं। इससे मुक्त हो जायेंगे। जीवन्मुक्त हो जायेंगे। जीवन्मुक्त हो जायेंगे और फिर निर्द्वन्द्व होकर जो काम करेंगे निश्चिन्त होकर करेंगे। उसमें न कोई आगेकी चिन्ता है, न पीछेकी चिन्ता है। इस समयको हम अपने-आपसे भर रहे हैं। अपने-आपसे हम सारे समयको भरते चल रहे हैं। हम समयके पराधीन नहीं हैं। समयको हम जान-बूझकर भर रहे हैं।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

प्रवचन : ७

६-११-८१

सारी गीता सुनकर अर्जुनने अन्तमें कहा—'करिष्ये वचनं तव' (१८ ७३) मैं आपकी आज्ञाका पालन करूँगा। गीताके प्रारम्भमें अर्जुनकी आज्ञाका श्रीकृष्णने पालन किया था ! 'सेनयोरुभयोर्मध्ये स्थापयित्वा रथोत्तमम् (१.२४)। कृष्ण दोनों सेनाओंके बीचमें मेरा रथ जमा दो। पहले भगवान्ने अर्जुनकी आज्ञाका पालन किया, और अन्तमें अर्जुनने कृष्णकी आज्ञाका पालन किया। 'करिष्ये'— करूँगा, कर्म-प्रेरणा प्राप्त हुई। पर कर्म-प्रेरणाके मूलमें दर्शन है कि नहीं, दृष्टि है कि नहीं। दृष्टिहीन कर्म अन्धा होता है। आँख न हो और आदमी चलता हो तो उसको दृष्टिहीन कर्म कह दिया। बुद्धि न हो, तब भी कर्म करता है तो उसको दृष्टिहीन कर्म कह दिया। गीतामें अर्जुनको कर्म नहीं दिया है, दृष्टि दी है। बिना दृष्टिके जो कर्म होगा वह 'कान्दिशीक'—(संस्कृत भाषामें) कहलाता है—किधर जाना ? आँखके बिना अन्धा चले तो कहाँ जावे ? कर्म अन्धा है और दृष्टि पङ्गु है। पङ्ग माने लंगड़ी। आँख है लंगड़ी और एक पाँव है अन्धा।

एक जगह दो भिखारी थे। एक लंगड़ा और एक अन्धा। दोनोंके मनमें यह इच्छा थी कि हम बद्रीनाथकी यात्रा कर आवें। चुप-चुप रहते थे मनमें, एक दिन सलाह कर ली। सलाह करली तो दोनोंकी वही वासना थी। अन्धेने कहा क्या करें भाई; हमको दीखता नहीं, नहीं तो हम बद्रीनाथ जाते। लँगड़ने कहा हमसे चला नहीं जाता—अगर चल सकते तो हम भी बद्रीनाथ जाते।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

अब दोनोंमें सलाह हुई। अन्धेके कन्धेपर लंगड़ा बैठ गया और वह रास्ता बताता जाय और अन्धा चलता जाय। तो लंगड़ेकी आँख और अन्धेके पाँव। दोनों में जब दोस्ती हो गयी तो बद्रीनाथकी यात्रा कर आये।

ये सांख्य-दर्शनके मूलमें ही सूत्र है। 'अन्ध-पङ्गु न्याय' बोलते हैं इसको। यह जो हमारा कर्म है यह अन्धा होता है—यह आगे पीछेकी कुछ नहीं समझता और हमारी अन्तर्दृष्टि होती है, वह आगे और पीछेका सब समझती है। मनुष्यके अन्दर, जीवके अन्दर शक्ति तो है परन्तु अन्तर्दृष्टि जो है वह शुद्ध नहीं है। शुद्ध नहीं है माने कभी घबड़ा जाता है—घाटा निकला सेठजीको—हमलोग तो सेठोंकी ही बात करते हैं—घाटा आया घबड़ा गये—तबीयत खराब हुई। डॉक्टरने आकर २.४ सुई लगादी। पर वह जो घाटेवाला दुःख है, वह सुई लगानेसे तो नहीं मिटता है। घबड़ाहटमें भी काम नहीं करना चाहिए और लोभमें आकर भी काम नहीं करना चाहिए। लोभमें आदमी गलत कदम उठाता है और घबड़ाहटमें, उद्वेगमें भी गलत कदम उठाता है। दृष्टि बनी रहनी चाहिए। और अपनी दृष्टिमें जब वासना मिल जाती है तब वह गन्दी हो जाती है और जब हमारी दृष्टिमें वासनाका मेल नहीं होता है तब स्वयं भगवान् बोलते हैं।

अद्भुत लीला है—आप देखें दोनों ओरसे भगवान् अपना स्वरूप बताते हैं। 'अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः।' तब यह जगत् क्या है? यह संसार क्या है? यह प्रश्न हुआ।

अहमादिश्च मध्यं च भूतानामन्त एव च।

ये जो संसारके पदार्थ, प्राणी दीख रहे हैं, इनका आदि, मध्य, अन्त नहीं है। इसका अर्थ है कि जगत्के रूपमें भी मैं ही हूँ और आत्माके रूपमें भी मैं हूँ। तब? जहाँ जाओ वहाँ परमात्मा, जहाँ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

रहो वहाँ परमात्मा। जहाँ पहुँचो वहाँ परमात्मा। फिर तो फिक्र करनेकी कोई जरूरत ही नहीं है। बेफिक्र अपने कर्तव्यका पालन करते रहो। अब दृष्टि यहाँ क्या है? दृष्टि है—आत्मा ही परमात्मा है। यह तो देहके बन्धनमें, वासनाओंके बन्धनमें आजानेके कारण हम ठीक-ठीक नहीं देख पाते हैं।

एक बार महात्माओंकी पञ्चायत जुड़ी। ८.१० अच्छे-अच्छे महात्मा गङ्गा किनारे बैठ गये। श्रीउड़िया बाबाजीने १२ घंटेका आसन जमाया। चर्चा होरही थी कि हम यह कैसे समझें कि हमारे मनमें जो यह बात आयी है वह ईश्वर-प्रेरणा है या हमारी वासना है। आप समझ सकते हैं। यदि शत्रुको नीचा दिखानेके लिए आपके भीतर कोई प्रेरणा आती है तो उसमें वासना है और अपने सगे-सम्बन्धियोंका स्वार्थं सिद्ध करनेके लिए कोई प्रेरणा आती है तो उसमें भी वासना है। जब कभी हमारा अन्त:करण शुद्ध होता है—ऐसे क्षण जीवनमें कभी-कभी आते हैं—जब वासनाएँ शान्त हो जाती हैं, जब चञ्चलताएँ मिट जाती हैं, जब भीतरका प्रकाश निर्बाधरूपसे अपने जीवनमें प्रकट होने लगता है—उस समय ईश्वरकी वाणी सुनायी पड़ती है। उस समय ईश्वरकी प्रेरणाका अनुभव होता है।

उसी समय 'इलहाम' अन्त:-प्रतिभा जाग्रत होती है—इसके लिए थोड़ी देर शान्त रहकर विचार करना आवश्यक है। पाँच मिनट ही सही। एक बार सब सम्बन्धोंसे, सब वासनाओंसे, मुक्त होकर, सब विक्षेपोंसे मुक्त होकर, थोड़ी देरके लिए बैठ जाना चाहिए। और देखो ईश्वर क्या बोलता है? 'हमको क्या तू ढूँढ़ें बन्दे हम तो तेरे पास हैं।' ऊपर जानेसे ईश्वर मिलेगा? नहीं, ऊपरका कभी अन्त नहीं होगा। पश्चिम-पूरब जानेसे ईश्वर नहीं मिलेगा। पूरब-पश्चिमका कभी अन्त हो नहीं मिलेगा। यदि संसारका अन्त कहीं मिलेगा तो अपने आपमें

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

मिलेगा। द्रष्टामें संसारका अन्त मिलेगा। कितनी बड़ी प्रेरणा है अपने जीवनके लिए कि हमें ईश्वरको ढूँढ़नेके लिए, उसकी शक्ति लेनेके लिए—कहीं जानेकी जरूरत नहीं है।

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति। १८.८१

हृदयमें ईश्वर रहता है। अब यह हुआ कि दुनियामें कुछ ऐसा है, कुछ वैसा है तो इसमें हम भटक जाते हैं। तो दूसरी बात भगवान्‌ने यह बतायी कि संसारके रूपमें भी, जगत्‌के रूपमें भी, मैं ही हूँ। यह तो हमलोग छोटी-छोटी चीजोंको देखते हैं। एक उच्चकोटिके वेदान्तका ग्रन्थ है—'खण्डन-खण्ड-खाद्य।' हमारे पितामह जब वेदान्त-ग्रन्थोंका नाम लिया करते थे तब 'अद्वैत सिद्धि', 'चित् सुखी', 'खण्डन-खण्ड-खाद्य' और 'सिद्धान्तलेश' इन चार ग्रन्थोंका नाम एक साथ लेते थे। ये बड़े गम्भीर ग्रन्थ हैं संस्कृत-साहित्यके। अब तो इनको पूरी तरहसे पढ़ने-पढ़ानेवाले भी कम होंगे। 'खण्डन-खण्ड-खाद्य'में एक प्रश्नोत्तर है। मैं जरा सरल करके बोलता हूँ। इसकी भाषा तो कठिन है। एक जिज्ञासु आया। उसने सन्तसे प्रश्न किया—महाराज, यह सृष्टि कैसे हुई? जिनको अवकाश होता है और जिज्ञासा होती है और सत्सङ्गमें रुचि होती है, वे जानना चाहते हैं कि यह सृष्टि कैसे हुई?

महात्माजी बोले—भाई मेरे, हम तो स्वप्रकाश, चिदात्मा परब्रह्ममें बड़े आनन्दसे रह रहे हैं। हम मौजमें रह रहे हैं। हमको सृष्टि कैसे हुई, इस उधेड़-बुनमें पड़नेकी क्या जरूरत? अपने तो मस्तराम हैं—सृष्टि चाहे कैसे भी हुई हो! हम तो बड़े आनन्दमें हैं। कुछ पूछने-बतानेकी जरूरत नहीं।

नहीं महाराज, हमारी बड़ी जिज्ञासा है। आपको तो बतानेकी जरूरत नहीं पर आप हमपर कृपा करके बता दीजिये। हमें जरूरत है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

बोले—अच्छा तुमको कैसा लगता है ?

बोले—हमको तो ऐसे लगता है कि यह सृष्टि हमेशासे ऐसी ही है।

भलेमानुष, सृष्टि रोज तो बदल रही है, हमेशासे ऐसी ही है—ऐसा कैसे मानते हो ?

बोले महाराज, परमाणुओंसे जुड़कर बनी होगी ?

बोले—परमाणु जुड़ेंगे कैसे ? वे तो निरवयव होते हैं। उनके अङ्ग नहीं होते तो वे जुड़ेंगे कैसे ?

अच्छा महाराज, चित्तसे सृष्टि हुई होगी ?

चित्तकी सृष्टि तो टिकाऊ नहीं होती। स्वप्नमें सृष्टि होती है, टूट जाती है।

अच्छा, तो शून्यसे सृष्टि हुई होगी ?

जहाँ कुछ नहीं है, वहाँ कुछ कैसे ऐसा होगा ?

अच्छाजी, प्रकृतिसे सृष्टि हुई होगी तो प्रकृति नित्य और बदलनेवाली भी हो, यह कैसे हो सकता है ?

अच्छा, तो ईश्वरसे सृष्टि हुई होगी ? ईश्वरको क्या पड़ी है कि वह सृष्टि करने आगया।

अब वह जिज्ञासु जितने सृष्टिकी उत्पत्तिके प्रकार बतावे, वह महात्मा उसका खण्डन करते जावें। यह सृष्टि क्या है ? बोले जो मैं हूँ सो ही सृष्टि है। देखो !

अहमात्मागुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः। और
अहमादिश्चमध्यं च भूतानामन्त एव च।

भगवान्‌ने कहा कि जो मैं हूँ सो तुम हो। और जो मैं हूँ सो सृष्टि है। यह तो अद्भुत बात हो गयी। एकबार मैं अपने मित्रके घरमें ठहरा हुआ था। वे अफसर थे। दस बजे वे जब जाने लगे, उस समय एक बड़े अच्छे महात्मा ही थे बातचीतके प्रसङ्गमें

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

उन्होंने कहा कि तुम्हारी बुद्धि चञ्चल है। और उसके बाद १० बज़े वे किवाड़ बन्द करके मैं तो भीतर और वे कचहरी करने चले गये। जब कचहरी करके ४-४॥ बजे लौटे, मैं वहींपर बैठा था। और तबतक मैंने यही विचार किया था कि चञ्चलता क्या होती है? ६ घण्टेके भीतर यही विचार किया और आनेपर उनको सुनाया। सुनकर बहुत प्रसन्न हुए।

जो कुछ हमको सृष्टिमें दिखता है और जो मैं देखनेवाला हूँ—देखनेवाला 'मैं' होता है और दीखनेवाला 'यह' होता है। और यहमें जो पास होना है उसको 'यह' बोलते हैं और जो दूर होता है उसको 'वह' बोलते हैं। हमारे लिए तुम 'तुम' हो मैं 'मैं' हूँ। परन्तु तुम्हारे लिए तुम 'मैं' हो और मैं 'तुम' हूँ। यह मैं और तुम—जिसका नाम 'मैं' है उसका नाम 'तुम' हो जाता है—जिसका नाम 'तुम' है, उसका 'मैं' हो जाता है। असलमें सृष्टि बिलकुल एक है, इसमें स्रष्टा, द्रष्टा और सृष्टि, दृष्टि—सब परमात्माका एक अविचलित स्वरूप है। इस विचारसे क्या हुआ कि हम संसारसे वैराग्य करें? या राग करें? भागवतमें इसकी बहुत विलक्षण व्याख्या है।

अच्छाजी, संसार है विकार और आत्मा है निर्विकार; तो आओ संसारका परित्याग कर दें। भागवतका कहना है कि यह तर्क अशुद्ध है।

नहि विकृतिं त्यजन्ति कनकस्य तदात्मतया,
स्वकृतमनुप्रविष्टमिदमात्मतयावसितम् । १०.८७.२६

जैसे—सोना है। इसका विकार क्या है? कङ्गन है, हार है—ये उसमें आकार बने—चूरा, द्रव—सिल्ली सब आकार हैं। अच्छा जी, सोनेको तो रख लो और इन सबको फेंक दो। वस्तु तो रख लें और उसके विकारको फेंक दें। सोना तो रख लें और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

जेवर फेंक दें। मिट्टी रख लें और घड़ा फेंक दें ? यह सर्वथा अयुक्त है। 'नहि विकृतिं त्यजन्ति कनकस्य तदात्मतया।' सोनेके विकारका कोई भी परित्याग नहीं करता क्योंकि 'तदात्मतया'—जो सोना है वही सोनेसे बना जेवर भी है। जो परमेश्वर है, वही जीव है। और जो परमेश्वर है वही यह सृष्टि है। कोई भी वस्तु इसमें तिरस्कार कर-कर छोड़ने योग्य नहीं है। 'स्वकृतमनुप्रविष्ट-मिदमात्मतयावसितम्।'

स्वयं बन गये, स्वयं बना लिया, स्वयं सबके रूपमें हो गये। यह श्रुति है। 'तज्जलानिति शान्त उपासीत'। (छान्दोग्य उप० ३.१४.१) यह सृष्टि क्या है ? तज्ज, तल्ल, तदन—उसीमें यह पैदा हो रही है, उसीमें यह स्थित हो रही है, उसीमें लीन हो रही है। अपने हृदयको राग-द्वेष रहित जीवन्मुक्तिका विलक्षण सुख अनुभव करनेके लिए इससे और कोई बढ़िया चीज नहीं होती है। ये देखो श्याम, ये देखो श्याम, ये देखो श्याम—जहाँ देखता हूँ वहाँ तू-ही-तू है। यही परमेश्वरका निरन्तर दर्शन है। ऋग्वेदके ऋषिने गाया—'अयं मे हस्तो भगवान्'। (१०.६०.१२) अद्भुत मन्त्र है। ये मेरा हाथ ईश्वर है। यह मेरा हाथ ईश्वरसे भी बड़ा है। 'अयं मे भगवत्तरः'। (१०.६०.१२)

मैं जिसको छू दूँ उस मुर्देमें भी जान आजाय, ऐसा है यह मेरा हाथ क्योंकि इसमें-से ईश्वरकी शक्तिकी धारा प्रवाहित होती रहती है। जो जाग्रत कर लेते हैं—वे किसीके सिरपर हाथ रखकर भी शक्ति सञ्चार कर देते हैं। छूकर भी शक्ति सञ्चार कर सकते हैं। किसी-किसीके छूनेसे करेन्ट लगता है। अभी तो वैज्ञानिक लोगोंने भी यह अनुसन्धान किया है—वे ऐसा यन्त्र बनावेंगे कि शरीरसे जो ऊष्मा, गरमी निकलती है, उससे बैटरी चालू हो जावेगी तो वे उड़ सकेंगे। हमारे शरीरमें ही ऐसी गरमी है कि उस बैटरीके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

साथ सम्बन्ध जोड़कर एक व्यक्ति उड़ सकता है; जब उस शक्तिका सञ्चार हो जायेगा।

सारी शक्तियोंका केन्द्र—यह जो हाथ उठा लेता है और गिरा देता है, जो पाँव उठा लेता है और गिरा देता है, इन सब शक्तियोंका केन्द्र तो इस शरीरमें ही है न! और इसका जहाँ प्रेरक है—एक ही ऐसा मसाला है—उपादान है—कि वही एक रूपमें उपादान होकर सबका निर्माण करता है। उपादान समझो घड़ेके लिए मिट्टी। उपादान उसको बोलते हैं जो कार्यमें अनुगत होता है, जैसे मिट्टी घड़ेमें आयी—डण्डा तो नहीं आया, चाक तो नहीं आयी, कुम्हार तो नहीं आया तो वे सब निमित्त कारण होते हैं और उपादान कारण होता है वह, जो अपने कार्यमें भीतर रहता है।

ईश्वर जगत्‌का कुम्हार जैसा कारण नहीं है—माटी जैसा कारण है और माटी जैसा कारण होनेपर भी वह चेतन है। चेतनरूपसे तो वह द्रष्टा रहता है, आत्मा रहता है और उपादान-रूपसे वह सारा संसार बन जाता है। अद्भुत है—माने ईश्वरके सिवाय दूसरी कोई वस्तु नहीं है।

अब अर्जुनके लिए यह युद्ध भी भगवद्रूप ही है। इसमें भी धर्मका अनुगमन है। जो प्रेरक परमात्मा है, जो उपादान परमात्मा है, वह युद्धमें भी आया, वह कर्ममें भी आया। और तुम क्रियाको, मनको देखो, छोटी-मोटी चीजोंको मत देखो। यह मत देखो कि भीष्म ऐसे हैं और द्रोण ऐसे हैं और जयद्रथ और कर्ण और दुर्योधन ऐसे हैं—यह मत देखो। तुम यह देखो कि सबके भीतर एक परमात्मा है।

हत भी मैं ही और हन्ता भी मैं ही। तुम मुझपर दृष्टि रखकर अपना काम करो। वह दृष्टि दे दी जो सर्वात्म-भावसे युक्त होती

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

है। जिनको यह सर्वात्म-भावकी दृष्टि नहीं प्राप्त होती है उनको कोई काम करनेसे ग्लानि हो जाती है, और कोई काम करनेसे अभिमान हो जाता है। देखो, हमारे महात्मा लोगोंने ऐसा कहा कि अपने मनसे अच्छा-से-अच्छा काम करोगे तो अभिमान होगा कि मैंने कितना बढ़िया काम किया है। और दूसरेकी आज्ञासे अगर कभी गलत भी काम हो जायेगा तो अपने मनमें उसकी ग्लानि नहीं होगी। यह होगा कि यह तो आज्ञासे हुआ है, अनुज्ञासे हुआ है। अच्छे कामका अभिमान अपनेमें नहीं आवे और बुरा कामकी ग्लानि नहीं आवे इसलिए 'करिष्ये वचनं तव'—अन्तमें अर्जुनको यह बोध प्राप्त हुआ।

> अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः।
> अहमादिश्च मध्यं च भूतानामन्त एव च॥

अब देखो, इसीमें यह प्रेरणा भरी हुई है कि आप जो अपना काम करते हैं, उसको कीजिये। वह कैसे ?

> यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम्।
> स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः॥ १८.४६

ये सबलोग चलते-फिरते कैसे हैं ? अभी आत्मरस तो बना नहीं—आत्मबटी भी नहीं बनी—कलेजा, किडनी बदल देते हैं। अङ्ग-अङ्ग बदल देते हैं। वह सब ठीक है लेकिन कोई चैतन्यवटी बनाकर उसे मुर्देमें डाल दिया करे। अभी तो ऐसा कोई तत्त्व प्रकट हुआ नहीं है, जिससे चैतन्यरस, चैतन्यबटी बन सके। उसका आविष्कार नहीं हुआ है। तो ये सब चलते फिरते कैसे हैं ? हमारी जो धड़कन है, यह पिताके वीर्यमें भी चल रही थी, माताके पेटमें भी चल रही थी और मरणपर्यन्त—अन्तिम क्षणतक चलती है—यह अपना काम करती है। धड़कन अपना काम बन्द नहीं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

करती। ये बाबाजी लोग कहीं-कहीं नुमाइश करते हैं—कि हम अपनी धड़कन बन्द कर लेते हैं, वह एक मिथ्या अपचार है। इसमें कुछ सच्चाई नहीं है। हाँ, उसको हम ग्रहण नहीं कर पाते हैं। यह बात दूसरी है, लेकिन वह बन्द नहीं होती है।

वह तो प्राणन शक्ति है शरीरमें—शरीरमें एक धा रणी शक्ति होती है पृथिवीकी और आप्यायनी शक्ति होती है जलकी। और प्रकाशिनी शक्ति होती है तेजकी—तेजस्विनी और चालिनी शक्ति होती है वायुकी और आधार-शक्ति होती है आकाशकी और वह सबके शरीरमें एक सरीखी रहती है, परन्तु चैतन्य रसके सम्बन्धसे ही सब-का-सब काम होता है। यह जो हमारी धड़कन है, यह अपना काम कभी बन्द नहीं करती और पृथिवी-शक्ति, जलकी शक्ति, वायुकी शक्ति, अग्निकी शक्ति, आकाशकी शक्ति, कभी काम बन्द नहीं करती है। इसलिए गीतामें बताया 'न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्'। (३.५) कोई निकम्मा तो क्षणभर भी रह ही नहीं सकता।

कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः। ३.५

यह प्रकृतिजन्य गुण ही है कि वे हर समय कोई-न-कोई काम लेकर रहते हैं। उसमें विश्राम भी एक दृष्टि है। विश्राम एक अवस्था नहीं है। विश्राम एक दृष्टि है। वह महात्माओंको प्राप्त होती है। काम करते रहते हैं और उनको विश्राम मिलता रहता है। काम करते हुए भी विश्राम! देखो, यह हमारा शरीर प्रवृत्त कैसे होता है? और किस मसालेसे बना है? आप इसी श्लोकमें देखो—'यतः प्रवृत्तिर्भूतानाम्'—यह तो है 'अहमात्मा गुडाकेश' और 'येन सर्वमिदं ततम्' यह है 'अहमादिश्च मध्यं च भूताना-मन्त एव च'। जो सबको हिलाता है और जो सब बना, अपने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

कर्मके द्वारा हमें उसीकी पूजा करनी है। गँवारू सेवा नहीं करनी चाहिए।

एक गँवारके घरमें गुरुजी आये। दोनों गँवार भाई-भाई थे। उन्होंने सेवा बाँट ली। दाहिना पाँव बड़े भाईका और बायाँ पाँव छोटे भाईका। बायाँ पाँव करवटमें दाहिने पाँवपर चढ़ गया। अब वह गँवार बोला—हमारेवाले पाँवपर तुम्हारेवाला पाँव चढ़ा है? हटा लो इसे। अब गुरुजीने फिर करवट बदली तो फिर चढ़ गया। अब उसने आकर एक लाठी उस पाँवको मारा। गुरुजी महाराज तो तिलमिला गये।

भगवान्‌के स्वरूपमें गँवारू सेवा जो होती है वह मूर्खता है, वह दुखदायी है। असलमें हमारी सेवा, हमारा कर्म जो होना चाहिए, वह सबके कल्याणके लिए, सबके मङ्गलके लिए होना चाहिए। जब हम उसको परिच्छिन्न कर देते हैं—

स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः।

कोई भी मनुष्य, इसमें स्त्री-पुरुषका भेद नहीं है—न हिन्दू-मुसलमानका, न अग्रज-अन्त्यजका—मानवको होना चाहिए मानव यानी मनुकी सन्तान और पूजा किसका करें? जो सबको हिलाता-डुलाता है और सब बना हुआ है। पूज्य कौन है? जो सर्वात्मा और सर्वरूप प्रभु है, वह पूज्य है और पुजारी कौन है? मनुष्य है। और पूजा किससे करता है? 'स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य'। अपने कर्मसे पूजा करता है। जो तुम्हारे हिस्सेका काम है उसके द्वारा 'अनेन सर्वात्मा भगवान् प्रीयताम्'—इससे सर्वात्मा भगवान् प्रसन्न हों। बस हो गयी पूजा। यहाँ जो योगका वर्णन किया, उसमें आत्माके रूपमें भगवान् और प्रपञ्चके रूपमें भगवान्। यह हो गया योग।

अब विभूतिकी बात आपको सुनाते हैं। अब देखो आदित्यका नाम ही पहले आता है—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

आदित्यानामहं विष्णुर्ज्योतिषां रविरंशुमान् ।
मरीचिर्मरुतामस्मि नक्षत्राणामहं शशी ॥ १०.२१

'आदित्यानामहं विष्णुः'। आदित्य शब्दका अर्थ होता है, अदितिके पुत्र। अदिति और दिति दक्षकी पुत्री हैं। काममें दोनों चतुर हैं। दक्ष माने जो कर्ममें अत्यन्त कुशल है। कौशलको ही दक्षता बोलते हैं। आजकल हिन्दीमें एक 'सक्षम' शब्द आगया है—वह निरर्थक है। 'सक्षम' का संस्कृतमें अर्थ है क्षमाशील और समर्थ्यके अर्थमें केवल 'क्षम' शब्दका प्रयोग होना चाहिए। सक्षम नहीं, क्षम होता है। क्षमके समान ही दक्ष शब्द है। दक्ष माने कोई भी काम आवे, निपुणतासे करले। दूसरोंको करते देखे—एक बार देख लिया-सीख लिया। एक बार सुन लिया, याद हो गया। एक बार किसीने समझा दिया, समझ लिया। यह दक्षता होती है। दक्षकी पुत्री है दिति और अदिति। दिति माने—जो काटे, टुकड़े-टुकड़े करे, उसका नाम होता है दिति और जो जोड़ दे—काटे नहीं, उसका नाम होता है अदिति। 'दीङ् क्षये' धातुसे भी दिति शब्द बनता है और 'दो अवखण्डने' धातुसे भी बनता है। जो खण्ड-खण्ड करे, उसका नाम दिति और जो अखण्ड रखे, उसका नाम अदिति। टुकड़े-टुकड़े करना यह दिति वंश है; ये दैत्य कहलाते हैं और मेल-मिलाप कराना ये अदिति वंश है—ये आदित्य कहलाते हैं।

दिति, अदितिके हैं पति कश्यप। कश्यप माने होता है द्रष्टा 'पश्यकः = कश्यपः, पश्यति इति पश्यकः, पश्यक एव कश्यपो भवति' जो देखता है उसका नाम है पश्यक और पश्यक ही विपरीत विधासे कश्यप होता है। दृष्टि-सम्पन्न पुरुष जो है, उसका दक्षकी पुत्री दिति और अदितिसे विवाह होता है। दितिके जो पुत्र हैं वे तो हानिकारक काम करते हैं। दूसरोंको जिससे हानि हो,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

ऐसा काम करते हैं। वे सद्भाव-सम्पन्न नहीं हैं और अदितिके जो पुत्र हैं, वे सद्भाव-सम्पन्न हैं। उनको देवता बोलते हैं। आदित्य माने देवता। अदितेः अपत्यं पुमान्=आदित्यः। अदितिका जो पुत्र होता है—कश्यप रूपी द्रष्टा और अदिति रूपी मिलाप—दोनोंसे जो प्रकट हुआ उसका नाम हुआ 'आदित्य'। इसको हमलोग वेदमें 'आजान देवताके' नामसे जानते हैं। आजान देवता माने जो जन्मसे ही देवता हो। हम लोग जो पुरुष-सूक्त पढ़ते हैं—उसमें परमात्मा-रूप पुरुषके चक्षुसे सूर्यंकी उत्पत्ति कही गयी है—

चक्षोः सूर्यो आजयत। (ऋग्वेद १०.९०.१३)

ये सूर्य जन्मसे देवता है। आदित्य जन्मसे देवता है। 'जन्मसे देवता हैं'—इसका अर्थ यह है कि उसमें पाँचों भूतोंका रस है। पृथीवीका रस, जलका रस, अग्निका रस, वायुका रस, आकाशका रस और सबसे बना एक रूप और वह रूप लेकर सूर्य देवता हमारे पास आरहे हैं। सारी सृष्टि इन्होंने ही बनायी। बल्कि जो जलमें स्थिरता है वह भी सूर्यके कारण है जलकी उत्पत्ति भी सूर्यंकी किरणोंसे है और पृथिवीमें जो स्थिरता है वह भी सूर्यंके कारण है।

यह जो सूर्य हैं अदिति और कश्यपके पुत्र, बारह देवता उसमें मुख्य हैं। द्वादश आदित्य बोलते हैं। इन्द्र भी उसीके पुत्र हैं और विष्णु भी उसीके पुत्र हैं। इन्द्र माने हमारे हाथमें रहकर जो काम करनेको शक्ति है—उसको इन्द्र बोलते हैं। और पाँवमें रहकर जो चलनेकी शक्ति है, उसको विष्णु बोलते हैं। हमारे शरीरमें सभी देवता रहते हैं। हाथोंमें इन्द्र माने बज्र उनके हाथमें है। कर्मकी बहुत बड़ी शक्ति है। जो हमारे जीवनमें प्रगति होती है उसके देवता विष्णु हैं। मुक्ति देनेवाले, विष्णु हैं—और साधन देनेवाले इन्द्र हैं। साधन और प्रगति ये दोनों सविता देवतासे प्राप्त होती

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

है। गायत्रीमें भी सविता देवता है न ! 'तत्सवितुर्वरेण्यम्'।

जैसे सब देवता हमारे शरीरमें रहते हैं वैसे ही सारे देवता ब्रह्माण्डमें भी रहते हैं। यह पिण्ड ब्रह्माण्डका नमूना है। सब देवता हैं। आँखमें सूर्य देवता हैं। नाकमें अश्विनीकुमार हैं। जिह्वामें वरुण हैं। बोलनेवाली जिह्वामें अग्नि है। कानमें दिग्देवता हैं। त्वचामें वायुदेवता हैं। यह देवमय हमारा शरीर है और इसी तरहसे हम ब्रह्माण्डोंको समझते हैं। ये जो आदित्य हैं—अदिति और कश्यपके पुत्र—इनमें भगवान्‌की विभूति कहाँ है ? मुख्यरूप भगवान्‌का क्या है ?

आदित्य बहुत-से हैं। आदित्य है आँखमें, आदित्य है कानमें, आदित्य है त्वचामें, ये वायु, अग्नि, दिक्‌देवता सब आदित्य हैं। इन्द्र और विष्णु भी आदित्य हैं। परन्तु आदित्योंमें सबसे श्रेष्ठ कौन ? बोले—आदित्यानामहं विष्णुः। (१०.२१)। मैं विष्णु नामका आदित्य हूँ। विष्णुका तीनरूप मानते हैं। एक तो विष्णुका रूप होता है—सब विभूतियाँ हैं न ! सबको ऐसे ही समझनेका है। यह तो एक उसका नमूना है। आदित्य कहो सूर्यको तो जब हम सूर्यका चिन्तन करते हैं, तो उनके अनेक परिवर्तनशील रूप दिखाई पड़ते हैं। उनमें ध्यान किया जाता है। 'हिरण्यः पुरुषः' एक जैसे सोनेका चमाचम चमकता हुआ रूप देता है, वैसा।

सशङ्खचक्रं सकिरीटकुण्डलं,
सपीतवस्त्रं सरसीरुहेक्षणम्।
सहारवक्षःस्थलकौस्तुभश्रियम्
नमामि विष्णुं शिरसा चतुर्भुजम्॥

पहले आदित्य-मण्डलका ध्यान किया और आदित्य-मण्डलमें शङ्ख, चक्र, गदा, पद्मधारी नारायणका ध्यान किया। अब वे नारायण क्या हैं ? नारायण भी प्रतीक हैं, उपलक्षण हैं किसके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

उपलक्षण हैं ? वे ब्रह्मतत्त्वके उपलक्षण हैं। परमतत्त्वके रूपमें वे नारायण हैं। आराध्य देवताके रूपमें विष्णु हैं और मण्डलके रूपमें सूर्य हैं। अब विष्णुका एकरूप है व्यापक।

विवेष्टि विश्वम् इति विष्णुः।

× × ×

अत्यतिष्ठत् दशाङ्गुलम्।

वेदमें बताया कि सारी दुनियाँको घेरकर विष्णु स्थित हैं और दुनियासे परे हैं। व्यापकका ही नाम विष्णु होता है। जितने भी दृश्य पदार्थ हैं उनसे जो बड़ा है, उसका नाम विष्णु है। भगवान्की विभूतिके रूपमें उपासना किसकी करनी ? बोले व्यापक तत्त्वकी उपासना करनी। परिच्छिन्न तत्वकी उपासना नहीं करनी। अपनेको जेलमें मत डालो। अपनेको किसी घेरेमें बन्द मत करो।

दो जो विभूति यहाँ बतायी हैं—आत्मा और भूतोंकी आदि, मध्य, अन्त, ये तो दोनों मुख्य रूपसे योग हैं और जो विभूति बतायी, वह आदित्यसे प्रारम्भ की। अब इन विभूतियोंको जब आप पढ़ते होंगे तो उस समय कितना आश्चर्य होगा—जब आप देखते होंगे कि उसमें जूएको भी भगवान्की एक विभूति बताया है। 'द्यूतं छलयतामस्मि'—उसमें जड़को भी विभूति बताया है। 'अश्वत्थः सर्ववृक्षाणाम्' (१०.२६)। 'स्थावराणां हिमालयः' (१०.२५)। हिमालयको भी एक विभूति बताया हुआ है। 'नराणां च नराधिपम्' (१०.२७)। राजाको भी एक विभूति बताया है। शाण्डिल्य भक्ति-दर्शनमें इसपर बहुत विवेचन किया है कि ये विभूति कैसे हुई ?

विभूतियोंका विभाजन, विश्लेषण कर दिया। कुछ तो उत्तम होनेके कारण विभूति हैं। कुछ उत्तमताकी प्राप्तिके हेतु होनेके कारण विभूति हैं। कुछ वर्जित विभूति हैं। वैभव तो बहुत है परन्तु आराध्यके रूपमें सब नहीं है। आत्मरूपसे सब विभूति है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

प्रपञ्चाभावके अधिष्ठानके रूपमें सब ब्रह्म है परन्तु सब विभूतियाँ आराध्य नहीं हुआ करती हैं। 'प्राणित्वात् न विभूतिषु'—यह शाण्डिल्य दर्शन (२.१.२४) का सूत्र है।

आखिर भगवान् इतने बने क्यों? क्या जरूरत थी कि वे इतने बने? अनेक हेतु बताकर कुमारिल भट्टने ईश्वरका खण्डन किया। यदि कोई कहे कि इस कारणसे ईश्वर है तो वह उचित नहीं है। नास्तिकताकी बात हम लोगोंके यहाँ बहुत अधिक है। चार्वाक-दर्शन, बौद्ध-दर्शन, जैन-दर्शन, सांख्य-दर्शन, पूर्व मीमांसा-दर्शनने तो अनेक दृष्टियोंसे उनका खण्डन किया। यह काम तो बिना ईश्वरके ही हो सकता है। यह करनेके लिए ईश्वरकी क्या जरूरत है? जो काम हम बटन दबाकर कर सकते हैं, उसके लिए ईश्वरको बुलानेकी क्या जरूरत है? कुमारिल भट्टने खूब खिल्ली उड़ाई है।

शाण्डिल्य भक्ति-दर्शनमें उसका समाधान किया है। यह है भगवान्की करुणा। चाहे कोई साधन-सम्पन्न हो, चाहे निःसाधन हो, चाहे कुसाधन हो, सबके ऊपर भगवान्की करुणा बरसती रहती है। यदि भगवान् जीवके लिए नाक न बनाते तो वह सूँघता कैसे? उसको गुलाब और जूहीकी सुगन्धका पता कैसे चलता? यदि कान न बनाते तो सङ्गीत-स्वर कैसे सुनता? यदि आँख न देते तो रूप-सौन्दर्य कैसे निहारता? ये भगवान्की करुणा ही है कि सबके लिए भोग्य रूपसे भी और भोक्ता रूपसे भी। भोक्ता जीवको इन्द्रिय देते हैं और भोग्य रूपसे विषय बनकर सबके सामने प्रकट होते हैं।

आओ विभूतिके रूपमें भगवान्की आराधना करें। बोले नहीं सब विभूतियोंकी आराधना नहीं की जाती। क्यों नहीं की जाती? वेदमें स्पष्ट वर्णन है। 'अक्षैमीदीव्यः' (ऋग्वेद

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

१०.३४.१३) चौपड़ मत खेलो। पौरुष छोड़कर एक आकस्मिक वृत्तिपर भरोसा करना—यह उचित नहीं है। जूआ कभी मत खेलो। यह वर्जित है। वह भगवान्‌की विभूति होनेपर भी उपादेय नहीं है, आराध्य नहीं है। दूसरी बात कही उन्होंने राजसेवा की। आप लोगोंने शायद कभी सुना हो। चन्देका अन्न, गणान्न और गणिकान्न—वेश्याका अन्न और राजान्न—राजाका अन्न और चण्डिकान्न—देवीका अन्न, जो मांस वगैरह होता है, इसके खानेसे मनुष्य पतित हो जाता है। उसकी जो मनोवृत्ति है वह तामस भावनासे ग्रस्त हो जाती है। चारों अन्न शास्त्रमें एक कक्षामें माने गये हैं।

हमारे एक भगत बम्बईमें आये कि हम आपके लिए कुछ चन्दा कर लें। चन्दा कर लेते हैं तो आप जिस फ्लेटमें रहते हैं तो इसकी व्यवथा चलती रहेगी। हमने कहा—भाई मेरे, तुम लाख-पचास हजार चन्दा करके हमारी सारी आमदनीका सत्यानाश करना चाहते हो! ऐसे तो हमें रोज ईश्वर भेज देता है। बनी-बनायी सब्जी हमारे पास खानेको आजाती है और दूध आजाता है। कहींसे चावल आता है, कहींसे गेहूँ आता है! यदि तुम लोगोंसे रुपया लेकर बैंक वगैरहमें रख दोगे तो लोग कहेंगे उनकी तो व्यवस्था हो ही गयी, उसमें हमारी चले—न चले, हमारे ऊपर तो कृपा ही रखो। हमको चन्देके अन्नमें बिलकुल रुचि नहीं है।

रतन-सी भाईका ही जैसे सत्-साहित्य-प्रकाशन ट्रस्ट है—मैं उसका ट्रस्टी नहीं हूँ। उसके रुपयेसे, पैसेसे, हिसाबसे, किसाबसे हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है। यही लोग जानते हैं। हम तो कभी उसमें-से कुछ रुपया नहीं लेते हैं। वैसे लेनेका हमारा एक है। रॉयल्टी तो हमारी होनी चाहिए न! लेकिन हम कभी कुछ उससे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

लेते नहीं हैं। किसी दूसरे ट्रस्टसे भी नहीं लेते हैं। ट्रस्टोंमें मैं ट्रस्टी हूँ, पर इनके ट्रस्टमें तो ट्रस्टी भी नहीं हूँ। ये जो चन्देका अन्न है, इससे बुद्धि विकीर्ण होती है, बिखर जाती है।

भिखारीसे भी नहीं लेना चाहिए। ये चन्दा करनेवाले भिखारी ही तो होते हैं। यहाँ बताया—राजा एक विभूति हैं। राजसेवा तो शास्त्रमें वर्जित है। सेवा भी वर्जित है। माने उसकी व्यक्तिगत सेवामें न रहना। उसके बहुत पास जाना, यह भी एक खतरेका काम है। पता नहीं कब उनका मूड बिगड़े ? फिर वे तो फाँसीका ही हुकुम देंगे और उसकी कोई अपील नहीं। इसलिए उनके बिल्कुल निकट नहीं जाना चाहिए। राजसेवाका निषेध है। उसको शास्त्रमें श्ववृत्ति बोलते हैं। श्ववृत्ति माने जैसे कुत्तेको पूँछ और जीभ हिलानी पड़ती है—ठीक वही काम करना पड़ता है। राजाकी सेवा भी निषिद्ध है और जूआ भी निषिद्ध है और भगवान्‌ने अपनी विभूतियोंमें इन दोनोंकी गणना की है। स्पष्ट रूपसे शाण्डिल्यने इसका निषेध किया कि ये द्यूत और राज-सेवाको विभूतिके रूपमें भगवान्‌ने वर्णन किया है, यह आराधनाके लिए नहीं है।

तब आराधना किनकी करनी चाहिए ? तो जिनकी आराधना शास्त्रमें वर्णित है। शास्त्रमें वर्णित है माने मत्स्य, नृसिंह, वराह, वामन, कच्छप, परशुराम—इनकी आराधना कर सकते हैं और यहाँ देखो 'आदित्यानामहं विष्णुः' वाक्यमें विष्णु माने वामन।

ॐ शान्ति शान्ति शान्ति।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

प्रवचन : ८

७-११-८१

भगवान्‌के गुणोंका जितना वर्णन आता है, उनमें भक्तोंने यह निश्चय किया है कि करुणा ही सर्वश्रेष्ठ गुण है।

मुख्यं तस्य हि कारुण्यम्। २.१.२३

यह शाण्डिल्य भक्ति-दर्शनका सूत्र है। करुणा ही भगवान्‌के गुणोंमें मुख्य है। गुणोंमें परस्पर विरोध भी कभी होता है। कभी दया आती है, कभी असंगता आती है, कभी स्नेह होता है। कभी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

स्वरूप-स्थिति हो जाती है। भगवान् यह सब काम क्यों करते हैं? क्यों आते हैं? उन्होंने बताया कि सृष्टि तो बीज-वृक्ष न्यायसे अनादि ही है। आजतक कोई यह निश्चय नहीं कर सका कि पहले बीज कि पहले वृक्ष। पहले भी जीव था, प्रलय हो गया तो सो गया फिर सृष्टि हुई तो जाग गया।

भगवान् यह सृष्टि क्यों बनाते हैं? करुणावश। जीव सोता न रहे। अपने धर्म, अर्थ, काम, मोक्षरूप पुरुषार्थकी प्राप्तिके लिए प्रयत्न करे। इसके लिए सोते हुए को जगाते हैं। बुद्धि देते हैं, संकल्प देते हैं, इन्द्रिय देते हैं। शरीर देते हैं कि वह अपने पूर्व-पूर्व संकल्पके अनुसार पौरुष करे। जीवोंपर करुणा करके ही भगवान् यह सृष्टि बनाते हैं। फिर यह हुआ कि वे प्रकट क्यों होते हैं? प्रकट भी करुणा करके ही होते हैं। जब देखते हैं कि जीव अनात्म-वस्तुमें अत्यन्त आसक्त हो गया, जिसको न तो वह भगवान्के रूपमें देख पाता है और न तो अपनी आत्मासे अभिन्न देख पाता है, उस वस्तुके पराधीन होकर संसारमें जब भटकने लगता है तो करुणा करके भगवान् अनेक रूपोंमें प्रकट होते हैं।

उनमें एक रूप वामन है। यहाँ जो विभूतिका वर्णन है 'आदित्यानामहं विष्णुः' वह वामनका ही नाम यहाँ विष्णु है। केवल संकेत रूपमें आपको सुनाता हूँ। वेदमें मन्त्र है—'वामनो ह विष्णुरास' (शतपथ १.२.५५)। जो वामन है वही विष्णु हो गया। माने पहले बलिके यज्ञमें नन्हें-से वामनके रूपमें आये थे और फिर विराट् रूप धारण करके उसने बलिका सर्वस्व नाप लिया। 'आदित्यानामहं विष्णुः'। अदितिके पुत्रोंमें मैं विष्णु हूँ माने अन्तिम पुत्र मैं वामन हूँ—इसका अर्थ यह होता है। इसमें यदि आप करुणा देखेंगे तो पहली बात तो यह लगती है कि भगवान् अपने भक्तका पक्षपात करते हुए लगते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

भगवान् अपना जितना शरीर प्रकट करते हैं, वह नित्य और पवित्र होता है। दिव्य और शाश्वत—माने हमेशा रहनेवाला होता है। हमारे शरीरमें भी वामन प्रकट हैं। उपनिषदोंमें इसका वर्णन है।

ऊर्ध्वं प्राणमुन्नयत्यपानं प्रत्यगस्यति।
मध्ये वामनमासीनं विश्वेदेवा उपासते॥

कठोप० २.२.३

प्राण हमारा ऊपरके रास्तेसे बाहर जाता है, लौटता है, और अपान नीचेके रास्तेसे निकलता है। इन दोनोंको अलग करके दोनोंके मध्यमें सन्धि जो है—वहाँ परमात्मा है।

कई लोग परमात्माका ध्यान प्राण और अपानकी सन्धिमें करते हैं। बहुत छोटा-सा, बहुत नन्हा-सा वह सन्धि-स्थल है। प्राणकी गति निराली और अपानकी गति निराली और दोनोंको अलग-अलग करनेके लिए बीचमें बैठ गये वामन भगवान्। नहीं तो मनुष्य जिन्दा ही नहीं रहेगा। प्राण यदि अपानमें मिल जाय और अपान प्राणमें मिल जाय तो मनुष्य जीवित नहीं रह सकता। यह जो हमारा जीवन चल रहा है, वह हमारे हृदयमें वामन भगवान् बैठे हैं, इसलिए चल रहा है।

हमारे ऊपर प्रत्यक्ष करुणा है भगवान्की, नहीं तो साँस बाहर निकलकर फिर लौट आये यह लोगोंको मालूम नहीं पड़ता—पर आश्चर्य है। साँस बाहर जाती है, और फिर लौट आती है। जब साँस शरीरसे बाहर निकल गयी तो क्या विश्वास है कि वह लौटकर आवे कि न आवे। लेकिन भगवान् भीतर बैठे हुए हैं। वही साँसको बाहर भेजते हैं और वही साँसको भीतर खींचते हैं, जिससे हम लोग जिन्दा रहते हैं। वैसे भगवान् प्रत्यक्ष दिखायी भी पड़ते। ऐसा नहीं है कि प्रत्यक्ष न दीखते हों। एक वामन-तो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

ये हुए जो आपके शरीरमें रहकर प्राण, अपानका विभाग कर रहे हैं—जीवन दे रहे हैं। ये भी अदितिके ही पुत्र हैं।

अब दूसरे वामनका ध्यान करो। पक्षपाती भगवान्। हम भगवान्को पक्षपाती बोलते हैं। आर्यसमाजियोंके भगवान् न्यायकारी हैं। ब्रह्मसमाजियोंके भगवान् भी न्यायकारी होते हैं और जो इसाई, मुसलमान और हमारे सनातनधर्मी लोग हैं, इनके भगवान् सर्वदासे भक्तोंका पक्ष करते हैं। यद्यपि इसाई, मुसलमानके भगवान् निराकार हैं। पर वे मुहम्मद साहबके सिवाय तथा ईसाके सिवाय और किसीकी सुनते ही नहीं हैं। वे जिसकी सिफारिश कर दें, मान लेते हैं। तो वे निराकार होनेपर भी पक्षपाती हैं।

और हमारे भगवान्को तो कोई तुलसीदल चढ़ा दे, बेलपत्र चढ़ा दे, एक चुल्लू गङ्गाजल चढ़ा दे—उसीका पक्षपात करने लगते हैं। जब पक्षपात करते हैं तब भगवान्को थोड़ा छोटा होना पड़ता है। क्योंकि पार्टीमें आगये न! पार्टीमें आगये तो छोटे हो गये। अपने भक्तोंकी पार्टीबन्दीमें जब भगवान् आते हैं तब पक्षपात करने लगते हैं। देखो, अदितिने तपस्या की, कश्यपके बताये हुए विधानसे। उसमें पति, पत्नी दोनोंका योग है न! कश्यपजीने विधि बतायी और अदितिने उसका पालन किया—तेरह दिन। द्वादशाह पयोव्रत—बारह दिनका पयोव्रत है और तेरहवें दिन उसका उद्यापन है।

अब भगवान् प्रकट हुए अदितिके पास। अदितिसे पूछा क्या चाहिए? बोले—हमारे पुत्रोंकी विजय चाहिए। तुम्हारे पुत्रोंके जो शत्रु हैं बड़े धर्मात्मा हैं, यज्ञ-याग कर रहे हैं। उनको मारनेका तो समय नहीं है। भगवान्ने कहा जो रास्तेसे चल रहा है—जो ठीक सन्मार्गसे चल रहा है, उसको परमेश्वर भी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

गिरा नहीं सकता, पतित नहीं कर सकता। भगवान्ने अदितिको साफ कह दिया कि तुम्हारे पुत्रोंके शत्रु जो दैत्य हैं वे इस समय यज्ञ कर रहे हैं, धर्मात्मा हैं, उनको जीतकर पार नहीं पाया जा सकता। अदितिने कहा कि हमारा काम तो भगवन्, आपको करना ही पड़ेगा। तब कैसे करें? हमारा पक्षपात करना पड़ेगा। यदि जिसकी हम पूजा करते हैं वह हमारा पक्षपात न करें तो हम उसकी पूजा क्यों करें? तब तो बिना पूजाके ही हम बिलकुल ठीक हैं, जैसे हैं वैसे हैं। पूजा करने पर तो भगवान्को हमारा पक्षपात करना चाहिए।

भगवान्ने कहा कि ऐसे तो पक्षपात नहीं बनेगा। हम तुम्हारे बेटे बन जाते हैं। तब फिर पार्टीमें आगये। अब अपनी पार्टीमें आगये तो बदमाश भी दूधका धुला और दूसरेकी पार्टीका है तो दूधका धुला भी बदमाश! तो भगवान्ने पार्टी बन्दीमें अपनेको मिला दिया। अदितिकी तपस्यासे प्रसन्न होकर उसके बेटे बने तो आदित्य हो गये। अदितिके पुत्र होनेसे भगवान्का नाम हो गया 'आदित्य'। यह तो हो गया अदितिके प्रति पक्षपात अथवा देवताओंके प्रति पक्षपात।

अब यह कहो कि भगवान्ने इतनी कठोरता दैत्योंके साथ क्यों की? दैत्योंके साथ कठोरता नहीं की बल्कि देवताओंको जितना दिया, उससे ज्यादा दैत्योंको दिया। ऐसा प्रसंग है— 'आदित्यानामहं विष्णुः।' इन्द्रमें भी व्यापक वही हैं और बलिमें भी व्यापक वही हैं। इसलिए उनका नाम होता है 'विष्णु'। माँगने वालेको छोटा बनना पड़ता है। इसलिए भगवान् विष्णुसे वामन हो गये—बौने। माँगनेवाला कभी बड़ा तो हो ही नहीं सकता। पर जब बलिके यज्ञमें जाकर उन्होंने माँगा तो वहाँ स्पष्ट

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

लगता है कि इन्द्र और देवताओंका उन्होंने पक्षपात किया। छोटे होकर माँगने गये और लेते-लेते विराट् बन गये। और बलिका सर्वस्व ले लिया।

भगवान् बड़े अन्यायी हैं भाई! नहीं, भगवान्‌की रीति यही है कि पहले छोटे-से बनकर हृदयमें आते हैं—जैसे कामना जो है वह छोटी-सी बनकर अपने हृदयमें आती है और जब संग मिलता है तब तरङ्गके रूपमें आती है और समुद्र बन जाती है। भगवान् भी ऐसे ही हृदयमें पहले छोटे-से बनकर आते हैं। दो मिनटके लिए भगवान्‌का नाम लेना शुरू करो, दो मिनटके लिए भगवान्‌का ध्यान शुरू करो, जब उसमें रस आजायेगा तब वह ध्यान घण्टोंके लिए हो जायेगा।

भगवान् जीवनमें नन्हें-से बनकर प्रवेश करते हैं और फिर विशाल रूप धारण कर लेते हैं। बलिके सामने नन्हें-से बनकर आये और थोड़ी-सी चीज माँगी। दो मिनट माँगा—तीन मिनट समझ लो। केवल तीन मिनट माँगा। केवल तीन पग धरती माँगी। बाबा—हम थोड़ेमें ही सन्तुष्ट हैं। देखो, भगवान्‌की चालाकी है यह! पहलेसे ज्यादा माँगेंगे तो देंगे नहीं। शुक्राचार्य रोकनेवाले हैं। शुक्राचार्यजी उसी समय काने हो गये थे। जब उन्होंने दान देनेमें रुकावट डाली तो काने हो गये। पक्षपात ही देखो—तीन पग माँगा दूसरे शरीरसे! संकल्प ले रहे थे दूसरे शरीरमें और बन गये बिलकुल विराट्।

एक पगमें बलिका लोक नाप लिया—दूसरे पगमें परलोक नाप लिया, परन्तु इतने-से उनके तीन पग पूरे नहीं हुए। हमें बताना है कि बलिपर भी भगवान्‌की कितनी करुणा है। इन्द्रको मिला एक पग—नहीं, उपेन्द्रको मिला दो पग। और बलिको डाँटा—तुमने तीन पग देनेकी प्रतिज्ञा की थी—तुम दे नहीं सके,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

इसलिए तुम्हें नरकमें जाना पड़ेगा। क्योंकि जो अपनी प्रतिज्ञाका पालन नहीं करता है, उसको नरकमें जाना पड़ता है। नहीं महाराज, हमारी प्रतिज्ञा झूठी नहीं है। आप तीसरा भी नाप लो। अब तुम्हारे पास है क्या ? न लोक है, न परलोक है। हम नापें क्या ? झट बलिने अपना सिर झुकाया।

पदे तृतीयं कुरु शीर्ष्णि मे निजम्। भाग. ८.२२.२

आप तीसरा पग हमारे सिरपर रख लीजिये। हमने संकल्प करके अपने पौरुषसे उपार्जित यह लोक दिया और धर्मसे उपार्जित परलोक दिया। लेकिन मैं जो पुरुष हूँ—पौरुष करनेवाला, पुरुषकार करनेवाला जो मैं हूँ, वह मैं तो अभी आपको अर्पित नहीं हुआ। मेरा पैदा किया हुआ लोक आपने एक पाँवमें लिया। मेरा पैदा किया हुआ परलोक दूसरे पाँवमें लिया। पैदा करनेवाला मैं तो हूँ न! मेरे सिरपर पाँव रखो। इसीको बोलते हैं—'अहम्'—सर्वस्व आत्मसमर्पण।

बलिको क्या मिला ? भगवान्का चरणारविन्द मिला। इन्द्रको मिला राज्य—लोक, परलोक। और भगवान्को पक्षपाती होनेका सुयश मिला कि वे देवताओंका पक्षपात करते हैं और बलिने जब अपने आपको भगवान्को दिया—बलिने अपना सिर दिया—उसपर उन्होंने पैर रखा। बलि हो गये भगवान्के। बलिको क्या मिला ? भगवान् मिले। भगवान् हो गये बलिके।

बलि अब जहाँ सुतल लोकमें रहते हैं, भगवान् हाथमें गदा लेकर उनके बारहों दरवाजोंपर, अकेले वामन भगवान् बलिके बारहों द्वारपर रहकर पहरा देते हैं। रावण आया—ऐसा अंगूठेसे उसको उछाला कि जाकर लंकामें ही गिरा।

अब आप देखो, भगवान् पक्षपाती हैं कि उनके हृदयमें करुणाकी प्रधानता है ? अदितिका मनोरथ पक्षपाती होकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

सिद्ध किया। वह भी एक करुणा है। अपने भक्तके प्रति पक्षपात। और बलिने अपना सर्वस्व दिया तो भगवान्‌ने बलिको लोक दिया, उसे अगले मन्वन्तरके लिए इन्द्र बनाया—परलोक भी दिया और—सबसे बड़ी चीज—बलिने जब अपना आपा दिया तो भगवान्‌ने अपना आपा भी दे दिया। यह है 'आदित्यानामहं विष्णुः'का अर्थ। वह नन्हें-से वामन भी हैं—कश्यप, अदितिके पुत्र भी और वह स्वयं विराट् भी हैं और वह प्राण-अपानके विभाजक भी हैं। ये विष्णु ऐसे हैं! इसपर शाण्डिल्य भक्ति-दर्शनमें बहुत विचार है। उसपर दो बहुत विस्तृत भाष्य हैं। एक स्वप्नेश्वराचार्यका, एक हमारे नारायण तीर्थका। दिया क्या? अपना आपा।

अब यह जो विष्णुका वामनरूप है वह हम लोगोंके रूपकी तरह नहीं है। जैसे पञ्चभूतसे बना, वासनामूलक हम लोगोंका शरीर होता है। इसपर माता-पिताका भी प्रभाव होता है। नाना-नानी, दादा-दादीका भी होता है और कभी-कभी तो गोत्र-प्रवर्तक ऋषि हैं—जैसे किसीका गोत्र वत्स है—और किसीका गोत्र गर्ग है, किसीका गोत्र गोभिल है; पहले बड़े-बड़े आचार्य हुए हैं—जहाँसे हमारा गोत्र चला है, उनके वीर्यमें भी एक संस्कार था और वह संस्कार आजतक सुषुप्त था, आज आकर हमारे जीवनमें प्रकट हो गया। इसीको गोत्र बोलते हैं।

वसिष्ठ गोत्र, गर्गगोत्र, शाण्डिल्य गोत्र—जैसे गोयल। गोयल माने गोभिल गोत्र ही है। ये बंसल बोलते हैं जिसे उसके वंश-प्रवर्तक वत्स ही हैं। यह इसकी रीति है। उन आचार्योंके संस्कार परम्परासे रजवीर्यमें छिपे रहकर कभी-कभी हजारों वर्षके बाद, लाखों वर्षके बाद प्रकट होते हैं। ये बात लोगोंको तब पता चलती है जब बहुत गम्भीरतासे सृष्टिके रहस्यपर विचार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

हैं आपनेतेकर— सुनाहोगा—सैबेरियामें कुछ जौके दाने मिले। जांच की गयी तो २००० वर्ष पहलेके थे। और वहाँ ज्यों-के-त्यों पड़े थे क्योंकि ठंड ज्यादा होती है। जब वहाँसे उठाकर लाये गये, सामान्य भूमिमें इधर लाये गये, तो उनमें अङ्कुर निकल आये। २००० वर्ष बाद उनमें जो बीजशक्ति छिपी थी, वह ठंढमें प्रकट नहीं हो रही थी और अब प्रकट हो गयी। यह जो हम लोगोंके गोत्रका नाम लेते हैं, वह शक्ति भी रहती है।

मनुष्यका शरीर पञ्चभूतरूप उपादनसे बनता है और नाना-नानी, माता-पिता तकमें गोत्र-प्रवर्तक ऋषिके उसमें संस्कार छिपे रहते हैं। इसीसे सज्जनको भी दुर्जन होते देखा जा रहा है। और दुर्जनको भी सज्जन होते देखा जाता है। हमने देखा है जो पहले बहुत दुष्ट थे वे शिष्ट हो गये। निराश कभी नहीं होना चाहिए कि यह दुष्ट है। इसके अन्दर शिष्टता कभी नहीं आयेगी। आशा रखनी चाहिए, विश्वास रखना चाहिए कि यह आगे चलकर ठीक हो जायेगा। आप किसीको भी हमेशाके लिए बुरा मत समझिये। उसके भीतर जो अच्छाई है, उसपर ध्यान दीजिये। उसके भीतर शक्ति है, विशेषता है। हम लोगोंका जो शरीर बनता है, वह पञ्चभूतसे बनता है, जीवके पूर्व कर्मसे बनता है। जीवके पूर्व पुरुषोंसे आता है और गर्भके खानपानसे बनता है और संगसे बनता है। यह चरकसंहितामें सात प्रकारका कहा गया है।

भगवान्‌का जो शरीर है, उसमें ये सातों नहीं होते। न उनमें माता-पिताका प्रभाव है, न संगका प्रभाव है, न नाना-नानीका, न दादा-दादीका, न गोत्रप्रवर्तक ऋषिका; उनका शरीर कर्म और वासनासे बना हुआ नहीं है। वह जो सच्चिदानन्दघन परमात्मा है, वह केवल करुणापरवश होकरके ही एक व्यक्तिके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

रूपमें प्रकट हुआ है। अब आप जब विभूतियोंका विश्लेषण करें तब उसमें देख लें कि कौन-सी विभूति, परमात्माका आविर्भाव है। जैसे यहीं 'आदित्यानामहं विष्णुः' ये उपास्य हैं। माने विष्णुकी उपासना की जानी चाहिए, क्योंकि उनका शरीर जड़ वस्तुओंसे बना हुआ नहीं है।

अब मत्स्य है, कच्छप है, वराह है, नृसिंह हैं, वामन हैं, राम हैं, कृष्ण हैं तो जो दिव्य सच्चिदानन्दघन-मूर्ति हैं। वे होते हैं, उपास्य और जो जड़ता-प्रधान हैं वे उपास्य नहीं होते हैं। यह सच्चिदानन्दघन अवतार लेकर आता क्यों है? 'मुख्य तु तस्य कारुण्यम्।' यह उसको करुणा, कृपा ही मुख्य है—करुणाके कारण ईश्वरकी असंगता द्रवित हो जाती है और जीवोंके कल्याणके लिए वे हम लोगोंके बीचमें कूद पड़ते हैं। जैसे गजेन्द्रके उद्धारके लिए भगवान् जलावतार ग्रहण करते हैं। जैसे द्रौपदीके लिए भगवान् वस्त्रावतार ग्रहण करते हैं। वैसे हम लोगोंके लिए भगवान् हमारे जैसा आकार लेकर अवतीर्ण होते हैं। लेकिन वह कर्म न वासना है, न परम्परा है, न कर्म है, 'लोकवत्तु लीला कैवल्यम्'। (ब्रह्मसूत्र २.१.३३) 'आकारमानत्वात्'। (शा० भ० सू० २.२६) शाण्डिल्यने बताया कि ये जो उपास्य विभूतियोंमें भगवान् हैं, उसमें आकार ही देवताका या मनुष्यका है—तत्त्व जो है वह तो सच्चिदानन्दघन ही है। मैटर वही है और शक्ल-सूरत भगवान्ने अपने मनसे गढ़ी है। केवल कर्मसे गढ़ी हुई नहीं है।

इस बातपर आपको यदि ज्यादा समझनेका मन हो तो जगत्के उपादानके सम्बन्धमें विचार करना पड़ता है। हमलोग जब दर्शनशास्त्र पढ़ते हैं तो देखते हैं कि चार्वाक सृष्टिका उपादान बहिरंग मानता है। चार-भूतोंसे सृष्टि हुई। नैयायिक भी सृष्टिका उपादान बहिरंग मानते हैं। जैन भी मानते हैं परमाणु। लेकिन बुद्ध न चार भूतको उपादान मानते हैं, न परमाणुको। वे वासना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

विशिष्ट विज्ञानको ही जगत्का उपादान मानते हैं। माने अन्तरंग उपादान मानते हैं। यह जो बाहर सृष्टि दिख रही है, यह हमारे भीतरसे निकली हुई है।

सांख्ययोगमें जो सृष्टिका उपादान मानते हैं वह प्रकृति है। प्रकृति कहाँ रहती है? आजकल तो प्रकृतिवादी लोग तरह-तरहकी बात करते हैं। एक बार किसीने उड़िया बाबाजीसे कहा ये सब प्रकृतिने ही बनाया है। बोले तूने कभी प्रकृति देखी है? बोला—हाँ महाराज, यह सब क्या है? सब प्रकृति ही है न?

नहीं यह प्रकृति नहीं है, यह तो कार्य है। इस कार्यको देखकर तुम कारणके रूपमें प्रकृतिका अनुमान करते हो। प्रकृति बुद्धि और आत्मा दोनोंके बीचमें रहती है। प्रकृतिसे बुद्धि बनती है। यह जो हमारी बुद्धि बाहरकी चीजोंको देखती है, इसका नाम प्रकृति नहीं है। जब हमारी बुद्धि शान्त, सुषुप्त रहती है तब प्रकृतिमें स्थित रहती है। प्रकृति भी जगत्का अन्तरंग उपादान है। जो लोग सांख्ययोग मानते हैं वे मानते हैं कि वह बिल्कुल अन्तरङ्ग है। कर्म भी किसीके साथ रहते हैं तो वे भी अन्तरङ्ग कारण हैं। ईश्वर भी अन्तर्यामी होनेसे अन्तरङ्ग कारण है। और माया? माया तो आत्मामें रहती ही है। इसलिए माया भी अन्तरङ्ग कारण है। लेकिन ये सब-के-सब, जब आत्माकी ब्रह्मरूपताका बोध होता है तो कारण और कार्यभाव ये दोनों विनष्ट हो जाते हैं।

दर्शन शास्त्रकी दृष्टिसे हमारे संसारका, विश्वका, सृष्टिका जो उपादान है वह सच्चिदानन्दघन ब्रह्म है। इसीसे हमारे सिद्धान्तमें मूर्तिपूजा भी होती है क्योंकि उसमें भी उपादान सच्चिदानन्द ब्रह्म ही है। मत्स्य, कच्छप, वराह आदि आकृतियाँ होती हैं, शक्ल-सूरत होती है, लेकिन उपादान रूपसे उसमें ब्रह्म ही है। देखो भाई, बात दो टूक करनी चाहिए। यह बात संसारके किसी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

मजहबमें नहीं है। न इसाईमें है, न मुसलमानमें है, न बौद्धमें है, न जैनमें है, न यहूदीमें है, न पारसीमें है, न सिक्खमें है।

यह सर्वात्मा, सर्वकारण-कारण सर्वोपादान, अभिन्न निमित्तोपादान कारण हमारे परमात्मा हैं। इसीको हमारी मूर्ति-पूजा भी है, अवतार भी है। श्राद्ध भी है, गो-पूजा भी है, अश्वत्थ-पूजा भी है। अब यह बात आप यदि ध्यानमें न लोगे और खुदाको निकालोगे कुरानमें-से और ईश्वर निकालोगे बाइबिलमें-से और फिर कहोगे इसमें मूर्तिपूजा कहाँ है ?

सत्यार्थ प्रकाशमें-से जो ईश्वर निकलेगा उसमें मूर्तिपूजा, अवतार, श्राद्ध कुछ नहीं होगा। लेकिन वेद, शास्त्र, पुराणमें-से जो ईश्वर निकलेगा उसमें अवतार, मूर्तिपूजा, श्राद्ध, वर्णाश्रम सब-का-सब उसमें-से निकल आयेगा क्योंकि यह सारा-का-सारा परमात्माका ही विलास है। यह जो हम देखते हैं कि राम क्षत्रियके रूपमें हैं। और श्रीकृष्ण यादवके रूपमें हैं और मत्स्य मछलीके रूपमें—यह आकार मात्र हैं, यह कोई कर्मजन्य या वासनाजन्य या प्रकृति आदि उपादानोंसे जन्य नहीं है। यह तो साक्षात् परब्रह्म परमात्माका स्वरूप है। इसलिए जब हम भगवान्के रूपका चिन्तन करने लगते हैं तब सम्पूर्ण विश्व-सृष्टि परमात्माका रूप निकल आती है।

यह केवल विभूति जो है—इसकी चर्चा इसलिए की कि ये हमारे हृदयमें जो राग द्वेष हैं, जो शत्रु-मित्र हैं, जो गुण-दोष हैं ये सारे कलङ्क-पङ्कका प्रक्षालन करके और शुद्ध परमात्माके साथ मिला देनेके लिए हैं। अब ये जो विभूतियोंका वर्णन है वह एक तो भगवान्के रूपका ही विभूतिके रूपमें वर्णन है। जैसे मैं वृष्णिओंमें वासुदेव हूँ, 'वृष्णीनां वासुदेवोस्मि' (४०.३७) जैसे 'रामः शस्त्रभृतामहम् (१०.३१)—शस्त्रधारियोंमें मैं राम हूँ। यह तो भगवद्-रूप हैं और कुछ अपनी-अपनी जातिमें उत्तम होनेके कारण विभूतिके रूपमें कहे गये हैं। जैसे 'स्थावराणां हिमालयः'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

(१०.२५) नराणां च नराधिपम् (१०.२७) ये अपनी-अपनी जातिमें श्रेष्ठ होनेके लिए कहे गये हैं। कुछको विभूति इसलिए बताया है कि वे उत्तमत्वापादक हैं। माने हमको उत्तम बना देनेवाले हैं— जो उस विभूतिका आश्रय लेगा वह उत्तम हो जायेगा।

तो भगवद्रूपको भी विभूति बताया गया उपासनाके लिए और जो अपनी-अपनी जातिमें उत्तम हैं, उनको भी विभूति बताया गया। और जो उत्तमत्वापादक हैं—उत्तमत्वापादक माने जैसे— 'यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि (१०.२५) अब यह जप यज्ञको भगवान्‌की विभूति क्यों कहते हैं? इसलिए कि यदि आप जप यज्ञका आश्रय लें तो आप उत्तम हो जावेंगे। आप स्वयं भगवद्-विभूतिरूप हो जायेंगे। उत्तमत्वापादक, जो इस यज्ञका आश्रय लेगा उसको यह यज्ञ उत्तम बना देगा। इसलिए इसको विभूति कहा गया।

हम विभूतियोंका केवल उद्देश्यमात्र सुनाते हैं। अब जप-यज्ञ क्यों है और वह भगवान्‌की विभूति क्यों है? यदि जपका आश्रय लें तो उत्तम हो जाते हैं? हम स्वयं उत्तम हो जाते हैं? इसलिए जप-यज्ञ—भगवान्‌की विभूति है। हमारे बाबा बोलते थे—

जपात् सिद्धिः जपात् सिद्धिः जपात् सिद्धिर्न संशयः।

आपको कोई भी सिद्धि प्राप्त करना हो तो जप कीजिये, जप कीजिये, जप कीजिये। वे अभागे लोग हैं जिनका जपपर विश्वास नहीं है। कोई भी सिद्धि जपके द्वारा प्राप्त हो सकती है। समाधि लगानेसे जो सिद्धि होती है सो, योगाभ्यास करनेसे जो सिद्धि होती है सो, क्योंकि जब हम भगवान्‌के नामका, मन्त्रका जप करते हैं, जप दोनोंका होता है—मन्त्रका भी होता है और नामका भी होता है। नाम अलग वस्तु है और मन्त्र अलग वस्तु है।

जपको जप क्यों कहते हैं—जन्मनः पाति। जो जन्म-मरणके चक्करसे छुड़ा दे उसका नाम होता है जप। अब आओ आप

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

भगवान्‌का नाम लो। पाठ दूसरी चीज है, उसमें अनेक शब्दोंका उच्चारण होता है और जप दूसरी चीज है, उसमें एक छोटा-सा शब्द या वाक्य ले लो और उसको दुहराते जाओ। 'जपश्रान्तश्चरेद् ध्यानम्'। जब जप करते थक जायें तब ध्यान करें। 'ध्यानश्रान्तश्चरेज्जपः।' जब ध्यान करते-करते थक जाये तब जप करें। 'जपध्यानपरिश्रान्तो ह्यात्मतत्त्वं विचारयेत्।' जब जप और ध्यान दोनोंमें प्रवृत्ति शिथिल हो जाय तो अपने स्वरूपका विचार करना चाहिए।

सब सिद्धियोंका निरूपण न करके आओ, जपके बारेमें थोड़ा विचार करें। हमने ऐसे जप करनेवाले देखे हैं, बड़े-बड़े बालवाला शरीर भगवान्‌का मान लिया, एक रोंवा खड़ा हो गया, दुबारा भगवान्‌का नाम लिया, दूसरा रोंवा खड़ा हो गया—ऐसा देखा। आप लोगोंको सुनाया होगा—जबलपुरके पास भेड़ाघाट पर एक रामसनेही साधु रहते थे। एक बार कैलाशके महामण्डलेश्वर-स्वामी चैतन्यगिरि जी भेड़ाघाट पर आये। देखा तो एक साधु पड़ा हुआ है। चैतन्यगिरीजीके मनमें करुणाका उदय हुआ। उसके पास जाकर बोले—माहात्मा जवान हो उठो, भगवान्‌के नामका जप करो, ध्यान करो, अपनी उमर ऐसे ही क्यों गँवा रहे हो ?

उमरिया गँवाय दई रे प्रभु नहीं चीह्ना।

यह वहीं कि बोली है। उठो जप करो। उन्होंने आँख खोलकर देखा कि यह तो कोई महात्मा है तब बुलाया, हमारे पास आओ। यह हमारी हथेली अपने कानमें लगाओ। वह हथेली कानमें लगाये तो उसमें-से 'राम' 'राम' की ध्वनि आरही थी। फिर बोले हमारे सिरपर हाथ रखो। सिरपर हाथ रखा। सिर बोलता था 'राम' 'राम' 'राम'। बोले मेरी छातीपर अपना कान

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

लगाओ—छाती बोलती थी 'राम' 'राम' 'राम'—फिर बोले। हमारे पाँवपर अपना कान लगाओ। पाँव भी बोले 'राम' 'राम' 'राम'। अब चैतन्य गिरिजीने नमस्कार किया। बहुत बड़े विद्वान् थे—बोले महात्मन्, तुम पड़े रहो। तुम्हारे लिए जप, ध्यान करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है।

हमारे वृन्दावनमें एक चोर बाबा हैं तो जब मैं जबलपुर जाया करता था तो वे हमारे साथ कभी-कभी चले जाते थे। मुझसे पूछते—आप जबलपुर क्यों जा रहे हैं? मैंने कहा हम कथा कहने, प्रवचन करने जा रहे हैं। तुम क्यों जा रहे हो? बोले—हमारा एक यार है। उससे मिलने जा रहे हैं। वे यार वही थे। शरीरपर जपका कितना प्रभाव पड़ता है? रग-रगमें रोम-रोममें मन्त्रकी ध्वनि व्याप्त हो जाती है। जपकी एक बात आपको सुनाते हैं। आप समझो कि हमारे मनमें या तनमें परिवर्तन करना है तो यह कम्युनिस्टोंका जो हँसिया, हथौड़ा है, उससे तो हमारे हृदयका या हमारे मनका परिवर्तन नहीं हो सकता। और न तो वहाँ डॉक्टरका हाथ पहुँचकर ऑपरेशन कर सकता है।

आप लोगोंने सुना होगा—आजकल एक ध्वनि-चिकित्सा विज्ञान निकला है। हमारे घुटनेमें दर्द होता था तो हेमलता रतनसी भाई एक डॉक्टर ले आये थे। वह एक मशीन हमारे घुटनेपर रखता था और वह कहता था, हमारा कान जितना सुन सकता है, उससे तीन लाख गुना ऊँची ध्वनि इस मशीनमें-से निकलकर घुटनेमें प्रवेश कर रही है। यह एक संचार कर देती है और घुटनेका दर्द मिट जायेगा। यह शब्द-चिकित्सा है। यह जो हमारे शरीरमें भगवन्नामकी ध्वनि व्याप्त होती है—रोम-रोममें, रग-रगमें, हमारे तनमें, हमारे मनमें, इस ध्वनिके कारण शरीरमें भी परिवर्तन हो जाता है और मनमें भी परिवर्तन हो जाता है। इसको आप साधारण बात न समझें।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

हमको तो आश्चर्य होता है कि लोगोंका जप-पर विश्वास क्यों नहीं होता ? एक ताराबाई महाराष्ट्रमें थीं। वे विदेशकी यात्रा करने गयीं थीं तो उनकी महिमा यह थी कि उनके सामने एक यात्रामें पावडर रखा जाता था। जब वह वीणा लेकर बजाती थीं तो जो राग-रागिनी बजातीं, उस राग-रागिनीका चित्र उस पावडरपर बन जाता था। माने ध्वनि जाकर जब उस पावडरपर टकराती थी तब कुछ पावडर उधर, कुछ इधर होकर वैसी तसवीर बन जाती। वहाँ एक बङ्गाली सज्जन थे तो उन्होंने कहा कि तुम शंकराचार्यंका भैरवाष्टक गाकर सुनाओ तो उन्होंने भैरवाष्टकको राग-रागिनीमें बांधकर जो गाया सो उस पावडर पर एक तो बन गया कुत्ता और एक बन गया नाटा-सा काला-कलूटा पुरुष भैरव।

शब्दमें शक्ति होती है, उसके उच्चारणमें, उसकी ध्वनिमें शक्ति होती है। हमने एक खिलौना देखा। जब हम बोलते थे गो (go), वह खिलौना चलते देखा—जब हम बोलते थे स्टाप (stop)—वह खिलौना जो अंग्रेजी समझता था, संस्कृत नहीं समझता था, स्टाप कहनेपर खड़ा हो जाता था। मैंने पूछा यह क्या है ? तो बोले इसको बैटरी ऐसे ढङ्गसे बनायी गयी है कि जब 'गो' शब्द टकराता है तब बैटरी बन्द हो जाती है। इसीसे यह खिलौना चलता है और हिलता है। यह एक शब्दकी शक्ति बतानेके लिए मैंने सुनाया।

अभी हमारे पास कोई शाबर मन्त्रोंकी चर्चा कर रहा था। तो मैंने दो-चार शाबर मन्त्र बचपनमें सीखे थे गोंडोंसे। प्रत्यक्ष उसकी शक्ति देखनेमें आती थी। अब लोग कहेंगे कि यह सब अन्धश्रद्धा है, अन्धविश्वास है—हमने तो हमारे हृदयमें उस पिटारीको बन्द कर दिया कि जा भाई, अब मत निकल—अब मत निकल क्योंकि लोग सुनकर विश्वास नहीं करते हैं तो उस यन्त्र,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

मन्त्र, तन्त्रकी पिटारी थी उसे बन्द कर दिया। अब वह हमारे किये होता भी नहीं है। कोई हमसे कहना भी मत। न अब उसका स्मरण है। मन्त्रका हमने चमत्कार देखा है। शब्दमें इतनी शक्ति है कि वह देवताको हृदयमें-से निकालकर बाहर रख दे और देवताको स्वर्गमें-से बुलाकर सामने ही खड़ा कर दे। ऐसी मन्त्रोंमें शक्ति होती है।

ब्रह्मसूत्रमें एक प्रकरण आया है—यह आपको जान-बूझकर सुनाते हैं—यह जो यज्ञ होता है, अग्निहोत्र होता है—उससे अन्तःकरणकी शुद्धि होती है। परन्तु वह तब करना चाहिए जब पत्नी साथ हो। पति-पत्नी मिलकर साथमें यज्ञ करते हैं। ब्रह्म-सूत्रमें यह अधिकरण आया कि जिसकी पत्नी मर गयी हो वह अपनी शुद्धिके लिए क्या करे? क्योंकि अग्निहोत्र तो कर नहीं सकता, यज्ञ तो कर नहीं सकता। तब उसकी अन्तःकरण-शुद्धि कैसे हो? उसके उत्तरमें यह प्रकरण है। इस प्रकरणका नाम है विधुराधिकरण माने विधुर पुरुषके अन्तःकरण-शुद्धिके लिए क्या कर्तव्य है। वहाँ बताया कोई जरूरत नहीं है। क्या बिना यज्ञ, बिना अग्निहोत्रके अन्तःकरण शुद्ध ही नहीं हो सकता? यह बात नहीं है।

जपेनैव तु संसिध्येद् ब्राह्मणो नात्र संशयः। मनु० २.८७

यदि ब्राह्मण जप करेगा—ब्राह्मण माने क्षत्रिय, वैश्य सब—जपके अधिकारी हैं—वे जब जप करेंगे तो जपसे ही उनके अन्तः-करणकी शुद्धि हो जायेगी। आजकल तो हम जहाँ जाते हैं वहाँ कुछ-न-कुछ आश्चर्य तो हमको मिलता है। क्या आश्चर्य मिलता है। चाहे जो जिसको चाहे जो मन्त्र जपनेको बता देता है। अब उसको मालूम नहीं है कि यह मन्त्र किसके साथ ठीक बैठेगा? मन्त्रकी शक्ति कैसे काम करती है, उसको तो वह जानता नहीं है। गायत्रीका जप है उसमें मन्त्रकी शक्ति है, वह अलग है और मन्त्रसे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

जो लाभ होता है सो अलग। परन्तु वह जब ठीक जगहपर बैठे तब लाभ पहुँचाती है। यह नहीं है कि चाहे जिसको आनन्द भैरव-रस पिला दो—तो छटपटाने लगेगा गरमीके मारे। और हमको आनन्दभैरवरस पिला दो तो हममें ताकत आजायेगी। क्योंकि पित्तप्रकृति और बात प्रकृतिका अन्तर होता है।

इसी प्रकार ये मन्त्र भिन्न-भिन्न प्रकृतिवालोंके लिए होते हैं। गायत्रीका जप अलग है। महा मृत्युञ्जयका जप अलग है। यजुर्वेदके तो प्रत्येक मन्त्रपर—कात्यायन सूत्रमें बहुत प्राचीन जप करनेकी विधि कही गयी है। यह श्रौतसूत्र है। श्रोतसूत्र, धर्मसूत्र और गृह्यसूत्र—ये तीन प्रकारके सूत्र होते हैं। वे वेदके छह अङ्गोंमें-से एक अङ्ग हैं। एक-एक मन्त्रका अलग-अलग कल्प कात्यायन-सूत्रमें बताये हैं। ये लोग जो सुन-सुनाकर फल लेते हैं फिर कोई अन्तर नहीं दिखता है तो कहते हैं अरे, मैंने तो किया, यह कुछ नहीं है, यह तो अन्धश्रद्धा है, अन्ध-विश्वास है। उसको ठीक अधिकारी पुरुष, ठीक विधिसे, परम्परासे प्राप्त करके जब उसका अनुष्ठान करता है, तब वह सफल होता है। अब संन्यासी होकर होम करे। कैसे काम बने ? न चोटी न जनेऊ और वर्णधर्मसे भ्रष्ट संन्यासी होकर होम करने लगे—होम संन्यासीके लिए नहीं होता क्योंकि उसके लिए अग्नि-स्पर्श वर्जित है।

आप लोगोंमें शायद कोई जाता है। हमलोग उनके यहाँ जाते हैं। वे कोई साधारण क्रिया करते हैं और उँगली पर हमको उठा लेते हैं। प्रबुद्धानन्द, विमलानन्दको भी उठा लिया। लेकिन उसमें एक बात देखनेमें आयी कि यदि रजस्वला स्त्री उठानेवालोंमें शामिल हो जाये तो वह प्रक्रिया बिलकुल काम नहीं करती। जब उसको हटा देते हैं तब वे उठा सकते हैं। यह क्या संसारकी प्रक्रिया है, इसको साधारण दृष्टिसे नहीं समझ सकते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

वेदके मन्त्रोंका जप अलग होता है। तन्त्रके मन्त्रोंका जप अलग होता है और पुराणके मन्त्रोंका जप अलग होता है और पञ्चरात्रके मन्त्रोंका जप अलग होता है। जप ओठ हिलाकर करना कि गलेसे करना कि हृदयके करना कि मूलाधारसे जप करना, इसकी भी अलग-अलग प्रक्रिया होती है। इसको यज्ञ इसलिए कहते हैं कि बाहर अग्नि प्रज्वलित करके ब्राह्मण बुलाकर वेद-मन्त्रका सही-सही उच्चारण करके किया जाता है।

आप लोगोंको मालूम होगा कि त्वष्टाने इन्द्रको मारनेके लिए एक वेदके मन्त्रका उच्चारण करके अग्निमें हवन किया और उस मन्त्रके उच्चारणमें एक स्वरका अन्तर आगया—केवल एक स्वरका—और उसका अर्थ हो गया कि इन्द्रको नहीं मारे—इन्द्र अपने शत्रुको मारे। एक स्वरके अन्तरसे यह अर्थ हो गया। एक बार नारदजीको बड़ा अभिमान हो गया कि मैं संगीतका बड़ा भारी ज्ञाता हूँ। भगवान् अभिमान नहीं देख सकते। एक बार नारदजी गन्धर्वलोकमें गये। देखा कि राग-रागिनी कोई लंगडी हो गयी है, कोई लूली हो गयी है, कोई अन्धी हो गयी है। राग-रागिनी गन्धर्व-लोकमें मूर्तिमान होकर रहती हैं—लेकिन सब अन्धी, लंगड़ी, लूली—नारदजीने कहा—यह क्या हुआ ? बोले महाराज, आप जो बेसुरा बजाते हो न ! उससे हम लोगोंका अङ्ग-भङ्ग हो गया है। बेसुरा राग बजानेसे राग-रागिनियोंका अङ्ग-भङ्ग हो जाता है।

इसी प्रकार जब जप-मन्त्रोंका ठीक-ठीक जप नहीं किया जाता तब उनका अङ्ग-भङ्ग हो जाता है। हमारे जीवनके उत्तम का, जिसका हम नाम लेते हैं—बड़ा समझकर नाम लेते हैं—राम-राम, कृष्ण-कृष्ण तो उनको उत्तम भगवत्-रूप समझकर नाम लेते हैं। उनकी उत्तमताका हमारे अन्दर अवतरण होता है और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

जब हमारे उच्चारण किये हुए शब्द जाकर उन भावमय मूर्तियों-का स्पर्श करते हैं—तो हमारे भाव ऊर्ध्वगामी हो जाते हैं। यह बात प्रत्यक्ष देखनेमें आती है कि जो नीचेकी शक्तियाँ हैं, निम्न शक्तियों-से सब ऊर्ध्वमुखी होकर जपसे ऊपर उठती हैं।

जप-यज्ञ क्या हैं? यह व्यक्तिको उत्तम अवस्थामें ले जानेवाले होते हैं। हृदयमें श्रद्धा आयी, ध्यान हुआ देवताका, उत्तम शब्दोंका उच्चारण हुआ और शरीरमें उत्तम स्फुरण हुए और रग-रगमें उस उच्चारणकी शक्ति व्याप्त हुई। तो जीवनमें सिद्धि लानेके लिए, शक्ति लानेके लिए और अपने जीवनका विकास करनेके लिए जप-यज्ञ बहुत श्रेष्ठ यज्ञ है, इसलिए भगवान्‌ने गीतामें 'यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि' कहा। यज्ञ बहुत प्रकारके होते हैं। कोई शब्दादि विषयोंको इन्द्रियाग्निमें हवन करते हैं। कोई इन्द्रियादिको शब्दादि विषयोंमें हवन करते हैं। कोई प्राणको अपानमें करते हैं। कोई अपानको प्राणमें करते हैं। बारह प्रकारके यज्ञोंका वर्णन गीतामें एक स्थानपर लिखा हुआ है। परन्तु वे सब यज्ञ हैं ही और जो बाहर यज्ञ होते हैं—जैसे अश्वमेध यज्ञ है, राजसूय यज्ञ है, वृहस्पति सव है, वाजपेय है, वैश्यस्तोम है, निषाद स्थपति याग, है, आदि उन सब यज्ञोंके बीचमें भगवान्‌के नामका, भगवान्‌के मन्त्रका जप मूर्धन्य बन गया है।

यह जप अभिमानोत्पादक नहीं होना चाहिए, परम्परासे प्राप्त होना चाहिए, अधिकारीके द्वारा होना चाहिए, विधिपूर्वक होना चाहिए, श्रद्धासे होना चाहिए तो यह जप-यज्ञ मनुष्यको श्रेष्ठ बना देता है। जैसे यहाँ विष्णुका आराध्यके रूपमें विभूतिका वर्णन है वैसे वहाँ अनधिकारीको भी अधिकारी बना देनेवाले प्रेरकका प्रतिपादन है।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

प्रवचन : ९

८-११-८१

सबके अन्तर्यामी, सबके प्रेरक और सबके सारथि भगवान् हैं। पर सबके सारथि होनेमें और अर्जुनके सारथि होनेमें थोड़ा अन्तर है। साधारण जीवके सारथि हैं भगवान् अदृश्यरूपमें सामान्य प्रेरणा देते हैं। भक्तके सारथि हैं भगवान्—दृश्य रहकर। भक्त देखता है कि भगवान् हमको प्रेरणा दे रहे हैं, आज्ञा दे रहे हैं, अनुज्ञा दे रहे हैं। और जो अभक्त हैं उनको दिखाई नहीं पड़ता। वैसे सञ्चालक सबके भगवान् ही हैं। जैसे वर्णन आता है—'अग्निर्वै वायुसारथिः'। अग्निका सारथि वायु है। 'अग्निर्वै वायु सचिवः'। अग्निका सचिव कौन है? वायु। सचिव है, सारथि है—सारयति अश्वान्—जो घोड़ेको चलाता है। पर अभक्तोंको इस बातका पता नहीं चलता है कि वह प्रेरक कौन है?

उपनिषदोंमें यह प्रश्न आया है कि किसकी प्रेरणासे हमारा मन कहीं जाता है? केनेषितं पतति प्रेषितं मनः (केन उप० १.१) कौन हमारे प्राणोंका सञ्चालन करता है? किसकी प्रेरणासे हमारी आँखें देखती हैं? हमारे कान सुनते हैं। हमारी वाणी बोलती है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

हमारा मददगार कौन है ? क्या विडम्बना है जीवनकी कि हम अपने उस सहायकको, उस सचिवको, उस सारथिको, उस मददगारको पहचानते नहीं हैं। सो जानेपर भी जो हमारा साथ नहीं छोड़ता है—हमारे जीवनकी रक्षा करता है, मर जानेपर भी जो हमको मरने नहीं देता है, हमारे जीवनकी गतिको चालू रखता है। वह प्राणोंका प्राण प्रभु हमारे जीवनका सखा है। वेदमें एक मन्त्र आता है। 'जिसका भाव यह है कि जो अपने साथी और सचिव सखाको नहीं जानता है, उसको कुछ बोलनेका भी अधिकार नहीं है। जिसको यह मालूम नहीं है कि वाणीके भीतर बैठकर हमारी वाणीको शक्ति कौन देता है, उसको वाणीका प्रयोग करनेका भी अधिकार नहीं है। वही है अर्जुनका सारथि और यही है हमारा सारथि।

'धियो यो नः प्रचोदयात्' (ऋग्वेद ३.६२.१०)—जो हमारे बुद्धिको प्रेरित करता है। दो बात गायत्रीमें कही गयी है। एक तो वह सृष्टिकर्ता स्वयंप्रकाश है और दूसरे हमारे बुद्धि-वृत्तियोंका प्रेरक है। एक प्रकारसे महावाक्य भी आगया इसमें और यह भी बात बता दी कि तुम विश्वके मूलमें जाकर परमात्माका साक्षात्कार नहीं कर सकते। यहीं अपने अन्तःकरणके मूलमें बैठकर परमात्माका साक्षात्कार करो। 'अन्तः प्रवृत्तः शास्ता जनानाम्'। वेद भगवान् कहते हैं, वह सबके हृदयमें बैठा है। और सबका शासन कर रहा है। वही 'शरीरं रथमेव तु' (कठ उप० १.३.३) शरीर रथ है और 'आत्मानं रथिनं विद्धि', (कठ० १.३.३)। आत्मा रथी है और 'बुद्धि तु सारथिं विद्धि। तथा बुद्धिमें बैठकर वासुदेव सारथिका काम कर रहे हैं। गीताके जो गुरु हैं भगवान्, वे हमारे हृदयमें बैठे हैं। और हम उनके शिष्य अर्जुन हैं। वे जो कुछ कहते हैं हमसे ही कहते हैं। हम गीताकी बात सुनें तो भगवान् हमारे हृदयमें बोल रहे हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

देखो आपको एक कौतूहल दिखाते हैं। हमने कहा यदि हम मनुष्य न होते, ऊँट होते और भगवान् हमको बता रहे हैं —

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। (२.४७)

वहाँ कर्मका अर्थ क्या होता ? बोझ ढोओ, गाड़ी चलाओ। खानेको तो तुम्हारा मालिक देगा 'मा फलेषु कदाचन'। अच्छा, हम बैल होते तो इसका क्या अर्थ होता ? हम चिड़िया होते तो इसका क्या अर्थ होता ? ऐसे हम लोग पहले गीता पढ़ते थे। ५.४ जने बैठ जाते। एकके हाथमें ज्ञानेश्वरी, एकके हाथमें शाङ्कर-भाष्य, एकके हाथमें मधुसूदनी, एकके हाथमें लोकमान्य तिलक। मैं, अवधूत, चक्रजी, गोस्वामीजी, पुस्तक खोल-खोलकर एक-एक श्लोकका अर्थ देखते। फिर थोड़ी देर आँख बन्द कर लेते। आओ भाई, अलग-अलग सोचें—हम स्त्री हैं तो भगवान् क्या बोल रहे हैं ? हम पुरुष हैं तो भगवान् क्या बोल रहे हैं ? सबके लिए निकलता अर्थ। ऐसे नहीं कि जो भक्त चन्दन-टीका लगाकर जनेउ पहनकर गीताका पाठ करते हों उन्हींके लिए गीता हो, यह बात नहीं है। यह जो गीतामें बोलनेवाले भगवान् हैं, वे सबके लिए बोलते हैं।

अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते। १०.८

मैं सबका बाप हूँ—संचालक हूँ। साफ कह दिया—

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम्। १६.४६

जो लोगोंका संचालन करता है और जो सब बना हुआ है। वह भगवान् है। गीताके भगवान्को, गीताके प्रेरकको आप अपनेसे दूर मत कीजिये। अबसे ५००० वर्ष पहले महाभारत-युद्ध कुरुक्षेत्रमें हुआ। और वहाँ एक रथ था, एक अर्जुन था, एक कृष्ण थे। हम उस इतिहासको मना नहीं करते। परन्तु अब जिस युगमें आप हैं—आपसे ५००० वर्षं दूर नहीं हैं भगवान्। आपसे १०००-२०००

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

मोल दूर नहीं है भगवान्। वह कुरुक्षेत्रमें नहीं हैं, आपके हृदयमें हैं। वह द्वापरमें नहीं हैं, इसी कलियुगमें हैं और वह दूसरे रथमें नहीं हैं, इसी रथमें हैं। वह अर्जुन दूसरा नहीं है, आप ही हैं। अपनेको पहचानिये। देखिये आपका मार्ग-दर्शक, आपका पथ-प्रदर्शक 'कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम्'—वह जगदगुरु आपके साथ है।

जब हम पहले बोलते थे 'पिताहमस्य जगतः'—आनन्दमें भरकर बोलते थे। कभी-कभी चिल्लाकर भी बोलते थे—

पिताहमस्य जगतो माता धाता पितामहः।
वेद्यं पवित्रमोंकार ऋक्सामयजुरेव च॥
गतिर्भर्ता प्रभुः साक्षी निवासः शरणं सुहृत्।
प्रभवः प्रलयः स्थानं निधानं बीजमव्ययम्॥
तपाम्यहमहं वर्षं निगृह्णाम्युत्सृजामि च।
अमृतं चैव मृत्युश्च सदसच्चाहमर्जुन॥ ९.१७.१९

आपने शायद दूसरे मजहबोंकी किताबें पढ़ी होंगी? मैं सत् और असत् दोनों हूँ। 'सदसच्चाहमर्जुन। यह बोलनेवाला ईश्वर, हमारे कृष्णके सिवाय, दूसरे किसी मजहबका ईश्वर ऐसे नहीं बोलता। मैं ही सत् हूँ, मैं ही असत् हूँ। ऐसे बोलनेवाला ईश्वर 'मृत्युः सर्वहरश्चाहम्' (१०.३४)—मैं मौत हूँ। और फिर भी आप लोगोंको आश्चर्य हो जाता है कि 'द्यूतं छलयतामस्मि' (१०.३६) क्यों बोलते हैं? अरे भाई जब वह असत् है, सत् है—मृत्यु है—'जीवनं सर्वभूतेषु' (७.९)। सबका जीवन है और 'मृत्युः-सर्वहरश्चाहम्' (१०.३४)। वही मृत्यु है। वही सत् है, वही असत् है। ऐसा बोलनेवाला सर्वात्मा ईश्वर कोई मजहबी ईश्वर नहीं होता है। यह मजहब नहीं है। यह किसी आचार्यके द्वारा चलाया हुआ धर्म नहीं है। यह कहीं पेड़के खोडरसे आया हुआ सन्देश नहीं है। यह अपने बेटेके लिए भेजी हुई चिट्ठी नहीं है। यह तो आपके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

दिलमें बैठा हुआ जो आपका दिलदार है, वह बोल रहा है—आपके लिए।

उसने बताया—यह मैं, यह मैं, यह मैं, जड़ भी अपनेको बताया—चेतन भी अपनेको बताया। ऐसा परमात्मा आपको किसी मजहबमें नहीं मिलेगा। 'अचरं चरमेव च' (१३.१५) चर भी वही है—जो चलती-फिरती चीजें हैं। वह भी वही है और जो अचल चीजें हैं वह भी वही है। वैज्ञानिक कह देते हैं सब जड़ है, चेतन है ही नहीं। कोई कहते हैं परमात्मा चेतन ही है, जड़ है ही नहीं। यह ऐसा परमात्मा है कि अपनेको जड़ और चेतन दोनों बतावे। यह अभिन्ननिमित्तोपादान कारण नामका जो निरूपण है, वही कुम्हार है, वही माटी है, बननेवाला भी वही, बनानेवाला भी वही। बननेवाला घड़ा भी वही और बनानेवाला कुम्हार भी, माटी भी वही, ऐसे परमेश्वरका वर्णन है। मैं बार-बार यह बात इसलिए कहता हूँ कि दूसरे मजहबोंके मत हमारे ऊपर हावी हो जाते हैं।

अहं आदिश्च मध्यं च भूतानामन्त एव च।

मैं ही भूतकी आदि हूँ, मध्य हूँ, अन्त हूँ। 'यच्चापि सर्वभूतानां बीजं तदहमर्जुन'। सम्पूर्ण प्राणियोंका बीज मैं हूँ। विभूति बतानेकी एक शैली है। इस तरफ आपका ध्यान खींचते हैं। आप ध्यान दें। जड़ वस्तुओंका नाम ले-लेकर भगवान्‌ने बताया ही है—विभूतियोंमें कि यह मैं हूँ—'स्थावराणां हिमालयः'। अपनेको साँप भी बताया है—'सर्पाणामस्मि वासुकिः'। अनन्तश्चास्मि नागानां'—नाग भी बताया। और 'वैनतेयश्च पक्षिणाम्'—अपनेको चिड़िया भी बताया। यह 'मरीचिमरुतामस्मि' आया। ये मरुद्गण हैं, आदित्यगण हैं, वसुगण हैं, रुद्रगण हैं। इनमें एक-एक नाम लेकर भगवान् अपनेको बताते हैं। परन्तु एक-दो बात

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

ऐसी हैं, अभी आपके सामने चर्चा करूँगा। मरुद्गणके उनचास नाम हैं। ग्यारह रुद्र होते हैं। द्वादश आदित्य होते हैं। आठ वसु होते हैं।

उनचास मरुद्गण होते हैं। जितने मरुत हैं—बहुत भेद होता है, उनका आवह प्रवह, आदि; किसीकी गति नीचेको होती है, किसीकी गति ऊपरको होती है। किसीकी गति टेढ़ी होती है, कोई बादल लानेवाला होता है, कोई गरमी लानेवाला होता है, कोई गन्ध लानेवाला होता है। वायुके अनेक भेद होते हैं। भगवान्‌ने बताया कि ये जितने मरुद्गण होते हैं उनमें मैं मरीचि हूँ। मरीचि नामक कोई मरुत् नहीं है। इसका अर्थ है—वायुमें जो रश्मियाँ हैं, किरणें हैं वह मैं हूँ। सम्पूर्ण वायुके भेदोंमें जो एक ज्योति है, जो एक चमक है, जो एक गति देनेवाली संज्ञा है, वह मैं हूँ। बहुतोंमें एक—ऐसे बता दिया। मरुद्गण बहुत हैं और उनमें मैं मरीचि, सबमें रहनेवाला, मैं एक हूँ।

'अक्षराणामकारोऽस्मि' (१०.३३)। अक्षर बहुत-से हैं। जो कागजपर लिखते हैं, उनका नाम अक्षर नहीं होता है। ये जो लिपि है—काली स्याही या नीली स्याही पोत देते हैं कागजपर, वह स्याहीसे पुती हुई जो शकल है, लिपि है, उसका नाम अक्षर नहीं है। टङ्कण है—टाईप कर देते हैं—उसका नाम भी अक्षर नहीं है। जो तालके पत्तेपर उल्लेख कर देते हैं, वह अक्षर नहीं है। एक लिपि होती है, एक उल्लेख होता है, एक टङ्कण होता, इनका नाम अक्षर नहीं है। लिपि चाहे चाइना हो, चाहे लॅटिन हो, चाहे रशियन हो, चाहे नागरी हो, जो हम 'क' बोलते हैं वह एक होता है। और क ख ग में जो 'अ' होता है वह एक होता है। 'अक्षराणामकारोऽस्मि'—जो कण्ठ, तालु आदिके आघातसे उच्चारित होता है वह अक्षर है—चीनमें भी क क ही है और लॅटिनमें भी क क ही है और एशियनमें भी क क ही है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

हमारे संस्कृत उच्चारणमें भी क क ही है। जो लिपियाँ अनेक होनेपर भी और देश अनेक होनेपर भी एक रूप जिसका उच्चारण होता है, उसका नाम होता है 'अक्षर'। 'न क्षरति' उसका नाश कभी नहीं होता। बिना 'अ'के कोई भी अक्षर बोला नहीं जा सकता। जिसके बिना किसी अक्षरका उच्चारण नहीं हो सकता वह क्या है ? वह 'अ' है। परमात्मा कैसा है ? जिसके बिना किसीको सत्ता सिद्ध नहीं होती। जिसके बिना किसीका ज्ञान सिद्ध नहीं होता। जिसके बिना कोई रूप-रङ्ग नहीं है। उसको बोलते हैं अक्षर—अब आपका मन्त्र आया 'अक्षराणाम् अकारोस्मि' यह अलग हो गया। और 'गिरामस्म्येकं अक्षरम्'। (१०.२५)। एक अक्षरमें, वाणीमें मैं एक अक्षर हूँ; यहाँ एक अक्षरका अर्थ है—ॐकार—'अक्षराणाम् अकारोस्मि' 'अ' है और वाणीमें ॐकार है।

अब देखो 'यज्ञानां जपयज्ञोस्मि'। (१०.२५) जप-यज्ञ हिंसा यज्ञ नहीं है। न इसमें लकड़ी लानी पड़े न आग जलानी पड़े—न मन्त्रके लिए ब्राह्मणकी आवश्यकता पड़े और न इसमें खास अधिकारीकी जरूरत पड़े। जप-यज्ञ सब कर सकते हैं। यहाँ तक कि 'अशुचिर्वा शुचिर्वापि'। चाहे पवित्र हो चाहे अपवित्र। जब भगवान्‌का स्मरण करेंगे तब पवित्र हो जायेंगे। न आग जलानी पड़ी, न लकड़ी लानी पड़ी, न घी लाना पड़ा और न ब्राह्मणको मन्त्र बोलना पड़ा। न आहुति देनेका प्रयास, न अधिकारका कोई प्रश्न। केवल जीभ हिला दी। जप हो गया। यज्ञ सम्पन्न हो गया।

और देखो गायत्रीका भी नाम है—'गायत्री छन्दसामहम्' (१०.३५)। छन्दोंमें गायत्री हूँ। जपके दो मन्त्रोंका स्पष्ट उल्लेख गीतामें हो गया। 'ओम् इत्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन्'। और 'गायत्री छन्दसामहम्' और 'यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि'। जपमें

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

सुगमता क्या है ? इसमें 'हर्रं लगे न फिटकरी और रङ्ग चोखा आवे'। बैठ गये—जीभ हिलाओ, चाहे मनसे करो। यह जो भेद करते हैं कि यह मनका जप सूक्ष्म है, यह वैखरी वाणीका जप है, यह मध्यमा वाणीका जप है, यह पश्यन्ती वाणीका जप है, यह परा वाणीका जप है। ये वाणीके अनेक भेद होते हैं। मूलाधारसे परावाक् होती है। किनारामी लोग मानते हैं मणिपूरकसे होती है। तान्त्रिक लोग मानते हैं—हृदयसे होती है। मूलाधारसे भी होती है—दोनों ही बात तन्त्रमें हैं। कोई कहते हैं कण्ठमें मध्यमा वाणी है। जिह्वामें वैखरी वाणी है। पर जप इसलिए नहीं किया जाता कि हम कहाँसे उसको बोल रहे हैं। जप इसलिए किया जाता है कि उससें अपने प्यारे प्रभुका स्मरण हो। उसमें प्रभुकी शक्ति आती है।

भक्तिका सिद्धान्त यह है कि हम जो जप करते हैं वह हमारी शक्तिसे काम नहीं करता, प्रभुकी शक्तिसे काम करता है। नहीं तो अजामिलने किस नियमके अनुसार अपने बेटेका नाम लिया था ? और कुब्जाने किस नियमसे कृष्णका रूप देखा ? कोई नियम नहीं। परन्तु भगवान् अपने आपको कृपा करके प्रकट कर देते हैं। एक बात तो जल्दी श्रद्धाके अन्दर नहीं आयेगी और असलमें बुद्धिसे जो बात समझमें नहीं आती उसीपर श्रद्धा करनी पड़ती है। यदि आप समझकर श्रद्धा करना चाहते हैं तो वह आपकी समझदारीके अन्तर्गत आगया। उसपर श्रद्धा करनेका कारण कहाँ रहा ? श्रद्धा तो उसी बातपर की जाती है, जो ठीक-ठीक समझमें नहीं बैठती है। समझके बाहरकी वस्तुपर श्रद्धा की जाती है।

आपको एक हलकी-फुलकी बात सुना देते हैं। एक था गाँवका किसान। वह किसी महात्माके सत्सङ्गमें कभी-कभी जाता। एक दिन उसने बाबाजीसे पूछा कि बाबाजी, हमको कोई भगवान्का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

नाम बता दो हम उसका जप करेंगे। बार-बार लेते रहेंगे। हल भी जोतना है—नाम भी लेना हैं। बाबाजीने सोचा कि गाँवका गँवार क्या नाम लेगा ? उसको बता दिया—'अघमोचन'। अघमोचन, अघमोचन २-४ बार बोल दिया। हमारे पास भी ऐसे लोग बहुत आते हैं, जिनको हम कोई मन्त्र बता दें—बरस दो बरस बाद मिलते हैं तो कहते हैं—भूल गये महाराज—याद नहीं है क्योंकि जब करेगा नहीं तो भूल ही जायेगा। कैसे याद रहेगा ? वह बिचारा अघमोचन-अघमोचन करता चला। रास्तेमें भूल गया तो 'घमोचन घमोचन' बोलने लगा। 'अ' छूट गया—'घमोचन घमोचन' बोलने लगा और जाकर हल जोतने लगा।

यह नाम जब भगवान्‌ने वैकुण्ठमें सुना तो उनको हँसी आगयी। हँसी आयी तो लक्ष्मीजीने पूछा प्रभो, आप क्यों हँस रहे हैं ? भगवान्‌ने कहा ऐसे ही हँस रहे हैं। उसमें कोई बात नहीं है। अब वे तो जिद्दपर आगयीं कि बताओ। मेरी कोई बात सोचकर हँसे होंगे। बताना पड़ेगा। आखिर लक्ष्मी-लक्ष्मी ही तो हैं। भगवान्‌ने कहा कि आज हमारा एक नया नाम संसारमें रखा गया है, वह सुनकर मैं हँस रहा हूँ। लक्ष्मोने कहा क्या नाम है ? बोले बताने लायक नहीं है। बोले क्यों नहीं बताने लायक है ? भगवान्‌ने कहा कि अच्छा तुम जाकर सुन आओ। देखो नया है कि नहीं ? लक्ष्मीने कहा मैं अकेली नहीं जाऊँगी तुम भी साथ चलो। अब दोनों हल जोतनेवाले किसानके पास पहुँच गये।

भगवान्‌ने कहा कि तुम जाकर सुन आओ, मैं जरा आड़में गड्ढेमें छिप जाता हूँ। वे गयीं—जाकर पूछने लगीं—भगतजी—भगवान्‌का क्या नाम ले रहे हो ? अब वह तो बोले ही नहीं—'घमोचन, घमोचन'। सुन तो लिया तुम 'घमोचन-घमोचन' कह रहे हो, लेकिन यह नाम किसका है ? अब वह तो अपना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

'घमोचन' करे कि उनसे बात करे। जो जप करता है, उसको बात करना नहीं सुहाता है, वह नाराज होगया। बोला तेरे खसमका नाम ले रहा हूँ। अरे, लक्ष्मीजीने कहा कि यह तो हमको पहचान गया! तब पूछा, उन्होंने कि आख़िर वह है कहाँ? तो बोला गड्ढेमें। अब तो भगवान् और लक्ष्मी दोनों आकर उसके सामने प्रकट होगये। इसको बोलते हैं—विश्वास। उसका विश्वास था कि भगवान्‌की ऐसी करुणा है कि वे अपने बलसे अपना दर्शन देने आते हैं।

जो लोग यह सोचते हैं कि हमारी श्रद्धा ही काम करती है—आप इसको थोड़ा गौरसे सोचो—जो लोग सोचते हैं कि हमारी मानसिक शक्ति काम करती है, हमारी श्रद्धा काम करती है, हमारा आत्मबल काम करता है, वे भगवान्‌पर विश्वास कहाँ करते हैं! उनका विश्वास तो भगवान्‌पर नहीं है, अपने मनपर है, अपनी श्रद्धापर है, अपनी करतूतपर है, वे भगवान्‌पर विश्वास कहाँ करते हैं? जपका अर्थ यह होता है कि जिसमें देवताकी शक्ति प्रकट होती है। स्वाध्यायात् इष्टदेवता-शम्प्रयोग: (योगसूत्र २.४४)। भगवान् पतञ्जलिने कहा कि जब हम जप करते हैं तो इष्टदेवता आकर स्वयं हमसे मिलता है। वह जपकी शक्ति नहीं है वह भगवान्‌की शक्ति है। भगवान्‌ने अपनी शक्ति जपमें डाल दी। आपको यदि नामपर विश्वास न होता कि यह भगवान्‌का है तो आप बार-बार उसका उच्चारण क्यों करते? बार-बार उच्चारण करते हैं, इसलिए आपका विश्वास है कि यह भगवान्‌का नाम है। इसका बोलना महत्त्वपूर्ण है—यदि यह श्रद्धा आपको न होती तो क्यों बोलते? ओर बार-बार क्यों बोलते हैं। वार-बार बोलनेमें प्रेम है और विश्वास भी है।

जब बार-बार एक क्रिया जीभसे होगी—राऽऽऽम राऽऽऽम—थोड़ा लंबाना चाहिए। राम-रामको रॅम-रॅम नहीं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

करना चाहिए, रम-रम नहीं बोलना चाहिए। राऽऽऽम राऽऽऽऽम—आपके हृदयमें जो कूड़ा-करकट भरा हुआ है उसको हटाता है। इसको थोड़ा लंबादें। देखो 'रा' और 'म' के बीचमें आप जितना अवकाश, जितनी पोल—जितना स्थान रखेंगे—उसमें आपके मनमें कोई संसारकी वस्तु नहीं आयेगी। राऽऽऽऽम, कृऽऽष्ण, कृऽऽष्ण, कृऽऽऽष्ण—आधे सेकंडके लिए आपका मन विषय-वासनासे और विषय-चिन्तनसे रिक्त हो जायगा, खाली हो जायगा। और उतनी देरके लिए आपका मन जब लावारिस हो जायेगा तो उसमें भगवान् प्रकट हो जायेंगे। उसको संधिस्थान बोलते हैं। 'रा' और 'म' की सन्धि सामान्य चेतन। यह जो जपकी महिमा है, यह बड़ी विलक्षण है।

हमको तो यह कहना था कि वायुके रूप अनेक हैं उनमें मरीचि एक है। और अक्षर अनेक हैं और उनमें 'अ' एक है। और वाणी अनेक है और उसमें प्रणव एक है। इसमें भी लौकिक प्रणवसे वैदिक प्रणवका भेद होता है। वह अपने मनसे पुस्तकमें देखा—हमलोग संस्कृतमें ॐ कैसे बोलते हैं? किसीने कहा गाम् आनय—गाय ले आओ। उसका उत्तर हम देंगे ॐ, ॐ माने अच्छा जी। हाँ! दो-के लिए ॐ बोलते हैं। वहाँ भगवन्नाम नहीं है। किसीने कोई आज्ञा की और ॐ इति स्वीकारे। स्वीकारके लिए ॐ बोल दिया। इसको लौकिक ॐ बोलते हैं। अपने बेटेका नाम लोग ॐ रखते हैं। ॐ प्रकाश। ॐ नामके लड़के भी हमको कई मिले हैं। केवल ॐ। आर्यसमाजी लोग ओम् लिखते हैं तो ओ और म्के बीचमें ३ और लिखते हैं। माने उसका लुप्त उच्चारण होना चाहिए। यह उसका अभिप्राय होना है 'ओऽऽऽऽम्'।

एक तान्त्रिक भेद और होता है। हमलोग जो अ, आ, इ, ई, ए ऐ 'ओ' चौदहवाँ स्वर जो बोलते हैं—इसपर बिन्दो लगा दी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

जाय—अनुस्वार लगा दिया जाय, तो ओं हो जाता है। वह भी वैदिकमें ही है। और एक वेदमें जिस रीतिसे प्रणवका उच्चारण आता है, अकार-उकार-मकार अर्धमात्रा; नौ विभाग होते हैं इसके। बिन्दु, नाद, कला, अकार, उकार, मकार—अर्धमात्रा, तुरीय, नाद इनसे शरीरका कल्प होता है जैसे वैद्यलोग आयुर्वेदिक कल्प करवाते हैं वैसे ही मान्त्रिक कल्प होता है। भगवान् अपनेको ऐसे बता रहे हैं। यह तो नमूना है।

अब आप लोगोंको स्त्रियोंमें जो भगवान्की रुचि है, उसकी चर्चा भी कर देते हैं। जैसे वाणी अनेक है और उसमें प्रणव एक है—जैसे लिपि अनेक हैं, उसमें अक्षर एक है। स्वर-वर्ण अनेक हैं, उसमें 'अ'कार एक है। वैसे अर्जुनने कहा—कृष्ण, तुम अपनी सब विभूति बताते हो—किसी महिलाका नाम भी ले दो कि वह भी तुम्हारी विभूति है। नहीं तो पीछे तुम्हारे ऊपर आक्षेप होगा कि स्त्रियोंका इतना प्रेम लिया और इतने व्याह किये और जब विभूतियोंकी गिनती करनी हुई तो किसी महिलाका नाम ही नहीं लिया। इतनी उदासीनता क्यों? श्रीकृष्णके मनमें भी यह बात आयी कि यदि मैं किसी एक महिलाका नाम लेऊँगा तो दूसरी महिलाएँ नाराज हो जायेंगी। यह मैं आप लोगोंपर कटाक्ष करनेके लिए नहीं कह रहा हूँ। यह कटाक्ष नहीं है—यह स्वभावका चित्रण है। भगवान्ने सोचा कि बात ऐसे ढङ्गसे कहनी चाहिए कि सब कहें कि यह हममें है, यह हममें है। हमको ही श्रीकृष्ण अपनी विभूति बता दें।

आप लोग सब उनकी विभूति ही हैं। क्योंकि पुरुषमें भगवान्ने जब अपनी विभूति बतायी तो आपके ध्यानमें होगा 'पौरुषं नृषु'। (७.८) पुरुषोंमें जो पौरुष है वह मैं हूँ। एक आदमीका नाम कहाँ हुआ? सामान्यरूपसे जो पौरुषयुक्त पुरुष है, उसको भगवान् अपनी विभूति बताते हैं। उसमें आप हो सकते हैं कि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

नहीं ? निश्चय ही जब आप पौरुष कर रहे हैं तो आप भगवान्‌की विभूति हैं। मुर्दे हो गये तो क्या विभूति हो ?

उत्तिष्ठध्वं जागरध्वमग्निमिच्छध्वं भारताः।

अरे भारतो, प्रतिभा-सम्पन्न पुरुषो ! उठो, जागो—अपने जीवनमें अग्निके ज्वलन—प्रकाशका आवाहन करो, यह भगवती श्रुति बोलती है। जैसे सब पुरुषोंमें पौरुषके रूपमें भगवान् हैं। बोले फिर हमारे अन्दर भगवान् हों तो पुरुषोंकी बराबरी हो गयी। भगवान्‌ने कहा नहीं-नहीं, पुरुषोंसे माताओं तुम बड़ी हो, महिलाओ, तुम्हारे अन्दर मैं एक नहीं सात रूपमें रहता हूँ। एक स्त्रीके भीतर सात रूपमें भगवान्।

कीर्तिः श्रीर्वाक्च नारीणां स्मृतिर्मेधा धृतिः क्षमा। १०.३४

अब आप देखो, आप भगवान्‌की विभूति हैं कि नहीं ? हम आपका नाम लेकर नहीं बोलते। आप स्वयं सोच लीजिये ? आप भगवान्‌की विभूति हैं कि नहीं है ? 'नारीणाम्' जितनी भी स्त्री जाति है—

विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु।
सप्तशती ११.६

यह सब जगत्-जननी जगदम्बाका रूप है। इनमें भगवान् किस रूपमें रहते हैं। पहले बताया कीर्ति। आपके पासमें, पड़ोसमें, दूर, दूसरोंके मुँहमें आपका कीर्तन कैसा है ? लोग भला कहकर आपका वर्णन करते हैं कि नहीं ? यह भली स्त्री है। यह जो आपके अन्दर भलापन है वह भगवान्‌की विशेष विभूति है। फिर बोले 'श्री' जहाँ पाँव रख दिया, वहाँ लक्ष्मी आगयी। हम कई अच्छे घरोंकी बात जानते हैं। लोग बताते हैं महाराज, हमारे घरमें तो पहले कुछ नहीं था। जबसे इस बच्चेके पाँव हमारे घरमें पड़े हैं और लक्ष्मी अपने आप ही हमारे घरमें आने लगी है। श्री माने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

लक्ष्मी लेकिन श्रीका अर्थ सौन्दर्य भी है। आप अपनेको ठीकठाक रखती हैं कि नहीं? शारीरिक सुन्दरता—असलमें चामकी सुन्दरता सुन्दरता नहीं है। आँखकी सुन्दरता सुन्दरता नहीं है। ओठकी सुन्दरता-सुन्दरता नहीं है—जो चरित्रका सौन्दर्य है वही वास्तविक सौन्दर्य है। जहाँ चारित्र्य है वहाँ सुन्दरताका निवास है। इसीसे मनुस्मृतिमें तो ऐसे कहा—

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः। ३.५६

जहाँ नारीका आदर है, वहाँ देवता लोग अपने आप ही आते हैं। स्वयं लक्ष्मी आपके घरमें स्त्रीके रूपमें निवास करती हैं। परन्तु अपने रूप-सौन्दर्यको भी ठीक बनाये रखना चाहिए, गुण-सौन्दर्यको भी ठीक बनाये रखना चाहिए। यह नहीं कि बाजारमें गये तो सजधजकर गये और घरमें रहे तो बाल ऐसा, शरीर ऐसा, कपड़ा ऐसा। अब आपके पति यदि आपकी सुन्दरता देखना चाहते हों तो उन्हें बाजारमें जाकर आपकी सुन्दरता देखनी पड़ेगी। घरमें उन्हें देखनेको नहीं मिलेगी। नहीं—घरमें ही सुन्दर दिखना चाहिए। आपका सौन्दर्य बाजारमें लुटानेके लिए नहीं है। घरमें—'प्रियेषु सौभाग्यफला हि चारुता'। (कुमारसम्भव ५.१) अपने प्रियजनोंको भाग्यशाली बना देना इसका नाम सौन्दर्य है। (यह कुमारसम्भवमें कालिदासका वचन है)। जो अपने प्रिय लोगोंको भाग्यवान् बना दे, भाग्यशाली बना दे, उसका नाम सुन्दरता है।

अब देखो एक बात आपको सुनाता हूँ। अपनी विभूति सुनाते-सुनाते श्रीकृष्णको व्रजकी याद आगयी। जब स्त्रियोंका नाम लेना था तो व्रजकी याद आगयी। बोले पहले श्रीजीका नाम लेना चाहिए। श्री माने राधा है, पर पहले पत्नीका नाम लेंगे तो लोग हमको पत्नीभक्त कहेंगे। सबसे पहले सासका नाम लेना। 'कीर्तिः श्रीर्वाक्च नारीणाम्।' —यह राधारानीकी माँ हैं। इस बातको

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

आप ध्यानमें लें तब मालूपड़ेगा। राधाकी माँ कौन? कीर्ति। श्रीकृष्णकी माँ कौन? यशोदा। यश और कीर्ति। जहाँ भगवान्का यश आप श्रवण, वर्णन करेंगे, वहाँ भगवान् प्रकट हो जायेंगे। और जहाँ कीर्ति होगी—वहाँ आराधना-राधा प्रकट हो जायेगी। आराधिका कौन बनेगा? जिसकी माँ कीर्ति होगी। पहले कीर्तिका श्रवण-वर्णन करो। राधारानी आयेंगी। सब स्त्रियोंमें कीर्ति भी है और श्री भी है।

अब तीसरी बात है कि सरस्वतीजी भी आकर बसी हैं। बड़ी मुखरा हैं। एक श्लोक है—जगन्नाथपुरीमें भगवान् लकड़ीके क्यों हो गये? बोले उनकी एक पत्नी हैं सरस्वती। वह इतना बोलती हैं कि भगवान्को बोलनेका मौका ही नहीं मिलता। और दूसरी पत्नी हैं लक्ष्मी। घरमें उनके पाँव टिकते ही नहीं। दिनभर घूमती रहें तो आदमी आदमी कैसे रहेगा? वह तो लकड़ीका हो जावेगा।

एका भार्या प्रकृतिमुखरा चञ्चला च द्वितीया।

एक बेटा है—उसका नाम है, काम, प्रद्युम्न। मन्मथ था; वह लोगोंका मन प्रचलित करता है और किसीको बात मानता नहीं। दुर्निवार है। बेटेकी यह हालत। और साँपके पलङ्गपर सोना पड़ता है। और साँपोंका जो दुश्मन है गरुड़—वह वाहन है। इसलिए—'दर्शं दर्शं स्वगृहचरितं दारुभूतो मुरारिः।' अपने घरका चरित्र देखकर भगवान्को लकड़ीका बन जाना पड़ा।

वाणी सत्य हो, प्रिय हो—एकबार आपके बारेमें आयडिया बिगड़ जायगा कि हमारी माँ, हमारी पत्नी, हमारी बहन, हमारी बेटी हमसे झूठ बोलती है, तो जिन्दगी भरके लिए आपको एक कष्ट आजायेगा। सत्य बोलें, प्रिय बोलें, हित बोलें, थोड़ेमें बोलें, मौकेकी बात बोलें। कोई कठोर वाणीमें बोले तब भी आप मृदु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

बोलें। कोई कठोर-से-कठोर बोले आप कोमलतासे बोलिये। किसीने आपका बुरा कर दिया हो तो उसको भूल जाइये और प्रिय बोलिये। यदि कोई कैसे भी एकबार अनजानमें भी आपका उपकार कर दे, तो उससे सन्तुष्ट रहिये, उसको याद रखिये। उस उपकारको बार-बार दुहराइये और अपकारकी चर्चा कभी मत कीजिये। दुश्मन भी अपने घरमें आजाये तो पहले उठकर उसका स्वागत कीजिये। हाथ जोड़िये। उसको ऊपर बैठाइये। मुस्करा-कर उससे बात कीजिये। आपकी वाणीमें भगवान्‌की विभूति है, भगवान्‌का निवास है।

स्मृतिः—पतिने कहा आज जरा हमारी बुशशर्टमें बटन लगा दो और जब उनको ऑफिस जाना हुआ तो बोले कि मैं भूल गयी। यह विस्मृति—अपने कर्तव्यको भूल जाना, यह प्रेमकी कमीका लक्षण है। यह नहीं कि भूलना मेरा स्वभाव है। ऐसे नहीं चलता। स्मृति होनी चाहिए—ठीक समयपर। हमारे एक मेहमान आये। हमने एकसे कहा—इनको ले जाकर सुलाओ, भोजन कराओ। ले जाकर उन्होंने सुला दिया और भोजन कराना भूल गये। दूसरे दिन दस बजे जब वे पूजा-पाठ करके आये तो मैंने पूछा कि रातको सब भोजन-भाजन ठीक हो गया तो बोले—हाँ, हाँ, हाँ! पाँच शास्त्रके आचार्य हैं—उनकी उम्र अब ८५ वर्षकी है। यह सच्ची घटना है। ब्रह्मचारी हरदत्त। यह जो स्मृति है यह स्त्रीके जीवनका कोष है। उसको समयपर कर्तव्यका स्मरण होना चाहिए। अच्छा मान लो यदि किसीने नहीं कहा है तो अपनी अकल कहाँ गयी है? कहीं चरने थोड़े ही गयी है।

स्मृतिर्मेधा—मेधाका अर्थ है—एक बार जो बात बता दी गयी उसको धारण करे। और 'धृतिः'। धृति माने धैर्यं। सहिष्णुता रहनी चाहिए जीवनमें। कोई भी कष्ट आजाय। बोलते हैं दुनियामें पत्नी ही एक ऐसी होती है जो कष्टके समय अपने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

पतिका साथ नहीं छोड़ती। वह चाहे दोषी-से-दोषी हो जाय, शराबी हो जाय, कबाबी हो जाय, दुष्ट हो जाय अपने धैर्यको बढ़ाना चाहिए क्योंकि उसी समय तो पत्नीकी जरूरत है कि यदि वह नालीमें गिर गया तो वह जाकर उठावे और लाकर स्नान करावे। उसको होशमें ले आवे और उसको समझावे कि ऐसा काम नहीं करना चाहिए। यदि उसी समय स्त्री साथ छोड़कर चली जावेगी, सहिष्णुता उसके अन्दर नहीं होगी तो विवाह करनेका तो कोई अर्थ ही नहीं हुआ, माता होनेका तो कोई अर्थ ही नहीं हुआ। स्त्री ऐसी होनी चाहिए, चाहे बहन हो, चाहे पत्नी हो, चाहे माँ हो, जो संकटके समयमें साथ न छोड़े, सब कुछ सह ले।

क्षमा—यदि किसीसे कोई अपराध हो जाय—बेटेसे हो जाय तब तो क्षमा कर ही देते हैं। अपने आपसे हो जाय तब! तब तो इतनी क्षमा करते हैं कि बिलकुल किसीको पता ही न चले। अपने सौ-सौ अपराध आदमी क्षमा कर लेता है और दूसरोंमें जरा-सा भी अपराध दिख जाय—देवर है—कभी हँसी-मजाक कर दे, बेटा है—कभी गलत संगमें चला जाता है। पतिसे भी कोई गलती हो जाती है तो स्त्रीके अन्दर क्षमा होती है। यह क्षमा कौन है? यह धैर्य्य कौन है? यह मेधा कौन है? यह स्मृति कौन है? यह मधुरवाणी कौन है? ये सौन्दर्य कौन है? ये कीर्ति कौन है? ये भगवान्‌की विभूति है। तो औरोंमें, भले ही पुरुषोंमें एक ही रूपमें भगवान् बैठे हों, लेकिन स्त्री-शरीरमें तो सात-सात रूपमें रहते हैं। बल्लभाचार्यने तो लिखा है कि श्रीकृष्णका तो अवतार ही स्त्रियोंके लिए हुआ। यह भगवान्‌की विभूति सात-सात रूपमें एक-एक स्त्रीमें निवास करती है। पर नाम नहीं लिया। मैं समझता हूँ किसीका नाम लेनेमें डरते होंगे। बताया—सबमें रहता हूँ, जिससे कोई नाराज न हो।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

प्रवचन : १०

९-११-८१

माँ मैं तुम्हारा अनुसन्धान करता हूँ। तुम्हारा ध्यान करता हूँ। एक सरस्वती वह है जो ब्रह्माके मुखसे निकलीं। वाग्देवी, वेदवाणी और एक सरस्वती गीता है, जो स्वयं भगवान् श्रीकृष्णके मुखसे प्रकट हुई है। यह गीता-सरस्वती—गीता-भारती हमारी माँ हैं। माँका अनुसन्धान करना चाहिए।

मातृदेवो भव, पितृदेवो भव। तै० उप० १.१.२

आओ गीतापर ध्यान दें। हमको बचपनकी एक स्मृति है। किसी सन्तके पास जाकर हम उससे कहते कि हमको भगवान्का दर्शन करा दें। एक सन्तसे मैंने यही बात कह दी—मुझे भगवान्का दर्शन करा दीजिये। वे तो नाराज हो गये। आजकल जैसे हमलोग लल्लो-चप्पो करते हैं न! वैसे पहलेके फकीर लोग नहीं करते थे। वे तो बहुत खड़कझंझारी होते थे। डाँट देते थे। उन्होंने डाँट दिया। तुम भगवान्का दर्शन करना चाहते हो? यह सब क्या हो रहा है। तुम्हें सूर्य, चन्द्रमा दिखते हैं कि नहीं? तुम्हें धरती, पानी, आग, हवा, अष्टमूर्ति भगवान् शंकरका दर्शन होता है कि नहीं? यह विराट्‌रूपका जो दर्शन हो रहा है, यह विराट कौन है?

इतना दर्शन दे रहे हैं तुमको भगवान्, इतनी-दर्शन, योग्य वस्तुएँ, पशु बनकर आगये, पक्षी बनकर आगये! वृक्ष बनकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

आगये ! सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र, तारे बनकर आगये। स्त्री, पुरुष बनकर आगये ! इतने रूपोंमें भगवान्‌के दर्शन हो रहे हैं। तुमने भगवान्‌को क्या निहाल कर दिया ? कोई पूजा की ? कोई भक्ति की ? कोई सेवा की ? जितने रूपोंमें भगवान्‌के दर्शन हो रहे हैं उनका तो तुमने अपने जीवनमें कोई आदर नहीं किया, सेवा नहीं की और तुम अपने मनकी एक मूर्ति बनाओगे और कहोगे कि उसके रूपमें भगवान्‌के दर्शन हों। बड़ी डाँट पड़ी मेरे ऊपर। माता भगवान् है, पिता भगवान् हैं, गुरु भगवान् हैं। प्रकृतिमें दीखनेवाले अनेक पदार्थोंका नाम, शास्त्रमें भगवान्‌ने बताया है। जितने रूपोंमें भगवान् दीख रहे हैं, उन रूपोंमें तो हम भगवान्‌की सेवा नहीं करते, ध्यान नहीं करते, उपासना नहीं करते। उनको देखकर अपने हृदयमें सद्भाव नहीं लाते और जो नहीं दिखता है, उसके लिए व्याकुल होते हैं।

अभी थोड़ी देर पहले यह बात हमको याद आगयी। भगवान् दुर्लभ नहीं हैं। भगवद्-भाव दुर्लभ है। जिसके हृदयमें भगवद्भाव-का उदय हो गया, उसके लिए तो जब हमारी आँखकी रोशनी भगवद्भावसे अनुप्राणित होती है, भगवद्भावके रंगमें रंगकर जब हमारी आँखकी रोशनी निकलेगी तब तो हम जहाँ देखेंगे वहाँ भगवान्-ही-भगवान् हैं। भगवान् कहीं चले नहीं गये हैं। न दूर हैं भगवान्, न उसके मिलनेमें देर है। न दूसरा है। हमारा मन ही कुछ-का-कुछ पकड़कर बैठा है। एक पिताने अपने पुत्रसे कहा— छोटेसे पुत्रसे—कि बेटा, तुम यह काम कर दो तो तुम्हें मिठाई देंगे। पुत्रने वह काम कर दिया। और पिता जब मिठाई देनेके लिए आये तो पेड़ा लाये। पुत्रने कहा हमको मिठाई चाहिए, हमको पेड़ा नहीं चाहिए। यह तो पेड़ा है, यह तो बरफी है, यह तो कलाकन्द है। हमको तो मिठाई चाहिए। यह तो शक्कर है, यह तो मिश्री है, हमको तो मिठाई चाहिए। मिठाई तो शक्कर भी है, मिश्री भी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

है, ओला भी है, पेड़ा भी है, बरफी भी है, जलेबी भी है। मिठाई तो हमको मिल रही है मगर जो सबमें मिठाई है वह तो हमको दीखती नहीं है और कोई कल्पित मिठाईके लिए हम तरस रहे हैं। जितने रूपोंमें हमें परमेश्वरका दर्शन हो रहा है, उसका हमारे हृदयमें कितना आदर है, यह चिन्तनीय है। यह विचारणीय है।

शास्त्रके अनुसार ही तो अवतारका ज्ञान होता है। यह नहीं कि चाहे जो कल्पना कर ले कि मैं अवतार हूँ। अपनी कल्पनासे भी कोई अवतार नहीं होता। और लाख-लाख बेवकूफ चेलोंकी कल्पनासे भी कोई अवतार नहीं होता। आपलोग बुरा मत मानना, हम आपलोगोंके लिए नहीं कह रहे। आपको छोड़कर बोल रहा हूँ। यदि बेवकूफ न होते तो चेला बननेकी जरूरत ही क्या होती? माने कुछ नहीं समझते हैं, उसको समझनेके लिए ही तो गुरु बनाने जाते हैं। वैसे ही नासमझ लोग यदि किसीको भगवान् कहने लगें तो उसकी कोई कीमत नहीं होती है। वह तो नासमझोंके भगवान् होते हैं। शास्त्रीय पद्धति इसमें यह है कि समग्र विराट्को हम देख नहीं पाते हैं। समझ भी नहीं पाते हैं। दिशाएँ विराट्के कान हैं। आकाश विराट्की नाभि है। सूर्य-चन्द्रमा विराट्के नेत्र हैं। वायु विराट्का श्वास है, पृथिवी विराट्का पाँव है।

यह पृथिवी ही नहीं जिसपर हम हैं, वह मृत्तत्त्व जो जलमें लीन है। अग्नि = तेजस्तत्त्व विराट्का मुख है। ये जितने अवतार होते हैं और जितनी मूर्तियाँ होती हैं ये सब विराट्के अवयव होते, विराट्के अङ्ग होते हैं। जहाँ वैदिक शास्त्र नहीं है, वहाँ भगवान्की पूजा पृथिवीके रूपमें होती है, जलके रूपमें होती है अग्निके रूपमें होती है, वायुके रूपमें होती है, आकाशके रूपमें होती है और हमारे शास्त्रज्ञोंने जब देखा कि मानवकी शक्ति कितनी है, उसकी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

बुद्धि कितनी है ? तब उन्होंने निश्चय किया कि समग्र विराट्की धारणा मनुष्य ठीक-ठीक नहीं कर सकता। विराट्के एक अवयवमें एक अङ्गमें विराट् बुद्धि, विराट् पाँव है समझो धरती तो उसमें शिवलिङ्ग है, जो नर्मदामें-से निकलता है। उसमें शालग्राम है, जो गण्डकीमें-से निकलता है। और भी कहीं भी पाषाण-खण्डको हम गढ़के वैसी मूर्ति बना लेते हैं—चतुर्भुज, द्विभुज। वह है विराट्का अङ्ग। उसकी पूजाको भी विराट्की पूजा बोलते हैं।

एक बालक है, अपने पिताकी एक उंगली पकड़कर चल रहा है। लोग क्या कहेंगे ? अपने पिताको पकड़कर चल रहा है। चल रहा है—वह पिताकी एक उंगली पकड़कर, पर कहा जायगा यह कि वह पिताको पकड़कर चल रहा है। इसी प्रकार हम उपासनामें विराट्के एक अवयव, एक अङ्ग, एक अंश, एक हिस्सेकी उपासना करते हैं और वह समग्र विराट्की उपासना हो जाती है। मनुष्यको गलेमें माला पहनाते हैं तो समूचे मनुष्यका आदर होता है। इस तरहसे भगवद्-बुद्धिसे हम विराट्के एक अंशकी ही सेवा करते हैं।

सब प्यासोंको हम पानी नहीं पिला सकते तो एक प्यासेको एक गिलास पानी पिलाते हैं। सब भूखोंको नहीं खिला सकते तो एक भूखेको खिलाते हैं। सब रोगियोंको दवा नहीं दे सकते तो एक रोगीको दवा देते हैं। तो यह जो भगवान्का विराट् रूप है, इसमें जहाँ ध्यानसे आप देखेंगे वहाँ आपको भगवान्की विभूति मिलेगी। जब आपने 'पुण्यो गन्धः पृथिव्यां च' (७.९) पढ़ा तो विभूति सब जगह मिली या नहीं मिली ? 'रसोऽहमप्सु कौन्तेय' (७.८)—'तेजस्तेजस्विनामहम्' (७.१०) पढ़ा, 'पवनः पवतामस्मि' (१०.३१) पढ़ा, 'शब्दः खे पौरुषं नृषु' (७.८)। तो यह समग्र विराट् ही भगवान्की विभूति है, वैभव है। वर्णन करके इसका अन्त स्वयं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

भगवान् भी नहीं पा सकते हैं।

हम लोगोंको यह कहनेमें कि भगवान् यह बात नहीं जानते हैं, कोई संकोच नहीं है। हम ईश्वरके ज्ञानकी सीमा भी जानते हैं। हम कह दें कि यह बात ईश्वर नहीं जानते हैं—और यह काम ईश्वर नहीं कर सकते, यह भी हम बता सकते हैं। भागवतके मूलमें ही यह प्रसंग है। क्या भगवान्को अपना अन्त मालूम है? भगवान्का अन्त कहाँ है? किस देशमें है? किस कालमें है? किस रूपमें है?

भागवतके मूलमें यह बात कही कि भगवान् अपना अन्त नहीं जानता। तब यह हुआ कि भगवान् अज्ञानी हुआ। नहीं, अज्ञानी नहीं हुआ। यदि अन्त होता और ईश्वर न जानता तो अज्ञानी होता। जब अन्त है ही नहीं तो ईश्वर कैसे जाने? अन्तको न जानना ही ज्ञान है। ईश्वर क्या नहीं कर सकता, यह हम बतावें? ईश्वर दूसरा ईश्वर नहीं बना सकता। यदि ईश्वर दूसरा ईश्वर बनावेगा तो बनावटी ईश्वर पहले तो था ही नहीं। जो पहले ईश्वर था वह अभी ईश्वर है, आगे ईश्वर रहेगा और वह बीचमें बनाया गया होगा। नित्य ईश्वर अपनेको मार नहीं सकता—ईश्वर कहे कि—हमारी मौत हो जावे, नहीं हो सकती। ईश्वरके किये भी नहीं हो सकती। यह जो ईश्वरका विस्तार है, इस विस्तारको स्वयं ईश्वर भी नहीं जानता।

अब हम आपको एक-एक नाम लेकर बतावें, तो जो नाम लेकर बतानेमें स्वयं ईश्वर ही हार गया है, उनके नामोंकी गिनती हम कैसे करेंगे?

नान्तोऽस्ति मम दिव्यानां विभूतीनां परन्तप।
एष तूद्देशतः प्रोक्तो विभूतेर्विस्तरो मया॥ १०.४०

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

यह तो नाम गिना दिया। केवल उद्देश्य मात्र। एक गणना कर दी। दिग्दर्शन करा दिया। यह विभूति है, यह विभूति है। जब सब विभूति है तो उसकी गणना कहाँ करें? ऐसा आप समझो कि एक लड़कीका पिता लड़का देखने गया। पहले उसने देखा कि उसके पास धन-सम्पदा कितनी है? यह विभूति हो गयी। यह दसवें अध्यायमें है और फिर ग्यारहवें अध्यायमें देखा उसने—उसकी विशालता—उसका विस्तार कितना है? उसका व्यक्तित्व कितना बड़ा है? ये आस-पाससे जान लिया। फिर तो महाराज, उससे प्रेम हो गया। यह बारहवाँ अध्याय है। भक्ति हो गयी। वह बड़ा वैभवशाली है—बड़ा विराट् है, यह तो भक्ति करने योग्य है। फिर तेरहवें अध्यायमें उससे पहचान हो गयी। उसका ज्ञान हो गया। और चौदहवें अध्यायमें उसका उसके सिवाय जो कुछ था उसको छोड़ दिया। गुणत्रय-विभाग हो गया। पन्द्रहवें अध्यायमें पुरुषोत्तम-योग हो गया। उससे विवाह हो गया। पन्द्रहवें अध्यायमें बेटी बिलकुल ब्याह दी।

यह गीताका क्रम देखो। दसवें अध्यायसे लेकर पन्द्रहवें अध्याय तक? वैसे सारा ही क्रम रहस्यपूर्ण होता है लेकिन अभी उसपर कहनेका समय नहीं है। यह आपने वैभव देखा। अब कोई तो पड़ोसीसे पूछ गया, कोई दलालसे पूछ गया। अर्जुनने कहा हम पड़ोसी या दलालकी बात नहीं मानते हैं। यदि कोई अपना झूठा वैभव बताता हो तो उसकी बातपर विश्वास न करके, पड़ोसीसे पता लगाया जाता है। अब तुम तो स्वयं यहाँ मौजूद हो। अपने मुँहसे ही बता दो कि तुम्हारे पास क्या-क्या वैभव है? अर्जुन श्रीकृष्णका परम मित्र है और श्रीकृष्णने तो यहाँतक शिष्टाचारका पालन किया कि जब खाण्डव-दाहके समय इन्द्रकी इच्छा पूरी करनेके लिए श्रीकृष्णने अर्जुनसे नागकी रक्षा करवायी तब इन्द्रने श्रीकृष्णसे कहा कि श्रीकृष्ण, तुम वरदान माँगो।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

कृष्णने कहा, अच्छा महाराज, आप देवता हैं, मैं मनुष्य हूँ आप मुझे एक वरदान दीजिये। क्या? अर्जुन आपका पुत्र है, इससे मेरी मित्रता बनी रहे। कभी-कभी बाप लोग जो हैं वे अपने बेटेसे मित्रता करनेमें बाधा डालते हैं। तो आप हमेशाके लिए हमको यह वरदान दे दीजिये कि अर्जुनके साथ हमारी मैत्री सर्वदा बनी रहे। और इन्द्रने कहा कि यह वरदान हम तुमको देते हैं। इन्द्रने यह वरदान दिया।

अर्जुनके जो पिता हैं इन्द्र—इन्द्रके वरदानसे, अनुमतिसे श्रीकृष्ण और अर्जुनकी मित्रता है। और मित्रता तो स्वाभाविक रूपसे भी है। जीव-ईश्वर हैं? कहीं-कहीं तो बड़े शिष्टाचारके साथ अर्जुनको बोलते हैं, तुम मेरे भक्त हो, मेरे सखा हो, मेरे इष्ट हो और कभी बड़ी सादगीसे बुला लेते हैं—'अर्जुन'। यह मैत्रीकी बात है। मैत्रीमें बहुत शिष्टाचारकी आवश्यकता नहीं रहती है।

> नान्तोऽस्ति मम दिव्यानां विभूतीनां परंतप।
> एष तूद्देशतः प्रोक्तो विभूतेर्विस्तरो मया॥ १०.४०

यह मैंने जो विभूतिका विस्तार तुमको सुनाया, यह तो केवल नाम-मात्र, गणनामात्र है। वैसे तो सब नाम भगवान्के हैं और सब रूप भगवान्के हैं। आपको क्या बतावें—यह आँख देखनेके लिए जहाँसे शक्ति और चेतना लेती है, उसी शक्ति और चेतनाको अपने सामने रखकर देखती है। ईश्वर कहाँ रहता है? जहाँसे आँखमें रोशनी आती है। वह एक रेसा, वह तार जो हृदयसे लेकर आँख तक जुड़ा हुआ है। जैसे तारपर चढ़कर बिजली आती है, वैसे उसी एक रश्मिपर चढ़कर ईश्वरकी चेतना और ईश्वरकी शक्ति आँखमें आती है। और आँख बाहर रखकर उसको देखती है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

यह हमारी जीभ बोलती है। बोलनेकी शक्ति कहाँसे आती है? कोई कहते हैं ऊपरसे आती है, कोई कहते हैं नीचेसे आती है। परावाक् मूलाधार चक्रमें है; वहाँसे बोलनेकी शक्ति ऊपर चढ़ती है और कोई कहते हैं नहीं, मस्तिष्कमें ही चेतनाका केन्द्र है। वहींसे वाणीमें शक्ति आती है। ठीक है। ईश्वर ऊपर भी है, नीचे भी है। पर वाणी जहाँसे चेतना और शक्ति लेकरके शब्दोच्चारण करती है वही चेतना और वही शक्ति वह अपने शब्दोंके द्वारा वस्तुमें रखकर देखती है। वही सत्ता, वही ज्ञान सर्वत्र भरपूर है। लोक-व्यवहारमें बोलते हैं, ईश्वरकी सत्ताके बिना पत्ता भी नहीं हिलता है।

> योन्तः प्रविश्य मम वाचमिमां प्रसुप्तां,
> सञ्जीवयत्यखिलशक्तिधरः स्वधाम्ना।
> अन्यांश्च हस्तचरणश्रवणत्वगादीन्,
> प्राणान्नमो भगवते पुरुषाय तुभ्यम्॥ भा०४.९.६

हमारी इन्द्रियोंमें, हाथमें, पाँवमें, मनमें, जितनी भी शक्ति है, उस शक्तिके धरा—उसके अधिष्ठान, उसको धारण करनेवाले, अखिल कारक शक्तिधर वही एक प्रभु हैं जो भीतर भी हैं और भीतरसे इन्द्रियों द्वारा बाहर निकलकर अनेक रूपमें दर्शन देते हैं। आपको मालूम है—यदि हम सो जायें तो? इन्द्रियाँ बन्द हो जायें तो? तो बाहरकी वस्तुएँ नहीं दिखायी पड़ेंगी। सब भीतर सिमट जाती हैं।

यह उसकी विभूति है। यहाँ तो नाममात्र बता दिया। अच्छा तो विभूति पहचाननेका एक तरीका बताते हैं। तौर-तरीका, प्रक्रिया, शैली, ढङ्ग। किस ढङ्गसे हम भगवान्‌की विभूतिको पहचानें?

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

यद् यद् विभूतिमत्सत्वे श्रीमदूर्जितमेव वा।
तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंऽशसम्भवम् ॥ ४०.४१

आप हमारी विभूतिको पहचानिये। जहाँ-जहाँ विभूति है, विशिष्ट भवन है वहाँ-वहाँ विभूति है। यह नहीं कि सारी सृष्टिमें सादृश्य है। सादृश्य होनेपर तो सृष्टिका बोध नहीं हो सकता। कानसे कुछ मालूम पड़ता है, आँखसे कुछ मालूम पड़ता है, नाकसे कुछ मालूम पड़ता है। जीभसे चखते हैं तो कुछ मालूम पड़ता है। और सब वस्तुओंकी अपनी-अपनी विभूति है। विशिष्ट भवन है। भवन माने होगा। विशिष्टरूपसे पृथक् होना। कल एक सज्जन जैसे जिज्ञासा कर रहे थे। प्रेमसे पूछ रहे थे। असलमें यन्त्रके अनुरूप बिजली काम करती है। यह बात ध्यानमें रहनी चाहिए। बिजली एक होनेपर भी जहाँ जैसा जो यन्त्र होता है, उसके अनुरूप काम करती है। लाउडस्पीकरमें आवाज फेंकती है, हीटरमें गरमी, रेफ्रिजरेटरमें ठण्डक, पंखेमें हवा—बिजली तो एक ही है, परन्तु ये विभूतियाँ पृथक्-पृथक् क्यों हैं ?

पूर्व-पूर्व कर्मानुसार विशिष्ट प्रकारका जो यन्त्र जैसा बन जाता है, भगवत्-शक्ति उसमें वैसा काम करती है। इसकी शक्तिमें विषमता नहीं, यन्त्रमें विषमता है, जिसके कारण विषमता आती है। दुनियामें कोई बड़ा भी होता है, कोई छोटा भी होता है 'यद् यद् विभूतिमत्'। अब आपको भगवान्का दर्शन करना हो तो देखिये कहाँ-कहाँ विभूति है ? 'श्रीमत्'—कहाँ-कहाँ 'श्री' है ? श्री माने सौन्दर्य भी होता है। श्री माने सम्पदा भी होता है। श्री माने आदर भी होता है—आदरणीय। आजकल जो बाबू लोग—कई लोगोंको ऐसी आदत पड़ी होती है 'सर' (Sir) बोलनेकी हमसे भी बात करते हैं तो सर बोलते हैं। हम तो जानते ही नहीं हैं सर क्या होता है ? लेकिन यह हमलोगोंके नामके साथ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

जो 'श्री' है इसका सर काटकर अलग रख लिया है। श्रीका 'सर' है—जहाँ-जहाँ विभूति है—सत्ता और जहाँ-जहाँ श्री है—लक्ष्मी और जहाँ-जहाँ ऊर्जा है—शक्ति। यद्यद्विभूतिमत्सत्वं श्रीमदूर्जित-मेव वा' जो-जो पदार्थ हमें सृष्टिमें दिखायी पड़ते हैं।

तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंऽशसंभवम्। १०.४१

भगवान्‌ने कहा 'देखो हमारा अंश—हमारे तेजका ही—हमारे अंशका ही वह एक रूप है जहाँ तुम्हें ऊर्जाशक्ति दिखाई दे। यजुर्वेदके पहले ही मन्त्रमें ऊर्जा शब्दका प्रयोग है—इत्वा ऊर्जेत्वा (१.१)। जहाँ ऊर्जा है, जहाँ श्री है, विभूति है वहाँ भगवान्‌का दर्शन करो। आपको कोई ऐसी जगह नहीं मिलेगी जहाँ भगवान् नहीं। भगवान्‌को पहचानो। पर वर्णन करते-करते तो ऐसे लगता है कि श्रीकृष्ण भी थक गये। वर्णन करके पार नहीं पा सकते।

अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन।
विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत्॥ १०.४२

आओ मेरे अर्जुन, तुम यह बहुत लम्बी-चौड़ी बात सुनकर, जानकर क्या करोगे? बात तो जितनी थोड़ेमें होती है, उतनी ही अच्छी लगती है। जब हम किसीको बहुत विस्तारसे समझाने लगते हैं, तो उसकी प्रतिक्रिया क्या होती है, आपको बतावें! अरे भाई, तुम्हारी बात तो हम पहले ही वाक्यमें समझ गये कि क्या कहना चाहते हो! अब तुम हमको इतना बेवकूफ समझते हो कि घण्टेभर वही बात समझा रहे हो? लेकिन वकील मुवक्किलकी बात एक मिनिटमें भले ही समझ जाय लेकिन यह नहीं कह सकता कि बस-बस समझ गया और मत बोलो। उसको तो सुनाना पड़ेगा। डॉक्टरको अपना रोग बताओ। डॉक्टर कहे—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

बस, मैं समझ गया। अरे साहब, मेरी तकलीफ तो समझ लीजिये। समझ लिया भाई। थोड़ा और सुन लीजिये। बोलनेवालोंको संतोष नहीं होता है। बहुत बोलनेकी प्रतिक्रिया अच्छी नहीं होती। इतने संक्षेपमें अपनी बात साफ-साफ समझा दें कि सुनने-वालेकी समझमें आजाय और अपनेको संतोष हो जाय कि हमने समझा दिया। यहाँ अर्जुनकी प्रशंसा है।

देखो अर्जुन, तुम तो मुझको जानते हो! मेरी विभूति जानकर क्या करोगे? 'अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन'। एक-एक नाम लेकरके हम तुमको बतावें तो तुम जानकर क्या करोगे? उससे क्या लाभ है? 'यह तो नदिया एक घाट बहुतेरे'। नदी एक है घाट बहुत-से हैं। 'ऋजु-कुटिलनानापथजुषां नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव' (महिम्न स्तोत्र ७)। हजार-हजार विभूतियोंको मान लें परन्तु परमेश्वर तो एक ही है। जैनधर्ममें एक श्लोक बोलते हैं—जिसका भाव यह है—हे पार्श्वनाथ भगवान्, जैसे सारी नदियाँ जाकर समुद्रमें मिल जाती हैं वैसे सारी दृष्टियाँ जाकर आपमें मिल जाती हैं। उपर्युक्त महिम्न श्लोकमें कहा—कोई सीधे मार्गसे, कोई टेढ़े मार्गसे चलते हैं, फिरते हैं। मधुसूदन सरस्वतीने कह दिया। ऋजु मार्गसे वैदिक लोग जाते हैं और कुटिल मार्गसे अवैदिक लोग जाते हैं। पर पहुँचते सब एक ही स्थानपर हैं। बहुत वर्णन करके क्या करना है?

'विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत्'। हमने अपने एक छोटेके हिस्सेसे सारे जगत्को स्तब्ध कर रखा है। और मैं स्वयं अपने स्वरूपमें स्थित हूँ। इस सम्पूर्ण जगत्को जो हिलती-डुलती चीज है, जो चलती-फिरती चीज है, जो ज्ञानमें आती-जाती है, जो सत्तामें आकृति बनती-बिगड़ती है, उस सबको तो मैंने एक अंशमें स्तब्ध कर लिया है, स्तम्भित कर लिया है। और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

स्वयं अपने स्वरूपमें स्थित हूँ। यह भगवान्‌का कहना है।

आप गीता पढ़ते होंगे। न पढ़ते हों तो पढ़िये। वाल्मीकि रामायणमें जानकीजी रामचन्द्रजीसे कहती हैं—स्मारये त्वां न शिक्षये। मैं आपको स्मरण दिलाती हूँ; शिक्षा नहीं देती हूँ। सिखाती नहीं हूँ, याद दिलाती हूँ। गीता आप पढ़ते हैं, आप इसको समझते हैं। गीताके भगवान् यह बोलते हैं कि परमात्माके सिवाय दूसरी कोई वस्तु नहीं है—मत्तः परतरं नान्यत् किञ्चिदस्ति धनञ्जय (७।७) मुझसे अलग दूसरी कोई भी वस्तु नहीं है।

अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा। ७.६
मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव। ७.७

मैं सम्पूर्ण जगत्‌का प्रभव भी हूँ और प्रलय भी हूं। विभूति जो होती है वह प्रभवके पहले नहीं होती और प्रलयके पश्चात् नहीं होती। विभूति तो जीवन कालमें ही होती है। सृष्टि कालमें ही विभूति होती है। 'अहं सर्वस्य प्रभवः।' (१०.८) जब विभूति नहीं थी तब मैं सबके कारणके रूपमें था और जब विभूति नहीं रहेगी तब मैं सबके प्रलयके रूपमें रहूँगा। मैं ही नामरूपात्मक इस विभूतिमय सृष्टिका आदि और अन्त हूँ। यह पहले ही कह दिया। 'अहमादिश्च मध्यं च भूतानामन्त एव च' (१०.२०)। 'बीजं तदहमर्जुन' (१०.३९)। इस विश्व सृष्टिका जो बीज है सो मैं हूँ। आपके ध्यानमें यह बात आनी चाहिए कि मजहब मजहब होते हैं और सिद्धान्त सिद्धान्त होते हैं। एक मनुष्यमें ही अनेक जातियाँ कल्पित होती हैं और एक ज्ञानको प्रकट करनेके लिए ही अनेक भाषाएँ बोली जाती हैं। यह भूलने लायक बात नहीं है। आप भाषाको पकड़कर बैठ जायेंगे तो ज्ञानसे वञ्चित हो जायेंगे। किसी भी भाषामें ज्ञान मिलता हो, हम उसको ग्रहण करनेके लिए तैयार हैं। सारी पार्टियाँ एक देशकी सेवा करनेके लिए होती हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

पार्टीकी सेवा करनेके लिए देश नहीं होता।

हम बात तो मजहबको कर रहे थे वह छूट गयी। इसको अर्थान्तरन्यास बोलते हैं। यह भी वाणीका एक अलङ्कार है। एक वस्तुका वर्णन करते-करते औरोंका भी नाम ले दिया। एक धर्मकी परिपुष्टिके लिए मजहब होते हैं। जहाँ वे एक धर्म विश्वधर्म, मानवधर्मके परिपोषणसे पृथक् होकर अपने-अपने मजहबका पोषण करने लगते हैं, वहाँ वे धर्म नहीं रहते अधर्म हो जाते हैं। जब पार्टियाँ राष्ट्रकी या राजनीति छोड़कर पार्टी-पोषणमें लग जाती हैं तब वे राष्ट्र-विरोधी हो जाती हैं। फिर वे विदेशसे भी धन लेंगी। दूसरोंके चलाये भी चलेंगी। देशको हानि भी पहुँचायेंगी। और जब भाषाका आग्रह हो जाता है तब भी चिन्तनमें संकोच हो जाता है। अरे; इस भाषामें तो चाहे जैसा साइन्स हो कैसा भी ज्ञान हो, कैसी भी औषधि हो, है तो दूध लेकिन जरा बकरेके चाममें रखा हुआ।

हमें किसी भाषामें ज्ञान लेना है। हम किसी भी पार्टीसे देशकी सेवाकी अपेक्षा रखते हैं। किसी भी जातिसे हम मानवताका सम्पोषण चाहते हैं। किसी भी मजहबसे हम—एक जो विश्व-धर्म है, भगवद्-धर्म है, उसकी रक्षा चाहते हैं, उसका सम्वर्धन चाहते हैं। जहाँ परमात्मा छूट जाता है और किसी भी जीवकी सेवा करते हैं—जीवको तो पकड़ लिया और परमात्मा छूट गया, यह भी उचित नहीं है। राष्ट्रके व्यामोहने विश्वको खण्ड-खण्ड कर दिया। जातिके व्यामोहने मानवताका तिरस्कार किया। भाषाके व्यामोहने ज्ञानका तिरस्कार किया। मजहबके मोहने सत्यधर्मका तिरस्कार किया। देखनेकी बात यह है कि हम कहाँ जारहे हैं ? परमात्मा एक है—यह गीताका सिद्धान्त है। सबसे बड़ा महात्मा दुनियाँमें कौन है ?

गीता अपने मुँहसे बोलती है—'बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

मां प्रपद्यते—वासुदेवः सर्वमिति' (७.१९) वासुदेवः सर्वम् इति मां प्रपद्यते। सब परमात्माका स्वरूप है—'स महात्मा सुदुर्लभः।' देखो यह दृष्टिकोण है। हम भगवान्‌के पास गये तो क्या देखा? यह देखा कि वह तो सब है। जिसको मैंने गाली दी वह भी भगवान् है; जिसको मैंने मारा, वह भी भगवान् ही है। जिसकी निन्दा की वह भी भगवान् ही है। अरे भाई, पहुँच गये भगवान्‌के पास। बड़ी गलती हुई महाराज—'स महात्मा सुदुर्लभः'। वह महात्मा जिसकी दृष्टिमें सब परमात्मा, सब वासुदेव हो जाता है, वह महात्मा दुर्लभ है।

आप देखो बोलनेकी शैली! संस्कृतमें भङ्गी बोलते हैं। बोलनेकी भङ्गी, भङ्गिमा। भङ्गिमा माने दृष्टिकोण होता है। नेत्र-भङ्गिमा भी तो होती है न! देखो यह बोलनेकी भङ्गिमा, यह शैली, यह प्रणाली है कि परमात्मा तो सब है परन्तु महात्मा सुदुर्लभ है। जिसकी दृष्टिमें सब परमात्मा है वह महात्मा इस सृष्टिमें सुदुर्लभ है। किसीने कहा—ईश्वरने अपने संकल्पसे सृष्टि बनायी। बहुत बढ़िया—तुम्हारे मुँहमें घी-शक्कर। पर ईश्वरने संकल्पसे जो सृष्टि बनायी वह अपने भीतर बनायी कि बाहर बनायी? जैसे हम अपने संकल्पसे कोई सृष्टि बनाते हैं तो वह हमारे हृदयमें रहती है। हमारे हृदयमें संकल्प और संकल्पसे बनी चीज हमारे हृदयमें। ऐसे सर्वव्यापी परमात्माने यदि संकल्पसे यह सृष्टि बनायी तो अपने आपमें ही बनायी और अपने आपको ही सृष्टिके रूपमें देखा। यह बात दुनियाके किसी भी मजहबमें नहीं है। जीव भी वही—जगत् भी वही। 'अचरं चरमेव च' जगत भी वही है और स्थावर भी वही है। अचरं माने स्थावर और चर माने जंगम। सारी सृष्टि, स्थिति, प्रलय जो है, इसका एक कारण, सबके रूपमें एक होने-वाला भगवान् अपने एक अंशमें सारी सृष्टिको लेकर स्थित है।

अब शंकराचार्य भगवान्‌ने अंशका विचार किया है। देखो,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

आकाशके किस हिस्सेमें यह पृथिवी है ? आप लोगोंके पास बड़े-बड़े कॉम्प्यूटर हैं। कुछ यहाँ हैं, कुछ जर्मनीमें हैं, कुछ अमेरिकामें हैं। आपके पास गणितकी कोई ऐसी रीति है, कि आकाशके जिस करोड़वें, लाखवें, हजारवें या अरबवें हिस्सेमें यह धरती है, उसे आप गिन सकते हैं ? यदि आप यह गिन सकते तो आकाशको नाप सकते हैं कि पृथिवीका इतना बड़ा आकाश है।

शंकराचार्यने कहा कि अनन्तका अंश भी अनन्त ही होता है। शून्यका लाखवाँ अंश क्या होगा ? शून्यका अंश होता ही नहीं। अंश क्या होगा ? अद्वितीयके किस अंशमें यह सृष्टि है ? अद्वितीयमें तो अंश होता ही नहीं। फिर ? इस सृष्टिका कितना गुना परमात्मा है ? नापो ! तब उन्होंने अंश शब्दका व्याख्यान किया। अंश इवांशः। ममैवांशो जीवलोके (१५.७), इस श्लोकके अंशकी व्याख्यामें आचार्य शंकरने कहा कि 'अंश इवांशः'। हमलोग लौकिक दृष्टिसे जैसे अंशकी कल्पना करते हैं वैसे परमात्मामें भी यह अंशके समान कल्पित अंश है। वस्तुतः वहाँ अंश नहीं है। हमारी दृष्टिसे अंशांशि-भावकी कल्पना होती है। परमात्मदृष्टिसे अंशांशोकी कल्पना नहीं होती। यह तो देहमें 'मैं' करके नापने लगे ! दुनियामें नाप-तौलकी बात की है। मुनियोंने बहुत कोशिश की, पर ईश्वरमें कोई वजन नहीं मिला कि ईश्वरका कितना वजन है। ये लेबोरेटरीमें तो वजन ही ढूँढ़ेंगे न ! और वजन नहीं है तो मैटर ही नहीं—द्रव्य ही नहीं है। कितनी लम्बाई-चौड़ाई है ईश्वरमें ? किसीके ढूँढ़े नहीं मिला। कितनी उमर है ईश्वरकी ? यह भी ढूँढ़नेसे नहीं मिली। उमर न मिलना माने ईश्वरमें कामका अभाव है। लम्बई-चौड़ाई न मिलना माने देशका अभाव है ईश्वरमें; और वजनका न मिलना माने द्रव्यका अभाव है ईश्वरमें।

तब यह अभाव ही अभाव है—नहीं; अभाव प्रकाशित किससे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

होता है, इसका सक्षी कौन है? चैतन्यरूप अधिष्ठान या चैतन्य-रूप प्रकाशके बिना तो अभावकी भी सिद्धि नहीं हो सकती। ईश्वरको यदि जानना है तो वजनके मापसे मत जानो। देशकी लम्बाई-चौड़ाई मापकर मत जानो। उमर मापकर मत जानो। क्यासे क्या तक? तब, जरा अपनी ओर नजर डालो। जबतक अपने आपको इस शरीरमें रहनेवाले अपने आपको नहीं जानेंगे तबतक आपको यह कैसे ज्ञात होगा कि ईश्वरके सिवाय दूसरी कोई वस्तु नहीं है। 'मत्तः परतरं नान्यत्' 'अहं कृत्स्नस्य प्रभवः'। कैसे समझेंगे?

ईश्वरका जब अनुभव होता है, तब मालूम पड़ता है—ईश्वरके अतिरिक्त और कुछ नहीं है। आत्मरूपमें यदि मैं ईश्वरसे अलग रह गया तो ईश्वर अधूरा हो गया। 'मैं'की न्यूनता और ईश्वर। और यदि मुझसे ईश्वर हो गया तो दृश्य, परोक्ष कल्पित ईश्वरका जो साक्षात्कार होता है, वह आत्मरूपसे ही होता है और इस सत्यको समझानेके लिए यह हमारे सम्पूर्ण वेद, शास्त्र, उपनिषद्, गीता ब्रह्मसूत्र हैं।

वेद तो हमारे ज्ञान हैं। गीता हमारी वाणी है। परमात्मा हमारा आत्मा है और विश्व-सृष्टि जो है वह अपना ही सर्वरूपमें दर्शन है। यह महात्माओंकी अनुभूति आप कल्पना करके, छोटा करके मत समझिये—'स महात्मा सुदुर्लभः' (७.१९)—जिसने अपने अद्वितीयको, अपने आत्माको अद्वितीय रूपमें 'मत्स्थानि सर्वभूतानि' 'न च मत्स्थानि भूतानि' (९.४-५) करके जो बोलनेवाला है, जो जाननेवाला है, जो अनुभव करनेवाला है, जो साक्षात् अनुभवस्वरूप है।

श्रीकृष्णकी वाणी है यह गीता—आप लोग प्रेमसे सुनते हो। सवेरे जल्दी उठते हैं, आते है, तकलीफसे बैठते हैं—हमारे आयोजक—ये सब काकोजीकी प्रेरणासे ही होता है। यह जो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

आयोजन होता है, इसमें मूल वही हैं। उन्होंने एक बार आदित्यसे कहा कि तुम स्वामीजीका व्याख्यान कराओ। आदित्यने कराया और इन लोगोंके मनमें भी जो प्रेरणा है, वह वहींसे आयी हुई है। ये लोग अपने मनसे थोड़े ही करते हैं? ये तो निमित्तमात्र हैं। इनका भी प्रेम है, इनकी भी रुचि है, पर मूलस्रोत वही हैं, तो धन्यवादके पात्र तो ये लोग उतने नहीं हैं जितने वे हैं।

सारे परिवारके जो लोग अलग-अलग रहते हैं, सबकी धर्ममें व ईश्वरमें रुचि है। आप लोगोंका प्रेम, रुचि, यह तपस्या और उन लोगोंका आयोजन—हमको बोलनेका अवसर देता है और हम सच बताते हैं आपको, हमको यह बोलनेमें मजा आता है। हमारे कई रोग बोलनेके समय मिट जाते हैं। बुखार उतर जाता है। पल्स १३०-१५० होती है यहाँ आकर बैठ जाता हूँ तो यहाँसे उठनेके समय १००-९० रहती है। ब्लड प्रेशर कम हो जाता है। कल कड़ा जुकाम था—बोलनेके समय ठीक हो गया।

इसका अर्थ यह है कि जिस काममें अपनेको मजा आता है, आनन्द आता है, उसमें सब रोग, शोक, भय, सब निवृत्त हो जाते हैं। जो लाभ आप लोगोंका है सो तो है ही। पर हमारा इसमें बहुत लाभ है। हमको ईश्वरके बारेमें चिन्तन करनेका अवसर मिलता है। हम आप लोगोंके आभारी हैं, कृतज्ञ हैं और धन्यवाद देनेसे यदि वह पूरा होता है तो धन्यवाद भी देते हैं। परन्तु हमारी जो कृतज्ञता है—ये जो घण्टे भर रोज ईश्वरकी चर्चा करनी पड़ती है या चिन्तन करना पड़ता है, उसके लिए तो हम आप लोगोंके सदा-सदाके लिए कृतज्ञ हैं।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

आभार

पूज्यश्री स्वामीजी महाराज,
व
सत्संगप्रेमियो !

समापनका दिवस बहुत शीघ्र आजाता है इन दस दिनोंका आनन्द हमें वर्ष भर तृप्त रखेगा। पूज्य स्वामीजी महाराजने यहाँ पधारकर हम सबको कृतकृत्य किया । मैं उन्हें हम सबकी तरफसे प्रणाम करती हूँ।

स्वामी प्रबुद्धानन्दजी व श्रीविमलानन्दजीने कार्यक्रमको सुचारु रूपसे चलानेमें सहायता की है । पं० श्री देवधरजी दिल्लीसे इसी सत्संगका लाभ उठाने आये हैं । मैं सबको धन्यवाद देती हूँ।

अब नूतन वर्षमें यहीं पूज्य स्वामीजीके वचनोंका श्रवण करेंगे। ईश्वर उन्हें स्वस्थ रखे, यही प्रार्थना है।

ईश्वर आप सबको स्वस्थ रखें ।आप सबको धन्यवाद

—जयश्री मोहता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

सौ. मञ्जुश्री खेतानका समापन-भाषण

पूज्य श्रीस्वामीजी महाराज तथा सज्जनवृन्द,

परमेश्वरकी असीम अनुकम्पासे आज इस गीता-ज्ञान यज्ञकी पूर्णाहुति होने जा रही है। इस ज्ञानामृतके रसास्वादनसे हम सबको अत्यन्त आनन्द मिला है तथा ज्ञानके अङ्कुर हृदयमें उदित हुए हैं। ये अङ्कुर अध्ययन, मनन, चिन्तनसे भविष्यमें पेड़-पौधोंके रूपमें विकसित होंगे, यही आशा है।

इसके लिए मैं पूज्य स्वामीजीके चरणोंमें सादर-प्रणाम सर्मपित करती हूँ। गीता-ज्ञान यज्ञकी सफलताके लिए पूज्य स्वामीजीका अखण्ड ज्ञान, उनकी दिव्य वाणी, उनकी सुगम शैली तथा प्रातःकालका शान्त वातावरण, इनसे उत्तम साधन और क्या हो सकते हैं? मेरा विश्वास है कि आजके भौतिक युगमें इस प्रकारके आयोजन जीवनके लिए सहायक एवं उपयोगी हों। मैं समवयस्क भाइयों एवं बहनोंसे प्रार्थंना करूँगी कि वे इन प्रवचनोंसे अधिक-से-अधिक लाभान्वित होनेका प्रयास करें। पूँज्य महाराजजीने आगामी वर्ष इसी समय यहाँ पधारनेकी स्वीकृति दी है तथा हम सबपर गीतामृतकी वर्षा करेंगे। पूज्य स्वामीजी, स्वामी प्रबुद्धानन्दजी तथा आप सबको अनेक-अनेक धन्यवाद!

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.